Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

maj Foundation Ch

Bal Bharty 1956

n. Gurukul Kangri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

598

बाल भारती

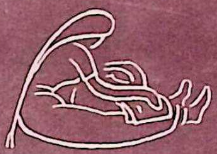

मार्च १९५६

मूल्य ।=) आने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कथा-माला

हमारे देश में स्वस्थ और मनोरंजक बाल-साहित्य का अभाव है। इस कमी को पूरा करने के लिये भारत सरकार भरसक कोशिश कर रही है। इसी सिलसिले में कथा-माला के तीन भाग निकाले गये हैं। देश-विदेश की लोक-कथाएँ—इसमें भिन्न-भिन्न देशों की १६ चुनी हुई लोक-कथाएँ हैं। पुस्तक में पचास से ऊपर चित्र और ७४ पृष्ठ हैं। भारत की लोक-कथाएँ—इस पुस्तक में एक से एक बढ़िया २२ सचित्र लोक-कथाएँ हैं। पुस्तक में ६० से ऊपर चित्र और ६४ पृष्ठ हैं। इस कथा-माला का तीसरा पुष्प है मनोरंजक कहानियाँ—इस संग्रह में एक से एक अनूठी और हास्य रस की कहानियाँ हैं। अनेक चित्रों ने इसमें चार चाँद लगा दिये हैं। प्रत्येक पुस्तक का दाम केवल एक रुपया है।

इन लोक-कथाओं के संग्रह पर महानुभावों की बहुमूल्य सम्मतियों के कुछ अंश नीचे उद्धृत किये जाते हैं—

कथाएँ इतनी रोचक और मनोरंजक हैं कि बच्चे इसे समाप्त किए बिना उठना ही नहीं चाहते। कथाओं के आकर्षण में चित्रों ने भी वृद्धि की है। इस बालोपयोगी रोचक कथा-संग्रह के लिए प्रकाशक और सम्पादिका को हम बधाई देते हैं।

—हिन्दुस्तान टाइम्स

प्रस्तुत पुस्तक के प्रकाशन से केवल मनोरंजन ही नहीं बल्कि हिन्दी साहित्य की एक कमी पूर्ण हो गई। आज ऐसे प्रकाशनों की अत्यन्त आवश्यकता है। इस दृष्टि से पुस्तक का मूल्य और भी बढ़ जाता है।

—दक्षिण भारती

संग्रह करते समय सम्पादिका ने इसके साथ श्रम किया है, फलस्वरूप कहानियाँ सुन्दर और आकर्षक बन गई हैं। भाषा सरल, सुबोध और मँजी हुई है। कहानियाँ मनोरंजक हैं। पुस्तक की छपाई और गेटअप आदि सुन्दर है। ऐसी बालोपयोगी पुस्तकों का प्रकाशन कर सरकार ने स्तुत्य कार्य किया है।

—आज

मिलने का पता—

पब्लिकेशन्स डिवीज़न

ओल्ड सेक्रेटेरियट, दिल्ली—८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

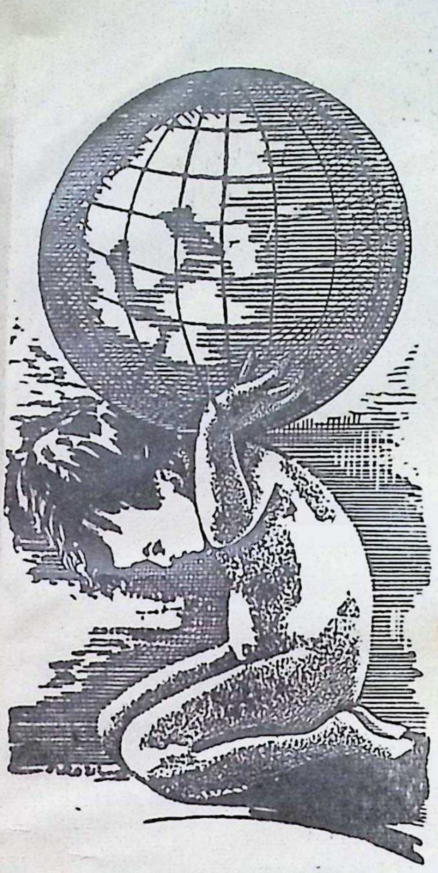

जिन बालकों को

बड़े हो कर इस पृथ्वी का बोझ उठाना है

उनका पालन 'नौनिहाल' पर होना चाहिए

नौनिहाल

छोटे बच्चों को हृष्टपुष्ट बनाने वाला उनका मन भाता टानिक

हमदर्द दवाखाना वक्फ़

देहली

Hamdard

बाल भारती

संख्या १० | मार्च १९५६ | वर्ष ८

सम्पादक

प्रयागनारायण त्रिपाठी

सहकारी सम्पादक हिन्दी विभाग

विषय-सूची

होली आई	लक्ष्मी प्रसाद द्विवेदी 'चन्द्र'	...	२
कर्तव्य-परायणता	चन्द्र भारद्वाज	...	३
दो मित्र	महेन्द्र भटनागर	...	४
चाँद के खिलौने	सत्येन्द्र श्रीवास्तव	...	६
आई होली !	निर्मलकुमार श्रीवास्तव	...	८
मेंढकी रानी	देवीदयाल चतुर्वेदी 'मस्त'	...	९
महीनों की कान्फ्रेंस	दीवाना	...	११
अब्राहम लिंकन	मुबारक अली	...	१२
लोभी मालिक	अवनीन्द्र कुमार विद्यालंकार	...	१९
नहीं राम को काम नाम से-	हरगोविन्द गुप्त	...	२२
भारतीय रेलें	कपिल	...	२४
बादमराक	डी० मंजु लता	...	२६
हरियाणे की लोरियाँ और बालगीत	कन्हैयालाल मिश्रा	...	२७
वेद-शिक्षा	अतुलानन्द चक्रवर्ती	...	३०

वार्षिक मूल्य—चार रुपये, १ डालर या ७ शिलिंग

एक प्रति—छः आने, १० सेंट या ८ पेंस

पब्लिकेशन्स डिवीज़न, ओल्ड सेक्रेटेरियट दिल्ली-८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

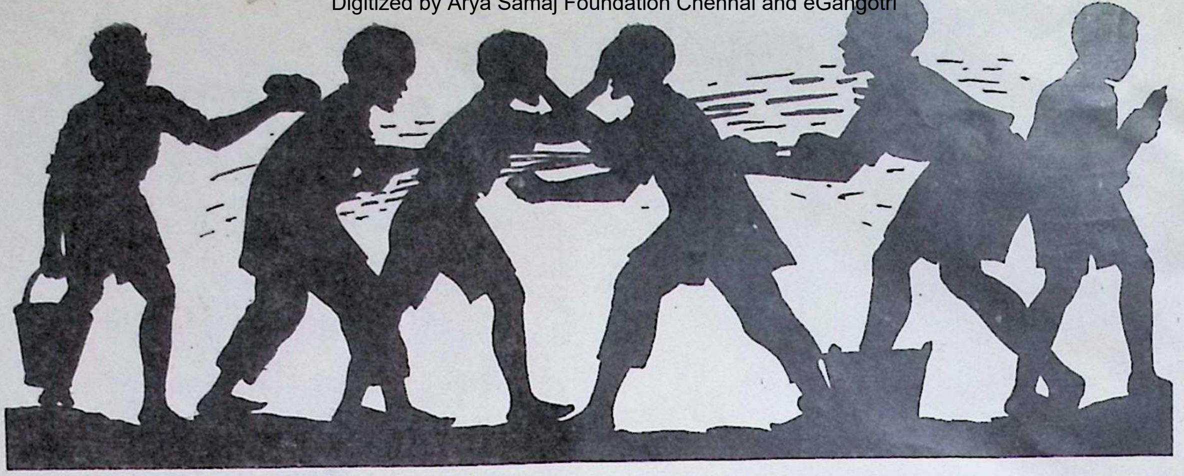

होली आई

लक्ष्मी प्रसाद द्विवेदी "चन्द्र"

होली आई,
होली आई;
कोयल ने भी कूक सुनाई !

फागुन आया,
खुशियाँ लाया;
शुभ वसन्त ने साज सजाया।
मन में कैसी मस्ती छाई !
होली आई !!

सबको भाया,
पर्व सुहाया;
जन-जन में उल्लास समाया।
घर में खुशहाली मनभाई !
होली आई !!

रङ्ग चलायें,
सङ्ग मिलायें,
आपस का सब बैर भुलायें।
हिल-मिल जायें भाई-भाई !
होली आई !!

फागें गायें,
ढोल बजायें;
झाँझों की झनकार सुनायें।
और खिलायें खूब मिठाई !
होली आई !!

होली आई,
शोभा आई;
जाड़ा बीता, गर्मी आई।
आओ आज पियें ठंढाई !
होली आई !!

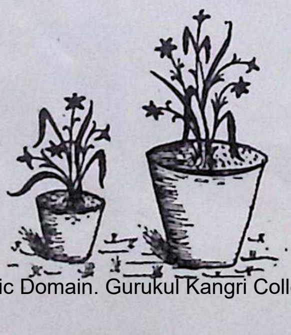

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर्तव्य-परायणता

चन्द्र भारद्वाज

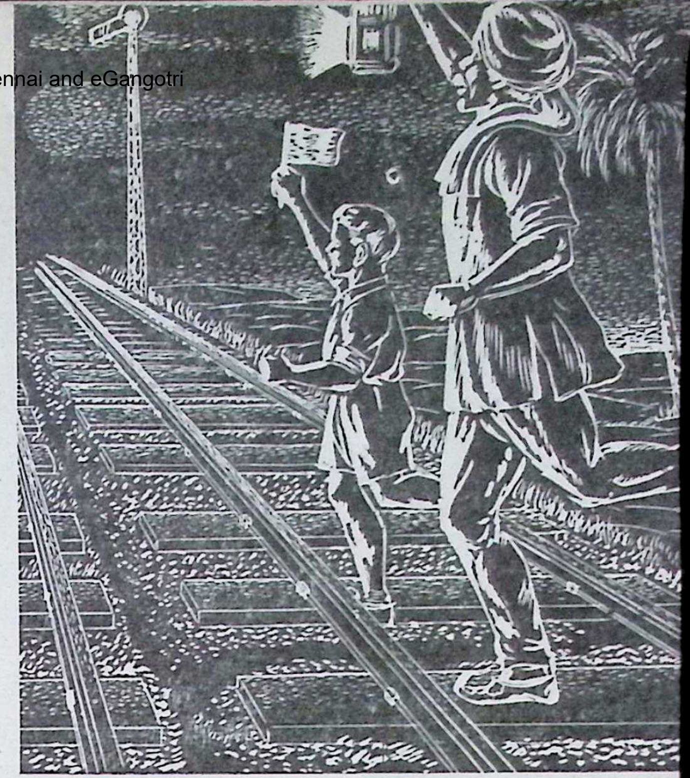

सिगनलमैन बालू जिस स्टेशन पर काम करता था, उसके पास वाले गाँव में एक साहसी बालक राम रहता था। एक दिन वह अपने स्कूल से घर वापस आ रहा था कि जोर से बिजली चमकने लगी, बादल गरजने लगे, चारों ओर अँधेरा छा गया और कुछ ही देर में मूसलाधार वर्षा शुरू हो गई। राम ने इधर-उधर छिपने के बजाय रेल की लाइन पर तेजी से चलना शुरू कर दिया, ताकि वह जल्दी घर पहुँच जाए। अभी वह अधिक दूर नहीं गया था कि उसने देखा एक जगह से रेल की लाइन टूटी पड़ी है। राम इसके भयंकर परिणाम को तुरन्त भाँप गया और सोचने लगा कि जब इन्जिन यहाँ से गुजरेगा तब जरूर इस टूटी पटरी पर आकर गिर पड़ेगा और हज़ारों इन्सानों को अपने जीवन से हाथ धोने पड़ेंगे। राम के विचारों ने तुरन्त पलटा खाया और उसने पूरी शक्ति के साथ स्टेशन की ओर भागना शुरू किया। रास्ते में वह कई जगह फिसल कर गिर पड़ा। उसके पैर जख्मी हो गए। किन्तु उसने हिम्मत न हारी। वह आगे ही बढ़ता गया। स्टेशन पहुँचते ही सबसे पहले राम की सिगनलमैन बालू से भेंट हुई। वह तुरन्त उसे स्टेशन मास्टर के कमरे में ले गया। स्टेशन मास्टर ने उसे देखते ही पूछा, "क्या बात है बालू? ड्यूटी छोड़ कर कैसे चले आए?"

बालू—"सरकार, यह लड़का कहता है कि यहाँ से एक मील उत्तर की ओर रेल की पटरी उखड़ी पड़ी है।"

यह सुनते ही स्टेशन मास्टर पसीना-पसीना हो गया। उसके चेहरे पर चिन्ता की रेखाएँ स्पष्ट झलकने लगीं। उसने जल्दी से टेलीफ़ोन उठाया और कुछ देर तक बात करने के बाद टेलीफ़ोन रख दिया। अब वह पहले से भी अधिक घबराया हुआ था। उसने काँपती आवाज में कहा—"ओह! अब मैं क्या करूँ? एक्सप्रेस तीन मिनट पहले ही छूट गई। गाड़ी को सिगनल देकर रोकना भी कठिन है।"

बालू चिल्ला उठा—"लेकिन एक काम हम अब भी कर सकते हैं।" इतना कह कर वह तेज़ी से कमरे के बाहर निकल आया और अपना लाल बत्ती वाला लैम्प उठा कर जिधर से एक्सप्रेस आ रही थी, उस ओर तेज़ी से भागा। राम भी हाथ में लाल झंडी लिए उसके साथ-साथ दौड़ रहा था।

बालू ने देखा कि एक्सप्रेस सीटी देती हुई लाइन पर धड़ा-धड़ भागी चली आ रही है। उसने लाल बत्ती वाला लैम्प सर से ऊँचा कर लिया ताकि इन्जिन-ड्राइवर दूर से ही उसे देख कर गाड़ी रोक सके। जब एक्सप्रेस की तेज़ रोशनी उसके चेहरे पर पड़ी तो उनकी आँखें चौंधियाने लगीं, लेकिन अपनी जान की परवाह न करते हुए वे दोनों बराबर लाल बत्ती वाला लैम्प और लाल झंडी हिलाते हुए एक्सप्रेस की ओर भागते रहे। अब इनके और गाड़ी के बीच केवल दो फर्लांग का फासला रह गया था। गाड़ी की रफ्तार मन्द पड़ने लगी। बालू और राम ने सन्तोष की एक साँस ली क्योंकि वे अपने उद्देश्य में सफल हो गए थे। एक्सप्रेस एक झटके के साथ उनके सामने आकर खड़ी हो गई। गार्ड ने गाड़ी से नीचे उतर कर बालू और राम के इस साहसिक कार्य की प्रशंसा की और कहा—"आज तुम दोनों ने सैकड़ों इन्सानों की जान बचा कर एक बहुत बड़ा काम किया है, जिसके लिए रेलवे विभाग सदा तुम्हारा कृतज्ञ रहेगा।"

बालू की पदोन्नति के साथ-साथ अगले दिन राम के घर रेलवे विभाग की ओर से एक पत्र पहुँचा जिसमें लिखा था—"राम की शिक्षा के लिए सरकार ने १५) मासिक छात्रवृत्ति देने का निश्चय किया है।" राम के माता-पिता इस समाचार से बड़े खुश हुए और उन्होंने राम की शिक्षा का प्रबन्ध शहर के एक अच्छे स्कूल में कर दिया।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

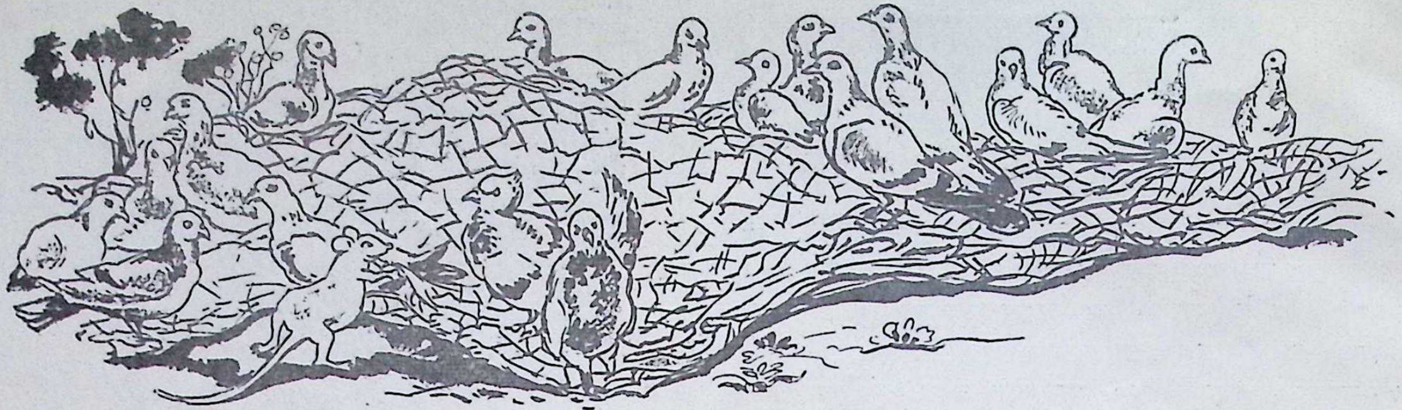

हितोपदेश की एक कहानी

दो-मित्र

महेन्द्र भटनागर

निर्देशिका—बच्चो ! आज हम तुम्हें हितोपदेश की एक शिक्षाप्रद कहानी सुनाते हैं। यह कहानी कबूतरों के सरदार चित्रग्रीव और उसके एक चूहे-मित्र हिरण्यक की है। एक बार गोदावरी नदी के किनारे एक बहेलिये ने कबूतरों को पकड़ने के लिए अपना जाल बिछाया, और उसमें बहुत से चावल के कण बिखेर दिये जिससे कबूतर उन्हें खाने के लोभ से वहाँ आएँ और उसके जाल में फँस जाएँ। बहेलिया पास ही छिप कर बैठ गया। इतने में कबूतरों का सरदार चित्रग्रीव अपने परिवार के साथ उड़ता-उड़ता वहाँ से निकला और उसकी दृष्टि उन चावल के कणों पर पड़ी । चित्रग्रीव चावल-लोभी अन्य कबूतरों से आश्चर्य के साथ कहने लगा—

चित्रग्रीव—(गुटगूँ-गुटगूँ) ओह ! देखो, नदी के किनारे कितने चावल के कण बिखरे हुए हैं !

बबलू (एक कबूतर)—अरे हाँ ! लो, हम कितने भूखे थे—ईश्वर ने जंगल में भी हमें भोजन दे दिया। कितने अच्छे दीखते हैं ये चावल के कण !

चित्रग्रीव—(गंभीर होकर) पर, मुझे तो इसमें कुछ संदेह होता है।

बबलू—संदेह ? किस बात का, राजाधिराज ?

चित्रग्रीव—इस सुनसान जंगल में भला चावल के कण कहाँ से आ गए ? (रुककर) अवश्य कोई भेद है।

बबलू—नहीं, नहीं, राजाधिराज ! देखिए, दूर-दूर तक कोई भी तो नहीं दिखाई देता। यदि हम लोग इसी तरह डरते रहेंगे तब तो भूखों मर जायँगे !

चित्रग्रीव—नहीं वत्स ! भूख के कारण इतने व्याकुल मत होओ। भली-भाँति सोच-विचार कर काम करना चाहिए। पहले अच्छी तरह से देख लो।

[सब देखते हैं—एक क्षण मौन]

बबलू—(अधीरता से) देख लिया, राजाधिराज ! खूब अच्छी तरह से तो दिखाई दे रहा है। आप तो व्यर्थ की शंका करते हैं। चलिए, हम सब बहुत भूखे हैं।

चित्रग्रीव—मैं तो इसमें कल्याण नहीं समझता। यदि तुम्हारा आग्रह ही है तो चलो।

निर्देशिका—इस प्रकार कबूतरों के राजा चित्रग्रीव का कहना किसी ने न माना और उस बबलू नामक कबूतर के आग्रह पर सब कबूतर चावल के कण खाने नीचे उतर आए। नीचे उतरते ही वे सबके सब उस बहेलिये के बिछाए जाल में फँस गए।

[गुटगूँ-गुटगूँ का सामूहिक स्वर]

जिस कबूतर के आग्रह पर वे चावल के कण खाने उतरे थे उसे अब सब भला-बुरा कहने लगे—

एक कबूतर—(घबराकर) हाय ! अब क्या होगा ? यह विपत्ति बबलू ने ही बुलाई है !

दूसरा कबूतर—हाँ यदि बबलू इतने पीछे न पड़ता तो क्यों नीचे उतरते और इस प्रकार फँसते !

तीसरा कबूतर—(रुआसा-सा होकर) बबलू, तुमने अपने साथ-साथ हमें भी मारा !

निर्देशिका—बबलू को अन्य कबूतरों द्वारा इस प्रकार भला-बुरा कहने पर चित्रग्रीव बोला—

चित्रग्रीव—(परेशान-सा होकर) जाने दो भई ! इसमें उसका कोई दोष नहीं है। कभी-कभी अपना मित्र भी नासमझी के कारण आपत्ति देने वाला हो जाता है। ऐसे अवसर पर उसकी निंदा करना अथवा उसे उलाहना देना ठीक नहीं। यह समझदार और बुद्धिमान का लक्षण नहीं है। विपत्ति में घबराना कायरों का काम है। इसलिए धीरज धारण करके मुक्ति का कोई उपाय सोचना चाहिए। (रुक कर) आओ, हम सब इस जाल को लेकर आकाश में उड़ जाएँ !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[जाल लेकर आकाश में उड़ जाते हैं। फड़फड़ाहट का स्वर।]

निर्देशिका—कबूतरों को जाल ले जाते देखकर बहेलिया टापता रह गया! फिर भी उसने सोचा कि जब ये कबूतर आपस में लड़ कर या थक कर नीचे उतरेंगे तब मैं इन्हें पकड़ लूँगा। और निःसंदेह कबूतर इस प्रकार आकाश में उड़ भी कब तक सकते थे? सब कबूतर दुःखी थे, घबरा रहे थे, पर, उनका राजा चित्रग्रीव किसी विचार में डूबा हुआ था। कबूतर चुपचाप आकाश में जाल लिए थोड़ी देर तक उड़ते रहे। इतने में एक कबूतर चित्रग्रीव से बोला—

एक कबूतर—हे प्रभो! अब क्या करना चाहिए?

चित्रग्रीव—वत्स, घबराने से कोई समस्या हल नहीं हो सकती। आपत्ति के समय हमें बुद्धि से काम लेना चाहिए।

दूसरा कबूतर—आपने क्या सोचा राजाधिराज?

तीसरा कबूतर—इस प्रकार तो उड़ते-उड़ते हम लोग थोड़ी देर में ही थक जाएँगे। फिर क्या होगा?

पहला कबूतर—धरती पर उतरते ही बहेलिया हमें पकड़ लेगा और मार डालेगा। कोई उपाय बताइए।

चित्रग्रीव—(प्रसन्न मुद्रा में) हाँ, यह उपाय ठीक है! सुनो, मेरा एक मित्र हिरण्यक गण्डकी नदी के किनारे चित्रवन में रहता है। वह चूहों का राजा है। चलो वहाँ चलें। वह अपने दाँतों से इस जाल को काट देगा।

निर्देशिका—इस प्रकार सब कबूतर चूहों के राजा हिरण्यक के बिल के पास पहुँचे। हिरण्यक दूर से उस जाल को देखकर डर गया और अपने बिल के भीतर छिपकर बैठ गया। चित्रग्रीव ने हिरण्यक को भीतर जाते देख लिया था, उसने उसे आवाज लगाई, पर हिरण्यक डर के मारे कुछ न बोला। यह देखकर चित्रग्रीव कहने लगा—

चित्रग्रीव—हे मित्र, हिरण्यक! हम लोगों से क्यों नहीं बोलते?

निर्देशिका—अपने मित्र चित्रग्रीव का स्वर पहचानते ही वह तुरन्त बाहर आ गया और कहने लगा—

हिरण्यक—अहो! आज मेरे पुण्य का उदय हुआ कि मेरे प्रिय मित्र चित्रग्रीव यहाँ आए हैं। पर, हे मित्र! (आश्चर्य से) यह क्या? तुम तो जाल में फँसे हुए हो? लो मैं तुम्हारे बन्धन काटता हूँ।

चित्रग्रीव—हे मित्र मैं तुम्हारा कृतज्ञ होऊँगा। पर, मेरे लिए यह ठीक न होगा। पहले मेरे आश्रितों के बन्धन काटो, पीछे मेरे काटना।

हिरण्यक—हे मित्र, तुम तो देख ही रहे हो मैं अब कितना निर्बल हो गया हूँ।

चित्रग्रीव—पर, भाई! मैं अपने आश्रितों का कष्ट नहीं देख सकता, इसलिए कहता हूँ। इन्होंने सुख में, दुःख में कभी भी मेरा साथ नहीं छोड़ा।

हिरण्यक—तुम ठीक कहते हो मित्र। पर, तनिक मेरी विवशता की ओर भी तो ध्यान दो। देखो, मेरे दाँत भी अब पहले जैसे नहीं रहे। सब के बन्धन मैं किस प्रकार काट सकूँगा?

चित्रग्रीव—मित्र हिरण्यक, मैं इनका राजा कहलाता हूँ। यदि इनकी सहायता न कर सका तो फिर मेरे राजा बनने का इनको क्या फल होगा?

हिरण्यक—तो भाई, तुम्हारे बन्धन काटने के बाद यदि मेरे दाँत बच रहे तो इनके भी बन्धन काट दूँगा।

चित्रग्रीव—नहीं मित्र, यह ठीक नहीं है। पहले मेरे आश्रितों के ही बन्धन काटो। मुझे अपनी चिंता नहीं है। यदि तुम मेरे सच्चे मित्र हो तो मेरे शरीर को बचाने से पहले मेरे यश को बचाओ! शरीर तो क्षण भंगुर है; परन्तु गुण प्रलय काल तक रहते हैं।

हिरण्यक—बस भाई बस! धन्य है मित्र! आश्रितों पर तुम्हारा यह प्रेम अद्वितीय है! तुम तीनों लोकों के स्वामी होने योग्य हो। लो मैं सबके बन्धन काटता हूँ।

[बन्धन काटता है]

सब कबूतर—हमारे राजा को भी मुक्त कीजिए, महाराज!

[ज़रा रुक कर पुनः बन्धन काटता है]

चित्रग्रीव—धन्य हिरण्यक! तुम्हारी मित्रता का आदर्श सुनहरे अक्षरों में लिखा जाएगा। तुमने अद्भुत मित्र-प्रेम का परिचय दिया है।

एक कबूतर—हम आपको कभी नहीं भूलेंगे।

दूसरा कबूतर—और इसी तरह बिना अपने प्राणों की चिन्ता किये अपने संकट में पड़े मित्रों की सहायता करेंगे।

चित्रग्रीव—अब मेरे योग्य कोई कार्य बताओ। तुम्हारे ऋण से तो मैं सौ जन्मों में भी तुम्हारी सेवा करके मुक्त नहीं हो सकता!

हिरण्यक—ऐसा न कहो मित्र! विपत्ति किस पर नहीं आती? जो पक्षी आठ-सौ मील की दूरी से भी माँस को देख सकता है, वही बुरा समय आने पर उसके फँसाने के लिए बिछाए गए जाल को भी नहीं देख पाता!

निर्देशिका—इस प्रकार दोनों मित्र एक दूसरे से खूब प्रेम से मिले। हिरण्यक के अतिथि-सत्कार के बाद चित्रग्रीव ने उससे विदा ली और अपने सभी साथियों सहित वह आकाश में उड़ गया।

[उड़ने का स्वर]

इसलिए, बच्चो! मित्रता बड़ी काम आती है। हमें अपने अधिक से अधिक अच्छे मित्र बनाने चाहिएँ और अपने सभी मित्रों की सदैव सहायता के लिए तैयार भी रहना चाहिए।

आकाशवाणी, इन्दौर के सौजन्य से

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाँद के खिलौने

सत्येन्द्र श्रीवास्तव

खेलते-खेलते जब मुन्ना का खिलौना टूट गया तब वह रोने लगा। दादी ने उसे समझाया कि यह खिलौना चंदा मामा ने चुपके से आकर तोड़ दिया है, और वे उसे शाम को उसकी जगह पर बढ़िया खिलौने लाकर दे देंगे।

मुन्ना चुप हो गया क्योंकि चाँद मामा उसे बहुत प्यारे थे।

मुन्ना रोज़ सुबह स्कूल जाता। शाम को जब घर पर आता तो खा पीकर खेलने चला जाता। इस तरह अँधेरा हो जाता, और वह घर को लौट आता। पिता जी उसकी प्रतीक्षा किया करते। उसके आते ही माँ उसे पढ़ने को कहती और वह घण्टा भर पढ़ता। फिर अपने मास्टर साहब का काम निबटा कर वह दादी के पास चला जाता, वहीं खाना खाता और वहीं दादी से रोज नई-नई कहानियाँ सुनता। और बार-बार आँगन में जाकर चाँद को देख आता, क्योंकि वह चंदा मामा को बेहद प्यार करता। मोटे तौर से यही उसकी दिनचर्या थी।

दादी से कहानियाँ वह बड़े चाव से सुना करता। वह उसे कभी परियों की कहानी, कभी देवताओं की कहानी, कभी शेर, भालू की कहानी सुनाया करतीं। मुन्ना इन कहानियों को सुन-सुन कर बेहद खुश होता, और बाद में वह सब कुछ पिता को सुनाता।

एक दिन की बात है। मुन्ना की छुट्टी थी। अब उसके सामने यह समस्या खड़ी हुई कि दिन कैसे बिताया जाय। चुपचाप बैठे वह रह नहीं सकता था। और दूसरा कोई काम उसे सूझ नहीं रहा था। सुबह उठते ही उसने दादी से कहानी सुनाने के लिए कहा था—पर दादी ने जब यह उत्तर दिया कि दिन में कहानी सुनाने से चंदा मामा घर का रास्ता भूल जाएँगे और खिलौने नहीं ला पाएँगे—तो वह ज़िद न कर सका। और तभी से वह सोच रहा था कि दिन कैसे बिताया जाय। स्कूल के मास्टर साहब द्वारा दिया हुआ सब काम वह कल शाम को ही निबटा चुका था।

दस बज गए। वह बरामदे में इसी तरह बैठा-बैठा सोच रहा था कि उसे दादी कहीं बाहर जाती हुई दिखाई पड़ीं। उनके हाथों में पूजा के सामान थे। बस फिर क्या था—मुन्ना उनके साथ हो लिया। दादी किसी दूसरे गाँव में एक विशेष मन्दिर में पर्व के दिन पूजा करने जा रही थीं। इस स्थान से उस स्थान की दूरी एक मील थी। उस गाँव में वह गया नहीं था अतः रास्ते भर वह दादी से पूछता-पूछता चला जा रहा था। अन्त में कुछ समय बाद दादी और वे मन्दिर पहुँच गए। मन्दिर के सामने भीड़ बहुत थी, दूर-दूर के गाँव के लोग दर्शन के लिए आये हुए थे। दादी ने मुन्ना से कहा कि वह बाहर ही से ईश्वर की पूजा कर ले, और यहीं तालाब के किनारे बैठ कर उनकी प्रतीक्षा करे जब तक वह दर्शन करके लौट आती है। मुन्ना दादी की बात मान गया और तालाब के किनारे बैठ कर दादी की प्रतीक्षा करने लगा।

तभी उसे कुछ दूर पर एक कुम्हार दिखाई पड़ा जो उसी तालाब के किनारे बैठ कर कुछ बना रहा था। फिर तो मुन्ना खड़ा हो गया और उसके पास चल दिया। वह कुम्हार के नज़दीक पहुँच कर सोचने लगा कि यह कैसे इतनी जल्दी-जल्दी इतने बढ़िया खिलौने बना लेता है। बस चाक पर कुम्हार मिट्टी रखता है, उसे घुमाता है और तरह-तरह की मिट्टी को साँचे में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ढालता है और कुछ ही क्षण में कभी बन्दर कभी भालू कभी शेर का खिलौना बन जाता है ! मुन्ना को यह सब एक जादू के संसार ऐसा लगा। क्योंकि वह स्वयं कई बार गीली मिट्टी को हाथ में लेकर खिलौने बनाने की कोशिशें कर चुका है और कभी भी सफल नहीं हुआ है। वह ग़ौर से देख रहा था तभी कुम्हार का बेटा एक डोलची में कुछ बढ़िया खिलौने लेकर वहाँ आ गया। मुन्ना उन खिलौनों को देख कर सोचने लगा—काश ! ये सभी खिलौने मेरे होते ! बस वह इतना ही सोच पाया था कि कुम्हार ने अपने बेटे से कहा, "रामू, ले जा इन खिलौनों को मन्दिर के सामने लगा कर बैठ जा, आज पूजन है न, खूब बिकेंगे ये।" मुन्ना इस वाक्य को सुन कर प्रसन्न हो गया। यह प्रसन्नता उसे इस बात की थी कि ये खिलौने जब बिकने के लिए हैं तब तो मैं भी खरीद सकता हूँ इन्हें ।

मुन्ना यह सब सोच रहा था तभी कुम्हार ने उसकी ओर देखते हुए कहा, "बेटा, खड़ा क्यों है ? बैठ जा न। खिलौने लेगा ? ये ले, कबूतर ले।" मुन्ना यह सुन कर बड़े असमंजस में पड़ गया। वह खिलौने कैसे ले सकता था ? उसके पास पैसे तो इस वक्त थे नहीं, और दादी भी जो उसके लिए खिलौने खरीदती, अन्दर गई हुई थी। मुफ्त वह ले नहीं सकता था क्योंकि उसके माता-पिता ने उसे सिखाया था कि किसी का दिया हुआ सामान बिना बड़ों की आज्ञा के नहीं लेना चाहिए, और कोई बड़ा इस वक्त उसके पास था नहीं। वह चुपचाप दादी की प्रतीक्षा करता रहा। वह कुम्हार को कुछ भी उत्तर न दे सका। कुम्हार ने फिर कहा, "समझा तू कबूतर नहीं लेगा", और उसने कबूतर को डोलची में रख कर, कृष्ण भगवान् का खिलौना उठाया और देने लगा। इस बार भी मुन्ना कुछ न बोला। इसी समय 'मुन्ना-मुन्ना' की आवाज़ सुनाई पड़ी। उसने मुड़ कर देखा। दादी उसे बुला रही थी। बस फिर क्या था, मुन्ना दौड़ गया दादी के पास और खिलौने खरीदने के लिए कहने लगा। दादी खिलौने ख़रीदने के लिए राजी हो गई और वह दादी के साथ फिर कुम्हार के सामने आ खड़ा हुआ।

उसे देखते ही कुम्हार बोला, "क्यों बेटा, भाग क्यों गया था ? यह ले देख तेरा खिलौना अभी भी यहीं पड़ा हुआ है, इसे ले।" अब की बार मुन्ना बोला, "मैं दादी की इन्तज़ार कर रहा था। तब मेरे पास पैसे कहाँ थे, जो ख़रीद पाता।" इस पर कुम्हार ने कहा, "पगला, यह तो मैं तुझे ऐसे ही दे रहा था, पैसे की क्या बात थी ?"

"नहीं, वैसे मैं कैसे लेता ?" मुन्ना बोला।

"इसलिये कि इन्हें मैं दे रहा था, ये खिलौने मैंने बनाये हैं", कुम्हार बोला।

"नहीं ऐसे मैं नहीं लेता, मुझे मुफ्त चीजें लेने की मनाही है।" मुन्ना ने उत्तर दिया।

इस पर दादी और कुम्हार दोनों ही बड़े खुश हुए। दादी ने मुन्ना के लिये कुछ खिलौने ख़रीदे, और उसे दे दिये। और कुम्हार ने ज़िद करके कृष्ण भगवान् वाला खिलौना भी दे दिया। मुन्ना ने उसे दादी से पूछ कर ले लिया।

खिलौने लेकर मुन्ना और दादी घर को चल पड़े। रास्ते में मुन्ना ने पूछना शुरू किया—

"दादी, कुम्हार कैसे खिलौने बना लेता है ?"

दादी ने उत्तर दिया, "उसे खिलौने बनाना आता जो है।"

मुन्ना ने तब कहा, "पर मुझे क्यों नहीं आता। मैं इसकी कितनी ही कोशिशें करता हूँ।"

"असल में यह सीखने से आता है,बेटा।" दादी ने उत्तर दिया।

"तो मुझे भी खिलौने बनाना सीखने दो दादी।" मुन्ना ने कहा।

"पर तुम किससे सीखोगे ?" दादी ने पूछा।

"बस उसी कुम्हार से। अभी जाता हूँ और सीख कर आता हूँ।" मुन्ना की यह बात सुन कर दादी बहुत हँसी। उन्होंने कहा—

"पगले, कहीं एक दिन में खिलौने बनाना कोई सीख सकता है।"

"क्यों नहीं ?" मुन्ना ने कहा, "मुझे चाक घुमाना तो आता ही है, बस उसे साँचे में ढालना नहीं आता, वह सीख ही लूँगा।"

इस पर दादी फिर बहुत ज़ोर से हँसीं, और बोलीं, "अच्छा मुन्ना बताओ, क्या तुम्हें पिता जी के इतना पढ़ना आता है ?"

"नहीं।" मुन्ना बोला।

"बस यही समझ लो। जिस तरह इतने दिनों पाठशाला जाने के बाद भी तुम्हें पिता जी के इतना पढ़ना नहीं आता, वैसे ही एक दिन में कुम्हार की तरह खिलौने बनाना भी नहीं आ सकता।"

दादी की बात सुनकर मुन्ना सोचता रह गया। कुछ ही समय में वह घर पहुँचा। घर पर उसने अपने कमरे में खिलौने सजा दिये। मुन्ना बहुत खुश था, क्योंकि आज उसकी आलमारी में कुछ खिलौने और बढ़ गये थे।

किन्तु तीसरे पहर मुन्नी ने उसके दो खिलाने तोड़ दिये थे। वह रोने लगा था। इस पर दादी ने उसे समझाया था कि चाँद मामा उसे खिलौने लाकर रात में देंगे। और यह सुनकर वह चुप हो गया था।

शाम हुई। उसने दादी से पूछा कि चाँद मामा कैसे खिलौने लाकर देंगे। दादी ने उसे एक कहानी सुनाई :

'चाँद रोज आसमान में दिखता है। वह खाली रोशनी नहीं देता। वह कुछ और भी काम करता है। उसके पीछे अँधेरे में एक कुम्हार रहता है, जो चाँद को चाक की तरह घुमाता है। बस फिर जैसे-जैसे चाँद घूमता जाता है, वैसे-वैसे कुम्हार हमारे लिए खिलौने बनाकर धरती पर फेंकता जाता है। उसी कुम्हार की तरह जो आज तालाब के किनारे बैठकर बढ़िया-बढ़िया खिलौने बना रहा था।'

यह सब सुन कर मुन्ना ने पूछा, "दादी, चाँद मामा जो खिलौने बनाते हैं, वह तो हमें दिखाई नहीं देता जबकि कुम्हार के बनाये हुए सभी खिलौने अच्छी तरह दिखाई देते हैं।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस पर दादी ने उत्तर दिया, "मुन्ना बेटा, चाँद के खिलौने भी तो तुम्हीं खेलते हो। नींद में जो मीठे-मीठे सपने आते हैं, वे क्या होते हैं? वे ही तो चाँद के खिलौने हैं, जिन्हें कोई व्यक्ति जो अँधेरे में नहीं दिखाई देता, बनाता रहता है। आज तुम उन्हीं सपनों में से किसी को पकड़ कर सुबह तक रख लेना, देखना, कितना बढ़िया खिलौना होगा वह !"

मुन्ना यह सब सुनकर स्तब्ध होकर कभी चाँद, कभी दादी और कभी टूटे हुए खिलौने की ओर निहारने लगा और नींद आने की प्रतीक्षा करने लगा, क्योंकि आज चाँद के खिलौने की उसे प्रतीक्षा थी।

★

आई होली !

निर्मलकुमार श्रीवास्तव

हँसी-खुशी का देश हमारा
हैं स्वतन्त्र अब हम सब
कोयल ने सन्देश सुनाया
फिर वसन्त आया अब
बीता जाड़ा, फेंको स्वेटर,
लो अबीर की झोली।
आई होली !

गले मिलो सब रोष त्याग दो,
यही आज का नारा !
सत्य अहिंसा के पथ पर चल
पकड़े वही किनारा
जिसके दरवाजे की साँकल
बापू ने है खोली !
आई होली !

नाचो, गाओ जिसे देखकर,
खुश हों चन्दा मामा !
ललच उठें भू पर आने को
ऐसा गाओ गाना
पिचकारी से लैस बनो औ'
दुःख को मारो गोली !
आई होली !

यह हरदम आती रहती है
यही हमें बतलाने !
सदा प्रेम से रहना बच्चो
गाना प्रेम तराने
लेकिन धूम-धाम में कोई,
समझ न पाता बोली !
आई होली !

ऐसा तुम सब अपने मन में,
प्रेम भाव को लाना !
जिसे देख सब ललच जाँय औ'
ललचे देख जमाना
एक चाल हो एक ढाल हो
एक सभी की टोली !
आई होली !!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

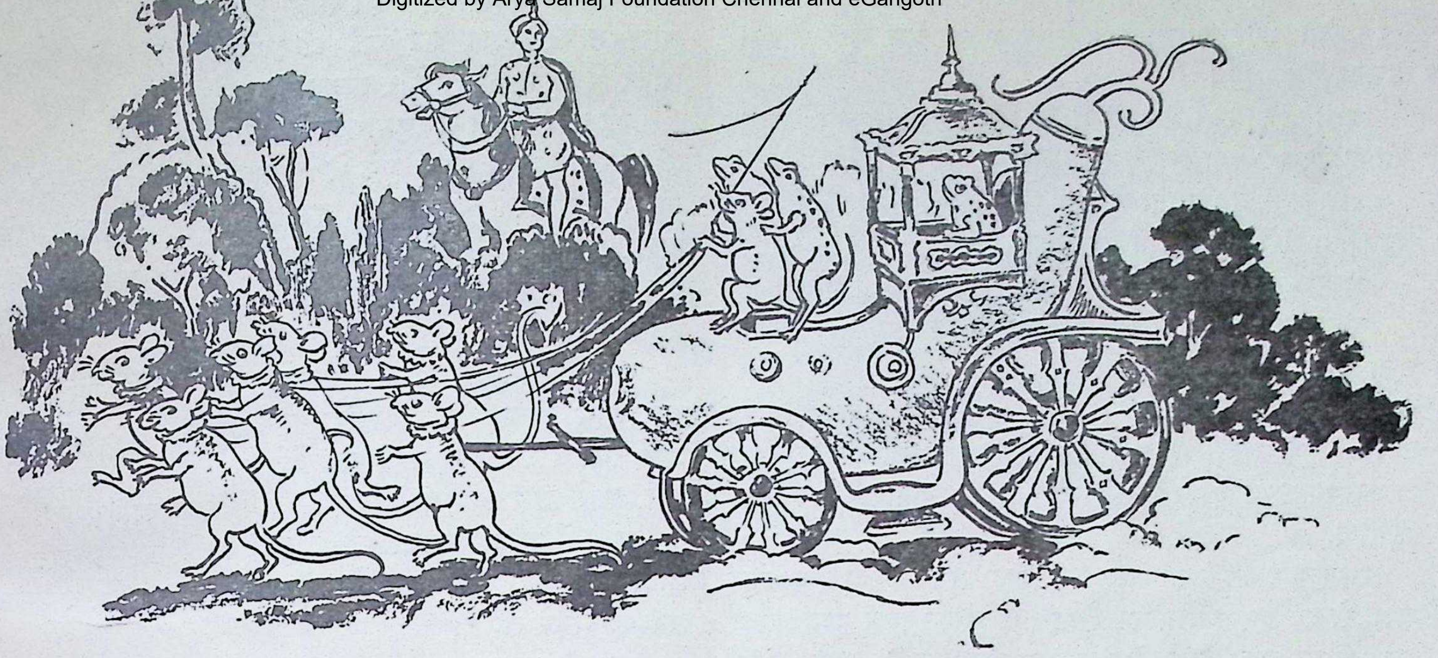

मेंढकी रानी

देवीदयाल चतुर्वेदी 'मस्त'

एक राजा के तीन पुत्र थे। राजधानी से थोड़ी ही दूरी पर एक स्त्री रहती थी, जिसके केवल एक पुत्री थी। उस पुत्री का नाम माधुरी था।

राजा ने अपने तीनों पुत्रों को एक बार सैर-सपाटे के लिए भेजा। सैर-सपाटा करते-करते एक दिन तीनों राजकुमार उसी नगर में पहुँचे, जहाँ माधुरी अपनी माँ के साथ रहती थी। राजकुमारों ने देखा कि एक दुमंजिले मकान के ऊपरी कमरे की खिड़की के पास एक अत्यन्त सुन्दर लड़की खड़ी है। उसे देखते ही तीनों राजकुमारों के मन में उसके साथ विवाह कर लेने की इच्छा हुई। तीनों राजकुमारों की तलवारें म्यान के बाहर निकल पड़ीं और तीनों में युद्ध छिड़ गया।

वहीं निकट ही एक पुजारिन रहती थी। ज्योंही उसने यह शोरगुल सुना, वह अपने मठ के दरवाजे पर आ खड़ी हुई। इस युद्ध का कारण जब उसे ज्ञात हुआ, तो क्रोध से वह लाल हो उठी। उसने श्राप देकर माधुरी को उसी क्षण मेंढकी बना दिया।

राजकुमारों ने जब यह देखा कि जिस सुन्दर कुमारी के लिए वे आपस में लड़ रहे थे, वह गायब हो गई तो उन्होंने अपनी-अपनी तलवार फिर म्यान में रख ली और आपस की लड़ाई बन्द कर दी। इसके बाद राजकुमार फिर कहीं नहीं गए और अपने राजमहल में लौट आए।

कुछ समय के बाद राजा बूढ़े हो चले। उन्होंने राजगद्दी छोड़ देने का निश्चय कर लिया और अपने तीनों पुत्रों को बुला कर उनसे कहा—"प्यारे बच्चो, अब मैं बूढ़ा और कमजोर हो गया हूँ। मैं चाहता हूँ कि यह राजगद्दी छोड़ दूँ। परन्तु अब तक मैं यह निश्चय नहीं कर सका कि तुम में से किसे राजा बनाऊँ। मैं तुम तीनों को समान रूप से चाहता हूँ। फिर भी मेरी इच्छा है कि प्रजा का शासक तुम में से वही बने, जो सब से अधिक बुद्धिमान हो। मैं तुम्हारी तीन परीक्षाएँ लूँगा और जो इनमें विजयी होगा, वही राजगद्दी पाएगा। पहली परीक्षा है कि तुम लोग मेरे लिए इतना बारीक १०० गज कपड़ा कहीं से ले आओ, जो मेरी सोने की अँगूठी में से निकाला जा सके।"

राजकुमारों ने प्रयत्न करने का वचन दिया और चल पड़े।

कुछ दूर तक तो तीनों राजकुमार एक साथ ही गए। परन्तु आगे बढ़ने पर एक ऐसे मोड़ पर ये लोग जा पहुँचे, जहाँ से दो दिशाओं में मार्ग मुड़ जाता था। एक मार्ग तो बढ़िया छायादार वृक्षों के बीच से होकर जाता था और दूसरा सुनसान मैदान में। पहला मार्ग साफ-सुथरा था; परन्तु दूसरा ऊबड़-खाबड़। बड़े और मँझले राजकुमार दोनों बढ़िया छायादार वृक्षों वाले मार्ग पर बढ़ गए और छोटा राजकुमार ऊबड़-खाबड़ मार्ग पर।

बड़े और मँझले राजकुमार को जहाँ-कहीं बढ़िया और महीन कपड़ा दिख जाता, वे फौरन उसे खरीद लेते। परन्तु छोटे राजकुमार को कई दिनों तक यात्रा करने पर भी कहीं महीन कपड़ा न दिखलाई दिया जिसे वह खरीद सकता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्त में थका-माँदा-सा छोटा राजकुमार एक नदी के किनारे जा पहुँचा और आराम करने के लिए वह एक वृक्ष के सहारे टिककर बैठ गया।

इसी बीच नदी के पानी में से सिर ऊपर निकाल कर एक मेंढकी बोली, "क्या बात है राजकुमार ?"

राजकुमार ने खिन्नता के साथ कह दिया—"कुछ भी हो, मूर्ख मेंढकी; तू मेरी सहायता न कर सकेगी।"

"आखिर सुनूँ भी मामला क्या है ?" मेंढकी ने पूछा।

एक क्षण सोचकर छोटे राजकुमार ने अपनी सारी कहानी सुना दी।

"मैं तुम्हारी सहायता करूँगी।" मेंढकी ने कहा और वह नदी में कूद गई। शीघ्र ही वह एक लम्बा-सा, महीन और अत्यन्त स्वच्छ कपड़ा घसीटती हुई फिर राजकुमार के निकट आ पहुँची।

राजकुमार को उसी कपड़े की चाह थी। मेंढकी की मधुर वाणी से वह इतना प्रभावित हुआ कि उसका दिया हुआ कपड़ा उसने फौरन अपनी जेब में रख लिया और मेंढकी को इसके लिए धन्यवाद दिया।

छोटा राजकुमार लगभग उसी समय अपने राजमहल में पहुँचा, जब उसके दोनों भाई ढेर-सा कपड़ा लदवा कर पहुँचे।

बूढ़े राजा अपने पुत्रों को सकुशल पाकर बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने अपनी सोने की अँगूठी को अँगुली में से निकाल लिया और राजकुमार जो कपड़े लाए थे, उन्हें उसमें से खींच कर यह परीक्षा करने लगे कि किस राजकुमार को इस काम में सफलता मिली है। बड़े और मँझले राजकुमार जो ढेर-सा कपड़ा लाए थे, उसमें से एक भी ऐसा न निकला, जो राजा की सोने की अँगूठी में से खींचा जा सकता। इसके बाद छोटे राजकुमार ने जेब से निकालकर एक कपड़ा दिया, जो सरलता के साथ उस अँगूठी में से खींच लिया गया।

राजा ने छोटे राजकुमार को हृदय से लगा लिया और राजकुमारों से कहा, "अब तुम्हारी दूसरी परीक्षा ली जाएगी। एक इतना छोटा कुत्ता लाओ, जो बादाम के छिलके के भीतर बैठ सके।"

इस अनहोनी शर्त को पूरा करने का ख्याल कर राजकुमार बहुत चिन्तित हो उठे। परन्तु राजगद्दी का लोभ उन तीनों को था, इसलिए वे फिर यात्रा करने को चल पड़े।

छोटा राजकुमार इस बार भी उसी नदी के तट पर जा पहुँचा और आराम करने के लिए पहले की तरह फिर एक वृक्ष के सहारे टिककर बैठ गया।

नदी के पानी में से फिर वहीं मेंढकी फुदक कर बाहर आ बैठी और बोली, "क्या बात है, राजकुमार ?"

मेंढकी की बुद्धि का राजकुमार को पता लग चुका था। इसलिए उसने अपनी चिन्ता का कारण फौरन उसे बतला दिया।

"तुम्हारा यह काम भी मैं कर दूँगी।" मेंढकी ने कहा, और नदी के पानी में वह कूद गई। शीघ्र ही वह खाकी रंग का एक छोटा-सा फल लेकर लौट आई और बोली, "इसे तुम घर ले जाकर पिता जी को दो और सावधानी से इसे फोड़ दो।"

बड़े और मँझले राजकुमार पहले ही ढेर-से छोटे-छोटे कुत्ते लाकर राजमहल में पहुँच चुके थे। राजा भरसक राजकुमारों को निराश नहीं करना चाहता था। इसलिए उसने बादाम के बदले अखरोट का फल मँगवाया और उसके छिलके में उन छोटे कुत्तों में से एक-एक को बैठा कर देखने लगा। परन्तु कोई कुत्ता उसमें न बैठ सका।

अन्त में छोटा राजकुमार आगे बढ़ा। पिता को उसने झुक कर प्रणाम किया और खाकी रंग का वह फल राजा को दिया, जो मेंढकी ने उसे दिया था। फल देते हुए छोटे राजकुमार ने कहा, "इसे आप सावधानी से हलके हाथों फोड़ डालिए।"

राजा ने ज्योंही उस फल को फोड़ा, उसमें से एक अत्यन्त छोटा और सुन्दर कुत्ते का पिल्ला बाहर निकल पड़ा और राजा के हाथ पर दौड़ने लगा।

सब की प्रसन्नता का ठिकाना न रहा। राजा ने फिर तीनों राजकुमारों से कहा, "प्यारे बच्चो, अब तुम्हारी तीसरी परीक्षा ली जायगी। तुममें से जो राजकुमार सुन्दरतम लड़की को अपनी दुलहिन बनाकर लाएगा, वही राजगद्दी पर बैठ सकेगा।"

यह बात सुन कर बड़े और मँझले राजकुमार का उत्साह बढ़ गया। इस बार उन्हें विजयी होने की बहुत आशा होने लगी। परन्तु छोटा राजकुमार इस बार प्रसन्न न हो सका। उसे लगा कि पिछली बार तो बेचारी मेंढकी ने मेरी पूरी-पूरी सहायता कर दी, परन्तु इस बार मेरे लिए सुन्दरतम पत्नी वह बेचारी कहाँ से लाकर दे सकेगी।

किसी तरह वह फिर यात्रा पर चल पड़ा और उसी नदी के किनारे जाकर एक लम्बी साँस छोड़ते हुए उदास बैठ गया। पहले की तरह फिर मेंढकी पानी से कूद कर बाहर आई और पूछ बैठी, "क्या बात है राजकुमार ?"

"इस बार तुम मेरी सहायता न कर सकोगी, मेंढकी !" राजकुमार ने भरे गले से कहा।

"आखिर सुन लूँ भी तुम्हारा काम ?" मेंढकी ने पूछा।

छोटे राजकुमार ने अपनी चिन्ता का कारण बतला दिया।

"अच्छा, तुम अपने घर जाओ।" मेंढकी ने कहा, "एक सुन्दरतम लड़की तुम्हारी दुलहिन बन कर मार्ग में तुम्हारे साथ हो जाएगी।"

इस बार मेंढकी की बात पर छोटे राजकुमार को बहुत कम विश्वास था। फिर भी मेंढकी की बात मान कर वह घर की तरफ चल पड़ा। थोड़ी ही दूर वह गया था कि उसे अपने पीछे कुछ अजीब-सी आवाज सुनाई पड़ी। घूम कर उसने देखा, तो लौकी के आकार की एक छोटी बग्घी उसे दिखलाई पड़ी, जिसे छः बड़े चूहे खींच रहे थे। एक मोटा-ताज़ा चूहा कोचवान बना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस बग्घी को हाँक रहा था। कोचवान के आसपास दो मेंढक नौकरों की तरह खड़े हुए थे। इस बग्घी के भीतर छोटे राजकुमार की चिर-परिचित वही मेंढकी बैठी थी, जो नदी के किनारे उसे मिली थी।

राजकुमार इस सब का कोई अर्थ न समझ सका। बग्घी उससे आगे निकल गई। राजकुमार धीरे-धीरे मार्ग पर बढ़ता गया। ज्योंही वह मार्ग के मोड़ पर पहुँचा, यह देख उसके आश्चर्य की सीमा न रही कि वह लौकी के आकार की छोटी बग्घी वास्तव में एक आलीशान बग्घी बन गई है और चूहों के स्थान पर उसमें छः बड़े और हृष्ट-पुष्ट घोड़े जुते हुए हैं। कोचवान की जगह एक बलिष्ठ पुरुष बढ़िया पोशाक पहने बैठा है और दो नौकर इस छोटे राजकुमार की राह देख रहे हैं।

नौकरों के कहने पर राजकुमार जब उस बग्घी में जाकर बैठा, तो यह देख कर वह दंग रह गया कि वह मेंढकी तो वही सुन्दरतम लड़की माधुरी है, जिसे देख कर तीनों राजकुमार आपस में तलवारें बजा उठे थे। इसके साथ विवाह करने की इच्छा तो छोटे राजकुमार के मन में पहले से ही थी। माधुरी की बगल में बैठ कर छोटा राजकुमार अपने राजमहल की तरफ चल पड़ा।

माधुरी ने उस पुजारिन के शाप की कहानी राजकुमार को सुनाते हुए कहा कि किस प्रकार उसने मुझे मेंढकी बना दिया था और कह दिया था कि जब मेंढकी के रूप में भी मुझ से कोई राजकुमार अपना दुःख-दर्द बतलाएगा, तब मैं फिर से पहले की तरह सुन्दर लड़की बन जाऊँगी।

राजमहल में पहुँचने पर सभी ने माधुरी को सुन्दरतम लड़की बतलाया। राजा ने छोटे राजकुमार को फिर अपने वक्ष से लगा लिया और उसका राजतिलक कर दिया। माधुरी के साथ छोटे राजकुमार का विवाह हो गया और वे दोनों सुख से राज्य करने लगे।

★

महीनों की कान्फ्रेंस

दीवाना

कँपकँपाता जनवरी बोला कि जाड़ा है ग़ज़ब।
फरवरी कहने लगा चुप रह कि सर्दी कम है अब॥
मार्च बोल उठा, ग़लत, सर्दी न गर्मी है कोई।
यों कहा अप्रैल ने हाँ, झूठ की हद हो गई॥
लू बढ़ी जाती है सर्दी का यहाँ पर ज़िक्र क्या।
जल के यों बोला मई, है नर्क मुझ से दूर क्या॥
क्रोध आया जून को, बोला मई से, दूर हट।
जल उठेगा नर्क भी, मुझ में छिपी ऐसी लपट॥
जब मई और जून में होती थी बातें गर्मगर्म।
आ गया सहसा पवन वर्षा का ठण्डा और नर्म॥
घिर उठे बादल जुलाई पानी-पानी हो गया।
और उन दोनों के मन की सब व्यथायें धो गया॥

फिर अगस्त आया तो जागे आग औ पानी के भाग।
जब घटा बरसी तो पानी, धूप जब निकली तो आग॥
साल जब ढलने लगा तो फिर सितम्बर ने कहा।
गर्मी औ सर्दी से कह दो सन्धि करलें अब ज़रा॥
बोला अक्तूबर, बड़ा आया है तू सन्धि का बाप।
चाल है तेरी निराली और अनोखी तेरी बात॥
संधि क्या हो जबकि मन में द्वेष हो आकर बसा।
नदियाँ उतरीं, उड़ गई पत्तों की भी सारी छटा॥
तब नवम्बर ने कहा, कहता हूँ तुम से साफ़-साफ़।
मेरे स्वागत को निकलने चाहियें स्वेटर, लिहाफ़॥
फिर दिसम्बर ने कहा; मुझ को अँगीठी चाहिये।
कोट की भी है ज़रूरत, वास्कट भी चाहिये॥

इस तरह मैंने लिया उन सबके भाषण का मजा।
इतने में आवाज़ आई साल की, मैं आ गया॥

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब्राहम लिंकन

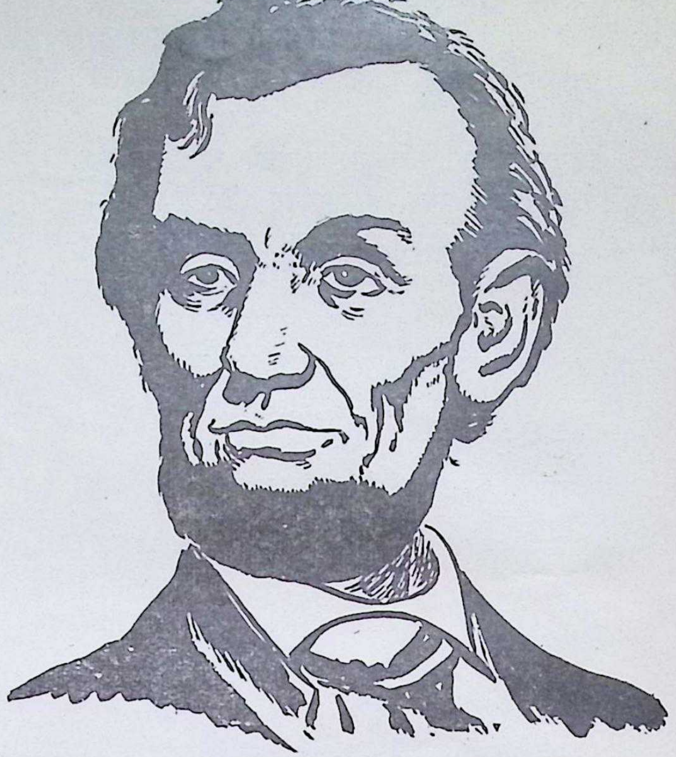

मुबारक अली

आज से लगभग एक सौ चालीस वर्ष पहले की बात है—

"बस, अब तो हम इण्डियाना के जंगलों में रहेंगे। वहीं मेहनत-मजदूरी करेंगे और अपना पेट भरेंगे। यहाँ केण्टुकी में क्या धरा है—न मेहनत-मजदूरी, न रोजगार-हाट! बस, भूखों मरो—पेट पर पत्थर बाँधकर रहो।" टामस लिंकन ने कहा।

"इण्डियाना के जंगलों में—सौ मील दूर? रास्ते में न जाने कैसे-कैसे बीहड़ पहाड़ मिलेंगे—न जाने कैसे-कैसे तेज नदी-नाले पार करने पड़ेंगे। ऊपर से घर-गृहस्थी का सामान और ये नन्हें-नन्हें बच्चे! भला किस तरह पहुँचेंगे हम लोग वहाँ?"—श्रीमती टामस लिंकन घबरा कर बोलीं।

"ओहियो नदी के द्वारा! एक छोटी-सी डोंगी बना लेंगे, उसी में थोड़ा-सा जरूरी सामान रख लेंगे और मजे से चले चलेंगे। ज्यादह-से-ज्यादह एक सप्ताह में ठिकाने पर पहुँच जाएँगे।" —टामस लिंकन ने उत्तर दिया।

सचमुच टामस लिंकन ने थोड़े ही दिन के परिश्रम से एक कामचलाऊ डोंगी बना ली। फिर कुछ आवश्यक वस्तुएँ छोड़कर घर का सभी सामान या तो बेच डाला, या पड़ोसियों में बाँट दिया। घर में दो ग्रन्थ भी थे—एक 'बाइबिल' और दूसरा 'जार्ज वाशिंगटन' का जीवन-चरित्र। टामस लिंकन बाइबिल तो अपनी पत्नी के डर से हटा नहीं सकते थे, इसलिये चुपके-चुपके वाशिंगटन का जीवन-चरित्र लेकर बाहर निकले। इतने में कहीं से उनका नौ वर्षीय पुत्र अब्राहम लिंकन आ पहुँचा और "यह तो मेरी प्यारी चीज है" कहते हुए पुस्तक एक ही झपट्टे में उनके हाथ से छीनकर घर में चला गया। बेचारे टामस लिंकन आँखें फाड़-फाड़ कर पुत्र का मुँह ताकते रह गए।

दूसरे दिन सब लोग डोंगी में जा बैठे और डोंगी ओहियो की लहरों पर नाचती-नाचती आगे बढ़ चली। सन्ध्या होते-होते डोंगी एक बियाबान जंगल में पहुँची। अब क्या किया जाए? सब लोग रात बिताने के विचार से वहीं नदी-किनारे जा लेटे। इधर-उधर जंगली जानवर दहाड़ रहे थे। सामने पहाड़ी से पत्थर तथा मिट्टी के ढोंके टूट-टूटकर नदी में धमाधम गिर रहे थे। परन्तु दिन-भर की थकावट से सभी बात-की-बात में खर्राटे भरने लगे। यदि नींद नहीं थी, तो अब्राहम लिंकन की आँखों में। वह अपनी छाती पर एक पैकेट रक्खे न जाने, क्या-क्या सोच रहा था।

थोड़े दिन पहले अब्राहम लिंकन ने एक तख्ती तैयार की थी, जिस पर कोयले, रेत और गोंद के मेल से बड़े सुन्दर अक्षरों में यह वाक्य लिखा था—'यदि गुलामी पाप नहीं है, तो फिर पाप कुछ है ही नहीं।' उस पैकेट में यही तख्ती थी और अब्राहम लिंकन ने इसलिये सावधानी से अपनी छाती पर रख छोड़ी थी कि कहीं वह नींद में दब-दब कर खराब न हो जाए—उसकी सारी कारीगरी धूल में न मिल जाए!

परन्तु नौ वर्ष का नन्हां-सा बालक—कब तक जागता रहता? ठण्डी-ठण्डी हवा के झोंके लगे, तो धीरे-धीरे नींद ने उसे धर दबाया। उधर तकिये के अभाव में टामस लिंकन की नींद उचट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गई। भला उन्हें क्या मालूम था कि उनके प्यारे बेटे ने पैकेट के भीतर कितनी मूल्यवान् वस्तु छिपा रक्खी है। वे चटपट उसे ही सिरहाने रखकर सो गए।

जब प्रातःकाल हुआ और श्रीमती टामस लिंकन जागीं, तो देखती क्या हैं कि अब्राहम लिंकन एक हाथ से पैकेट अपनी छाती पर चिपटाये है और दूसरा हाथ तकिये के समान पिता के सिर ...ने रक्खे है। वे जानती थीं कि पैकेट में क्या है। पुत्र का यह कार्य देखते ही उनका हृदय भर आया और उन्होंने एकदम चीखकर कहा—"गुलामी अवश्य पाप है—महापाप!"

× × ×

"सुना है, आपके पास जार्ज वाशिंगटन का एक बहुत सुन्दर जीवन-चरित्र है। यदि आप कुछ समय के लिये यह पुस्तक मुझे दे सकें, तो बड़ी कृपा हो। मैं आपका बहुत उपकार मानूँगा।"—अब्राहम लिंकन ने अपने गुरु एण्ड्रयू क्राफर्ड महोदय से प्रार्थना की।

अब्राहम लिंकन को पुस्तकें पढ़ने का बड़ा शौक था। वह खोज-खोजकर अच्छी-अच्छी पुस्तकें पढ़ता था। यदि कभी बीमार पड़ जाता था, तो अपनी बहन से पुस्तकें पढ़वाकर सुनता था। इनाम या उपहार में रुपये-पैसे के बदले पुस्तकें ही लेना पसन्द करता था। उसकी प्रार्थना सुनकर क्राफर्ड महोदय असमंजस में पड़ गए। कुछ सोच-विचार कर बोले—"देखो अब्राहम, मैं किसी को अपनी पुस्तकें देना अनुचित समझता हूँ। परन्तु तुम्हारे पुस्तक-प्रेम से परिचित हूँ। इसलिये तुम्हें यह पुस्तक दिए देता हूँ। परन्तु पढ़ना जरा सावधानी से। कहीं ऐसा न हो कि मैली-कुचैली कर डालो।"

"जी नहीं—मैली-कुचैली क्यों करूँगा। बड़ी सावधानी से पढ़ूँगा और बहुत जल्दी आपको लौटा दूँगा। यदि कहीं जरा भी दाग लग जाए, तो मुझे जो चाहे सजा दीजिए।"—यह अब्राहम का उत्तर था और वह पुस्तक लेकर आनन्द से उछलता-कूदता घर चला आया।

सर्दी की सन्ध्या थी। माता-पिता आदि अँगीठी के पास बैठे आग ताप रहे थे। अब्राहम भी उनके पास जा बैठा और पुस्तक पढ़ने लगा। सात बजे, आठ बजे, नौ बजे, दस बजे—लगातार कई घण्टे बीत गए। धीरे-धीरे सब लोग सो गए। परन्तु अब्राहम मानो पुस्तक में ही खोया रहा। बीच-बीच में कई बार पिता की आँखें खुलीं और उन्होंने अब्राहम से सो जाने के लिये कहा। परन्तु अब्राहम था कि पुस्तक पर से दृष्टि भी न हटाता था। अन्त में पिता गरज उठे—"अरे, कहना नहीं मानेगा—इसी तरह ठण्ड से सिकुड़ता रहेगा? बस, अब सो जा; सवेरे पढ़ लेना।"

भला अब्राहम कब तक पिता की आज्ञा का उल्लङ्घन करता? वह पुस्तक खिड़की में रख कर बिस्तर पर जा लेटा और सो गया। परन्तु प्रातःकाल पुस्तक पढ़ने के चाव में सबसे पहले जागा और झपट कर खिड़की के पास पहुँचा, तो देखता क्या है कि रात को वर्षा हुई है और पानी की बौछार से पुस्तक की शोभा हवा हो गई है।

अब्राहम का हृदय धक्-से हो गया। उसके कानों में क्राफर्ड महोदय के शब्द गूँज उठे। अब क्या उत्तर देगा वह उन्हें—क्या कह कर समझाएगा वह उन्हें? परन्तु घर बैठे रहने से तो काम चलेगा नहीं। अब्राहम उसी समय पुस्तक लिये हारा-थका-सा क्राफर्ड महोदय के सामने पहुँचा—आँखों में आँसू भरे, लज्जा से सिर झुकाए। क्राफर्ड महोदय उसे देखते ही बरस पड़े—"आखिर तुमने इतनी सुन्दर—इतनी मूल्यवान पुस्तक नष्ट कर ही डाली। इसीलिये तो मैं किसी को अपनी पुस्तकें नहीं देता।"

"क्या कहूँ? पुस्तक मैंने खिड़की में रख दी थी। रात को पानी बरसा और इसकी यह दुर्गति हो गई। इस अपराध के लिए मैं लज्जित हूँ—दुःखी हूँ"

"मैं यह नहीं जानता। मेरी पुस्तक का मूल्य अदा होना चाहिए।"

"परन्तु मेरे पास तो पैसे नहीं हैं।"

"हाथ-पैर तो हैं। बस, तीन दिन मेरे खेतों की घास काटो। मैं समझ लूँगा, मेरी पुस्तक का मूल्य अदा हो गया।"

जैसे अब्राहम के हृदय पर रक्खी हुई चट्टान हट गई। वह प्रसन्नतापूर्वक लगातार तीन दिन क्राफर्ड महोदय के खेतों की घास काटता रहा। चौथे दिन पुस्तक पर उसका अधिकार हो गया। वह उसे लेकर आनन्द से झूमता-झामता घर पहुँचा और अपनी बहिन से बोला—"तीन दिन घास काटनी पड़ी, तो क्या हुआ? पुस्तक तो अपनी हो गई। अब सदैव इसे पढ़ूँगा और लाभ उठाऊँगा।"

× × ×

सन्ध्या का धूमिल-सा अँधेरा धीरे-धीरे गहरा होता जाता था। पक्षी दल बाँध-बाँध कर अपने बसेरों की ओर उड़े जा रहे थे। अब्राहम और उसके मित्र भी वायु-सेवन के पश्चात् हँसते-मुस्कराते अपने घरों की ओर लौट रहे थे। सहसा सामने से एक घोड़ा आता दिखाई दिया—कुछ चिन्तित-सा, कुछ चौकन्ना-सा, इधर-उधर ताकता हुआ। उसकी पीठ पर जीन थी और मुँह में लगाम।

"किसका है यह घोड़ा?" अब्राहम बोला।

"किसी शराबी का! अभागा पड़ा होगा यहीं कहीं नशे में सारी सुध-बुध खोकर।"—दूसरा मित्र बोला।

"पता तो लगाना चाहिए उसका।"—अब्राहम बोला।

"बड़े आए पता लगाने वाले! भला पता लगाने से लाभ ही क्या होगा?"—तीसरा मित्र बोला।

"और हानि भी क्या होगी? आखिर देखना तो चाहिए कि वह है कौन!"—अब्राहम बोला।

मित्रों को अब्राहम की बात जँच गई। उन्होंने थोड़े ही प्रयत्न से शराबी को खोज निकाला। वह एक झाड़ी के पास पड़ा धरती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूँघ रहा था और उसके मुँह से पतला-पतला दुर्गन्धित फेन बह रहा था। अब्राहम ने घबरा कर कहा—"अब···क्या करना चाहिए अब?"

"मरने भी दो अभागे को! इससे कहा किसने था कि यह इतनी शराब पिए, सारी सुध-बुध खो बैठे और फिर धरती सूँघने लगे?"

"कुछ-न-कुछ तो हमें करना ही चाहिए। आखिर यह भी मनुष्य है!"

"बुरी आदत है अब्राहम तुम्हारी! अकारण ही किसी-न-किसी चिन्ता में उलझ जाते हो। कहना मानो, चुपचाप घर चलो। बैठे-बिठाए झगड़ा मोल लेना कहाँ की बुद्धिमानी है?"

"कैसी बातें करते हो तुम लोग! यदि मनुष्य ही मनुष्य की सहायता न करेगा, तो फिर कौन करेगा?"

"अच्छा है—अच्छा है! तुम इसकी सहायता करो, हम लोग तो अपने-अपने घर जाते हैं।"

इस प्रकार सभी मित्र कर्त्तव्य की पुकार ठुकरा कर चलते बने। अब्राहम अकेला ही शराबी के पास पहुँचा और उसे होश में लाने की चेष्टा करने लगा। परन्तु शराबी था कि उठ-उठ कर गिरता था। न आँखें खोलता था, न मुँह से बोलता था। अब्राहम ने आप ही आप कहा—"इसने तो पेट-भर शराब पी है। भला यह जल्दी होश में क्यों आने लगा। अब क्या करूँ—इसे घर उठा ले चलूँ?"

और सचमुच अब्राहम उसे पीठ पर लाद कर अपने घर ले आया। गरीब मजदूर का वह पन्द्रह वर्षीय बालक ऐसा ही बलवान् और साहसी था। बहिन की सहायता से उसने शराबी को कुछ खिलाया-पिलाया और रात-भर उसकी सेवा की। प्रातः काल होते-होते शराबी होश में आया और लज्जित भाव से अपने रास्ते चला गया।

× × ×

यह 'गुदड़ी का लाल' दिनों-दिन लोकप्रिय होता गया और पचास वर्ष की आयु में सम्मान के शिखर पर जा पहुँचा। संयुक्त राज्य अमेरिका की जनता ने उसे अपना 'प्रेसिडेण्ट' या 'राष्ट्रपति' बनाया। वह कहने के लिए तो इस संसार में नहीं है, परन्तु अब तक अपने देशवासियों के हृदय पर राज्य करता है। उसका नाम सुनते ही प्रत्येक अमेरिकन श्रद्धा-भक्ति से अपना सिर झुका लेता है।

★

हम बाल-भारती पढ़ते हैं

मुकुन्द पध्ये गोंदिया

मधु मिलिंद दिल्ली

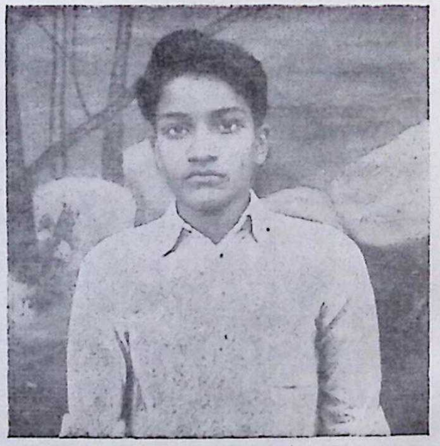

सुन्दरमल लाडनू (राजस्थान)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोभी मालिक

अवनीन्द्र कुमार विद्यालंकार

रामलाल एक कुशल माली था। उसने अनेक शहरों में अनेक बागों में काम किया था। उसका नाम आस-पास के इलाके में मशहूर था। पर इस समय वह जिस मालिक के यहाँ काम कर रहा था वहाँ वह खुश नहीं था। नया मालिक कस कर काम लेता था, छुट्टी कभी नहीं देता था, बीड़ी भी यदि कभी पीने लगता और मालिक आ जाता तो उस पर भारी डाँट पड़ती और गालियों की वर्षा सुननी पड़ती। बाग में ही रहने के लिये उसको एक टूटी-फूटी झोंपड़ी मिली हुई थी। इस झोंपड़ी की सालों से मरम्मत नहीं हुई थी। फूस लटक गया था। भीषण गर्मी होने पर भी उसको पेड़ के नीचे बैठ कर एक मिनट के वास्ते वह सुस्ताने न देता था।

रामलाल कई बार बाग की क्यारियाँ बनाते हुए कस्सी से मेंड़ पर मट्टी डालते हुए, पौधों को पानी देते हुए, माथे से चू रहे पसीने को पोंछते समय अपने पुराने मालिक को याद करता और उसकी आँखें कृतज्ञता से अश्रु-पूर्ण हो जातीं। राय साहब जनकधारी लाल ने रामलाल को अपने बेटे के समान पाला था। उन्हीं के यहाँ वह बड़ा हुआ। लगातार बीस वर्ष तक उनके बाग में उसने माली का काम किया था। दूर-दूर देशों से आये पौधों को वह शौक से लगाता था और माँ जिस स्नेह से बच्चे को पालती है, या कण्व आश्रम की शकुन्तला आश्रम के पौधों की जैसी देखरेख करती थी, रामलाल भी उनकी उसी प्रकार सेवा करता। बाग ही उसका घर था। पेड़-पौधे ही उसके परिवार के सदस्य थे। राय साहब उस पर पुत्रवत् स्नेह करते थे। रामलाल भी मालिक के काम के लिए दिन को रात और रात को दिन नहीं गिनता था। यहाँ उसको कोई तकलीफ नहीं थी। पहनने को अच्छे कपड़े, खाने को अच्छा खाना, गाय का दूध और मट्ठा मिलता था और रहने को दो कमरों का एक छोटा पक्का मकान मिला हुआ था।

रामलाल के ये दिन सौभाग्य के दिन थे। विधाता से ये दिन देखे न गए। राय साहब बीमार हो गए। बीमारी बढ़ती गई। राय साहब ने जब देखा कि उनकी बीमारी लम्बी है और उनके अच्छा होने की कोई आशा नहीं तब उन्होंने एक दिन रामलाल को अपने पास बुलाया और कहा, "रामलाल! जीवन का कुछ ठिकाना नहीं। बड़े शौक से लगाये मेरे बाग का क्या होगा मैं कुछ नहीं जानता। मेरा कारोबार भी कम होता जा रहा है। मैं चाहता हूँ कि तू मेरे जीते जी किसी और जगह काम पर लग जा। ले यह १०० रुपये और किसी अच्छे रईस के यहाँ काम ढूँढ़ ले। तेरा नाम सब बाग के शौकीन जानते हैं। तुझे काम मिलने में कठिनाई न होगी।"

राय साहब यह कह कर चुप हो गए। रामलाल की रोते-रोते घिग्घी बँध गई। जिस दिन की उसने स्वप्न में भी कल्पना नहीं की थी, वह अकस्मात् उसके सामने आ गया। राय साहब का द्वार उसको कभी छोड़ना पड़ेगा, यह उसने कभी भूल कर भी नहीं सोचा था। पर इस समय उसके सामने वह साकार रूप में खड़ी थी। वह फूट-फूट कर बच्चों के समान राय साहब के पैरों पर गिर कर रोने लगा और बोला, "मालिक! आपको छोड़ कर मैं कहीं नहीं जाऊँगा।"

राय साहब ने स्नेह से उसके सिर पर हाथ रखा और उसको समझाया, "मूर्खता न करो। यदि ईश-कृपा से अच्छा हो गया तो मैं तुझको फिर बुला लूँगा। तुम्हारी भलाई के ख्याल से ही मैं तुझे दूसरी जगह काम खोजने के लिये कह रहा हूँ।" रामलाल लाचार था। उसको राय साहब की नौकरी छोड़नी पड़ी।

कुछ वर्ष शहर के कई बड़े रईसों के बागों में उसने काम किया। पर दुर्भाग्य उसका पीछा कर रहा था। ये सब मालिक अच्छे थे। राय साहब की जान-पहचान के थे। पर किसी ने बाग बेच दिया, कोई मर गया और कोई दिवालिया हो गया और रामलाल को अपने बचपन का शहर छोड़ कर दूसरे शहर जाना पड़ा। नौकरी मिलने में कोई कठिनाई न हुई। मूलचन्द बड़े धनी आदमी थे। पर लोभी और कंजूस भी थे और चाहते थे कि नौकर दिन भर काम करे पर खावे कुछ नहीं और मालिक से माँगे भी कुछ नहीं, उल्टा उनको ही दे। नये मालिक का लड़का रमणलाल अपने बाप से भी एक कदम आगे था। रामलाल को यहाँ काम करते हुये तीन तीन साल बीत गये थे। जब वह छुट्टी माँगता तब लाला मूलचन्द कहते, "तुम्हारी जगह काम कौन करेगा? एक मास में बाग का जो नुकसान होगा वह कौन करेगा?" रामलाल चुप हो जाता और सिर नीचा कर वापस लौट जाता।

(२)

जेठ का महीना था। लू चल रही थी। रामलाल रोज की तरह बाग में काम कर रहा था। पसीना पोंछने के लिये मेंड़ पर कुदाल रख कर जरा वह तन कर खड़ा था। उसकी दृष्टि सामने के बाग के दरवाजे पर पड़ी। उसने देखा कि एक बाबू आ रहा है। उसने बहुत उजली और महीन धोती पहनी हुई थी। बदन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर मलमल का कुर्ता था। आँखों पर धूप का चश्मा था। सिर पर छाता था। वह आदमी रामलाल की तरफ चला आ रहा था। रामलाल यह देखकर बाग की सड़क पर आ गया। आगन्तुक ने पूछा, "क्या तुम्हारा ही नाम रामलाल है?" रामलाल ने जवाब दिया, "जी हाँ!" आगन्तुक ने बगल में से एक पोटली निकाली और कहा, "यह लो! राय साहब का तीन मास हुए स्वर्गवास हो गया। यह वे तुम्हारे लिये दे गए हैं। बहुत खोजने पर तुम्हारा पता चला। इसलिये इसके पहुँचाने में देर हुई।"

रामलाल ने वह पोटली ले ली और इसके साथ उसकी आँखों से छमाछम करके आँसू भी निकल आये। रामलाल ने राय साहब के मुंशी को नमस्कार किया। मुंशी वहाँ ठहरा नहीं और तुरन्त वापस लौट गया। रामलाल और मुंशी जब बातें कर रहे थे, तब दूर बरामदे में खड़ा मालिक का लड़का रमणलाल भी इनको देख रहा था। उसने यह भी देख लिया था कि नये आदमी ने रामलाल को एक पोटली दी है। पर रामलाल की नज़र उस ओर न गई।

रामलाल और रमणलाल दोनों बड़ी उत्सुकता से साँझ होने की प्रतीक्षा कर रहे थे। रामलाल यह जानने को व्यग्र था कि पुराना मालिक अन्तिम समय उसको क्या दे गया है? रमणलाल समझ गया था कि इसमें कुछ रुपये और कपड़े हैं। अतः वह इस ताक में था कि रामलाल इसे कहाँ रखता है। उसको भय था कि यदि रामलाल को एक साथ बहुत रुपये मिल गये, तो वह नौकरी छोड़ देगा और फिर इस जैसा मेहनती और होशियार और ईमानदार नौकर इतने कम पैसों पर मिलेगा नहीं। रमणलाल की नज़र उसके पैसों पर भी थी। वह नहीं चाहता था कि रामलाल अनायास कैसे पैसेवाला हो जाए।

शाम हुई। रामलाल अपनी झोपड़ी में पहुँचा किवाड़ उसने भेड़ लिये। टूटी झोंपड़ी के छेद से कुछ-कुछ प्रकाश आ रहा था। इसी रोशनी में उसने पोटली को बड़ी श्रद्धा के साथ देवता के प्रसाद के समान खोला। उसने देखा कि पुराने मालिक ने उसके वास्ते कुछ कपड़े और रुपये भेजे हैं। रुपये वह गिनने लगा। वे पूरे ५००० रुपये थे। रामलाल छत की ओर देखता रहा। उसका माथा ज़मीन पर झुक गया और एक बार उसने अपने अन्तःकरण की पूरी श्रद्धा के साथ भगवान् और अपने पुराने मालिक को याद किया और मन ही मन उनको उसने नमस्कार किया। रामलाल को इस बात का तनिक भी खटका नहीं था कि कोई व्यक्ति उस पर नज़र लगाये हुए है। पर रमणलाल उसका छाया की तरह पीछा कर रहा था।

(३)

रामलाल ने अपनी झोपड़ी को सुरक्षित नहीं समझा। उसे अपने लोभी मालिक के स्वभाव का पता था। पहले मालियों की जैसे चोरियाँ हुई थीं वह भी उसने सुन रखा था। अतः उसने

पोटली को फिर से बाँधा और अपने मैले कपड़ों में उसको लपेट कर वह झोपड़ी से बाहर आया। इस समय अँधेरा हो चुका था। रमणलाल एक पेड़ के पीछे खड़ा था। रामलाल की दृष्टि उधर नहीं गई। वह बाग के एक कोने की ओर मुड़ गया। बाग के कोने में एक बड़ा पुराना बरगद का पेड़ था। उस पेड़ की जड़ में एक बड़ा खोखल था। आसमान में चाँद चढ़ रहा था। तारे छिटक रहे थे। रामलाल ने उस पेड़ के पास पहुँच कर चारों ओर एक बार देखा। किसी आदमी को वहाँ न देख कर उसने वह पोटली पेड़ के खोखल के अन्दर सम्भाल कर रख दी। इससे निश्चिंत होकर वह अपनी झोपड़ी में लौट आया।

रमणलाल ने रामलाल को पेड़ के खोखल में पोटली रखते हुए देख लिया था। वह चाँद छिपने की इन्तज़ार कर रहा था। वह एक घण्टे के बाद जब चाँद छिपा तब वह नंगे पाँव बूढ़े पेड़ के पास पहुँचा। डरते-डरते उसने खोखल में हाथ डाला। पोटली लेकर अपनी कोठी में ले आया। घर पहुँच कर उसने वह पोटली अपने पिता को दे दी। पोटली का सारा इतिहास जान कर लाला मूलचन्द बहुत खुश हुए और पुत्र की पीठ ठोंकते हुए बोले, "वाह तुमने खूब काम किया। रामलाल सुबह होते ही छुट्टी पर जाएगा। अब उसको रोक रखने की जरूरत नहीं। माल हमारे पास आ ही गया है। जाओ अब तुम सो जाओ। मैं इसको एक अलग सुरक्षित जगह रख दूँगा। रामलाल स्वप्न में भी उस स्थान का पता न पा सकेगा।"

बाप बेटे में कुछ देर तक बहुत धीमी-धीमी बात हुई। चलते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समय रमणलाल ने फिर अपने पिता को चेताया कि इसको वे किसी सुरक्षित जगह रखना न भूलें। लाला जी ने जवाब दिया "फिकर मत करो। जाओ आराम से सो जाओ।" लाला जी को अपनी बुद्धि और चतुराई का बहुत भरोसा था।

बेटे के चले जाने और घर के सब लोगों के सो जाने पर लाला मूलचन्द पोटली लेकर घर से बाहर निकले। नंगे पाँव थे और दबे पाँव चल रहे थे। वे बाग में आये। बाग के कोने में खड़े बूढ़े पेड़ के पास वे पहुँचे। उन्होंने डरते-डरते अपने हाथ की पोटली उसी पेड़ के खोखल में डाल दी जहाँ कुछ घण्टे पहले रामलाल ने रखी थी। एक लम्बी साँस लेकर वह लौट आए और सो गये। अपने काम की सफलता पर उनको पूरा भरोसा था।

सुबह होते ही, नहा-धोकर रामलाल अपने मालिक के पास गया। लाला मूलचन्द बरामदे में पहले से ही बैठे हुए रामलाल की प्रतीक्षा कर रहे थे। रामलाल ने आज अपने मालिक को विशेष रूप से प्रसन्न पाया। इसको भी उसने अपना सौभाग्य माना। रामलाल ने मालिक से छुट्टी माँगी और अपना हिसाब माँगा। मालिक ने आज एक बार भी नहीं कहा कि तुमको छुट्टी नहीं मिल सकती। रामलाल मालिक के बदले व्यवहार से कुछ चकित था, पर वह इसका कारण नहीं समझ सका। रमणलाल अभी घर में खर्राटे ले रहा था।

रामलाल मालिक से हिसाब लेकर उसी पेड़ के नज़दीक गया। पेड़ के खोखल में उसने निश्चिन्त भाव से हाथ डाला। पोटली निकाली। उसको उसने छाती से लगाया। वहाँ से झोपड़ी में आया और अपना बिछौना लेकर रामलाल के बाग पर एक नज़र फेंकी। पुराने मालिक की याद उसके हृदय में इस समय भी जागृत थी। राय साहब को स्मरण करता हुआ वह बाग के फाटक से निकल गया।

आठ साढ़े आठ बजे रमणलाल की नींद खुली। धूप आ चुकी थी। वह दौड़ता हुआ पिता के पास पहुँचा। आते ही पूछा, "रामलाल गया?" पिता ने जवाब दिया, "वह गया, सब ठीक-ठीक हो गया।" रमण ने फिर उतावली में पूछा, "और वह पोटली?" लाला मूलचन्द ने विश्वास के साथ जवाब दिया, "वह सुरक्षित है।" पर रमणलाल को इस पर यकीन नहीं हुआ।

पिता से घबड़ाये स्वर में कहा, "अच्छा वह पोटली कहाँ है?" लाला जी यह प्रश्न सुन कर मुँह पर हाथ फेरते हुए और तिरस्कार की दृष्टि पुत्र पर डालते हुए उठ खड़े हो गये और बोले, "आओ!" रमणलाल ने देखा कि लाला जी उसी जरा-जीर्ण पेड़ की ओर बढ़ रहे हैं। उसकी साँस रुक रही थी। उसके पाँव बढ़ नहीं रहे थे। पर लाला जी तेज़ी से चले जा रहे थे। बाप-बेटे पेड़ के पास पहुँच गये। बेटे ने पहले झिझकते हुए खोखल में हाथ डाला। कई मिनटों तक हाथ घुमाया। पर कुछ नहीं मिला। एक चीख के साथ उसने हाथ निकाल लिया। अब लाला जी ने खुद परीक्षा की। पर पोटली वहाँ कहाँ थी? लाला जी का चेहरा पीला पड़ गया। उनमें अब चलने का उत्साह नहीं रहा था। वे पुत्र के सामने ही अपने को बेटे और रामलाल दोनों से हारा हुआ जान कर लज्जित थे और आत्मग्लानि से ज़मीन में गड़े जा रहे थे। अपने बुद्धि कौशल और चातुरी पर लाला जी का विश्वास डिग गया था।

★

हम भी बाल-भारती पढ़ते हैं

चम्पालाल गंगाशहर

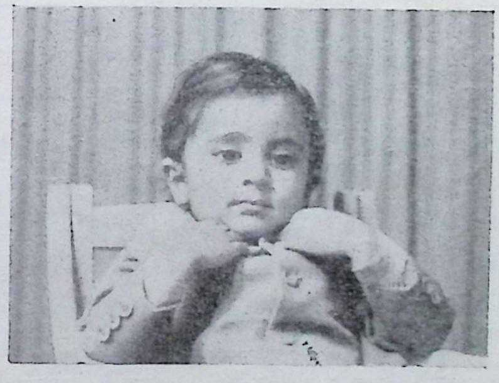

'अनामा' दिल्ली

प्रेमचन्द भटिंडा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं राम को काम नाम से-
काम काम से उनको ।

हरगोविन्द गुप्त

बात उस समय की भाई जब दिल्ली के सिंहासन पर,
ब्राजमान थे धर्म-न्याय-कर्त्तव्य-परायण पुरुष-प्रवर ।
हिन्दू-मुसलमान सब उनको प्रिय थे भाई-भाई से,
सब धर्मों के श्रद्धामय वे प्रेमी थे अनुयायी थे ।
अच्छी बात जहाँ भी मिलती उसको सिर-माथे लेते,
किन्तु कभी भी बुरा खोजने में न समय अपना खोते ।
उनकी आँखों ने दुनियाँ का अच्छा ही अच्छा देखा,
कहीं बुरा कुछ दिखा अगर तो अपना दृष्टि-दोष लेखा ।
उन्हीं दिनों में राजघाट पर एक महात्मा रहते थे,
परम भागवत् पर-दुख कातर जो कहते थे करते थे ।
दीन-दुखी की सेवा में वे अपना तन-मन-धन देकर,
अवसर आते ही लग जाते खान-पान सब कुछ तज कर ।
गाँव-गाँव में नगर-नगर में प्रभुता छाई थी उनकी,
कुटिया सदा भरी रहती थी उनके भक्तों से उनकी ।
अपनी व्यथा-कथा लेकर सब उनके द्वारे जाते थे,
सब सहायता समाधान संकट शंका में पाते थे ।
बाबा के बढ़ते वैभव से कुछ लोगों को क्षोभ हुआ,
सोचा उनने इनके बढ़ते अपना मटियामेट हुआ ।
बात-बात में इसी तरह यदि यह सबके दुख द्वन्द्व हरें,
तो फिर कौन हमारे द्वारे आकर बन्दन किया करें ।
इसी भाव से एक रोज वे दिल्लीपति के पास गये,
यथा योग्य अभिवादन कर चुपके कोने में बैठ गये ।
बादशाह ने ही तब उनसे पूछा—"पंडित जी क्या है,
बैठ गये चुपचाप आज यह कैसा अजब माजरा है ?"
बोले पंडित, "जी, हुजूर यह सब तो दुनियाँदारी है,
जिसमें खुशी बढ़ रही इस क्षण अगले क्षण लाचारी है ।
इसके कदम-कदम पर मन को हँसना-रोना पड़ता है,
वह भी कल की कलियां जैसा आज खिला कल झड़ता है ।"
बादशाह बोले कि, "ठीक यह, पर मन की तो बतलाओ,
अपने मन की अनबन कह कर मेरी उलझन सुलझाओ ।"
पंडित जी बोले कि, "न कुछ वह यों ही मन की दुर्बलता ।"
"फिर भी हर्ज न हो गर कुछ तो जानूँ मैं वह चंचलता ।"
बादशाह के यह कहते ही झुक कर बैठे पंडित जी,
"बात न कुछ पर कहना ही है अब जब हुजूर की है मर्जी ।
राजघाट पर एक लंगोटी वाले बाबा ने आकर,
जाल बिछाना शुरू किया है दिल्लीवालों के दिल पर ।
राम-भजन की बात न कर वह गप्पें हाँका करते हैं,
और इस तरह धीरे-धीरे कुछ जादू-सा करते हैं ।
इससे भय लगता हुजूर यदि उनको जाँचा गया नहीं,
तो उनकी अटपट बातों से झगड़ा हो जाये न कहीं ।"
"अच्छा कल देखा जाएगा" बादशाह तो यह कह कर,
और काम में लगे और पंडित जी पहुँचे अपने घर ।
दिल्ली का दरबार लगा फिर यथा नियम से अगले दिन,
यथा योग्य आसन पर बैठे सभा-रत्न दरबारीगण ।
पंडित भी थे, मुल्ला भी थे, परमेश्वर के प्रतिनिधि पंच,
सहज समझ लेते जो क्षण में धर्म-कर्म औ पाप-प्रपंच ।
सबके आते बादशाह ने बाबा जी को बुलवाया,
उनके आते हाथ जोड़ उच्चासन पर ला बैठाया ।
और आप ही शान्त भाव से पूछा यों बाबा जी से,
"महाराज, दरबार जानना चाहे बड़ी आजिजी से ।
सुना गया है यह कि आप संसारी से विरक्त होकर,
साधु हुए जिससे कि मुक्त हों प्यारा राम नाम भज कर ।
सच या झूठ राम जाने पर साथ-साथ हम यह सुनते,
आप न कभी एक पल को भी माला फेर भजन करते ।
और न कोई कथा सुना कर आप धर्म का करें प्रचार,
अलबत्ता धूनी पर लगता हर दम गप्पों का बाजार ।
राम-कृष्ण के भक्त आप क्यों नाम न उनका भजते हैं,
जिसको भज कर पापी जन भी भवसागर से तरते हैं ।"
बाबा ने तब कहा, "बात यह ऐसी कोई खास नहीं,
फिर भी कल बतला दूँगा मैं आ जायें सब लोग यहीं ।"
अगले दिन आ बाबा जी ने बादशाह को समझा कर,
कहा "बुला लें अपना कोई सबसे सच्चा नौकर ।
ऐसा सच्चा जो न कभी भी हुक्म आपका टाले,
कहा करे दुनियाँ मनमानी, कोई मारे पाले ।
किन्तु न इसकी चिन्ता कर वह हुक्म आपका माने,
बड़ा आपसे हुक्म आपका जिसकी गति-मति जाने ।"
बादशाह ने दृष्टि डाल अपने सब चाकर देखे,
एक एक के गुण कर्मों के गये लगाते लेखे ।
उनमें सबसे खरा उतरता अब्दुल्ला को पाया,
सच्चा नमक-हलाल मान उसको ही गया बुलाया ।
अब्दुल्ला ने आ विनम्र हो झुक आदाब बजाया,
बादशाह ने बाबा जी के पास उसे पहुँचाया ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

बाबा जी ने अब्दुला से वहाँ [illegible] कर,
बादशाह ही के समीप लाये उसको लौटा कर ।
और कहा, "आज्ञा दें इसको बादशाह अब ऐसी,
बतला दे वह बिना हिचक के कहलाऊँ मैं जैसी ।"
बादशाह बोले, "अब्दुल्ला हुक्म शाह का है यह,
साफ़ साफ़ बतला दो सब कुछ कहलायें जैसी यह ।"
अब्दुल्ला ने हाथ जोड़कर झुक, आदाब बजाया,
मानो उस आज्ञा को सादर सिर माथे बैठाया ।
सावधान हो खड़ा हो गया, अब्दुल्ला जैसे ही,
बाबा जी ने कहा उसे कुछ कहने को वैसे ही ।
किन्तु शाह का विश्वासी वह सबसे सच्चा नौकर,
सन्न खड़ा रह गया काठ-सा अपने मुँह को सींकर ।
बाबा जी ने फिर ललकारा "कह बच्चे चुप कैसा,
हुक्म टालता है मालिक का क्या कोई तुझ ऐसा ।"
अब्दुल्ला बोला कि "माफ़ करदें मुझको बाबा जी,
मालिक की खिदमत करने की, अब बन्दे की ड्यूटी ।
चूक न जाऊँ कहीं काम में बस, अब यही फिकर है,
करनी कथनी और सोचनी में बस यही जिकर है ।
हाँ, जब तक उनके कदमों से दूर-दूर रहता था,
तब तक उनका नाम ज़ुबाँ पर 'सुबो-शाम' रहता था ।
पर जब से उनकी खिदमत में बन्दा खड़ा हुआ है,
नाम छोड़कर काम तभी से उनका बड़ा हुआ है ।
बाबा जी ने कहा शाह से "पूछो इस नौकर से,
हुक्म मानता क्यों न आपका डरता नहीं कहर से ।"
कहता है यह काम नाम से कई गुना बढ़कर है,
यही तुम्हारा विश्वासी चाकर सबसे चढ़कर है ।
समझाओ तो जरा इसे यह बात बतादे मेरी,
तनिक बात के लिए कर रहा यह नाहक ही देरी ।
कहा शाह ने क्षमा मिले बस अब मुझको बाबा जी,
बिना कहे कह दिया आपने सब उसूल बुनयादी ।
नहीं राम को काम नाम से काम काम से उनको,
जिसके बल पर कोई जीत ले उनके भोले मन को ।
मूल वस्तु है काम राम का दीन-दुखी की सेवा,
जिसके करने पर देते वह जन को मन की मेवा ।
रीछ, बानरों ने करनी कर उनके मन को जीता,
गाई जाती युगों-युगों से जिनके गुण की गीता ।
दीन-दुखी के दुःख दूर कर अपने श्रम साधन से,
खायें, खेलें संग जगत के बंधे नियम संयम से ।
बिना दुखाये हृदय किसी का काम करें हम अपना,
बढ़ते चलें बढ़ाते जग को फिर किस जप का जपना ।

★

—और हम भी बाल-भारती पढ़ते हैं

सन्तोषकुमारी सिरी कर्णपुर

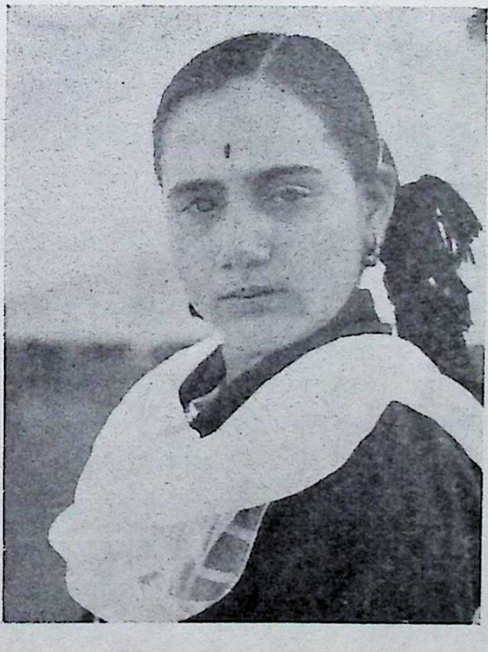

'अनामा' दिल्ली

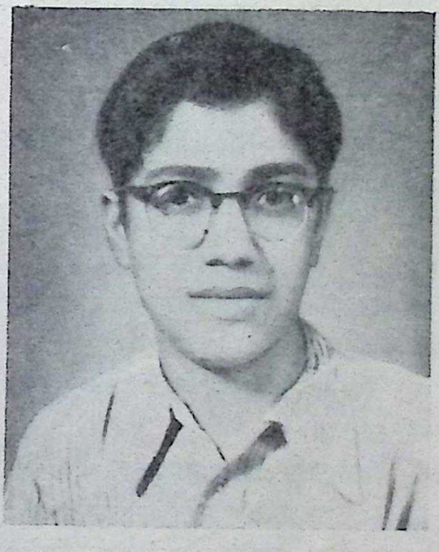

वीरेन्द्रकुमार जबलपुर

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय रेलें

कपिल

सूरज ने जैसे ही गणित की पुस्तक खोली कि जयश्री बोल उठी—'मास्टर जी !'

'क्यों ?' सूरज ने पूछा।

'आज गणित मत पढ़ाइए।' वह बोली, और सुमति की ओर देखने लगी।

'तो फिर क्या पढ़ोगी ?' सूरज ने पूछा।

'भूल गए आप ?' सुमति ने आँखें नचाते हुए कहा—'आप हमको······'

'भारतीय रेलों की कहानी सुनाने के लिए कह गए थे।' जयश्री ने सुमति का वाक्य पूरा किया।

'ओह, हाँ,' सहसा सूरज को याद हो आया—'तो फिर वही सही,' वह बोला—'ध्यान से सुनना।' और उसने गणित की पुस्तक बन्द करके एक ओर रख दी और कहने लगा—'कोई ज़माना था जब कि लोगों को घोड़ों की चाल पर गर्व था, लेकिन अब रेलों ने इस दिशा में बाजी मार ली है।'

'रेलों की रफ़्तार कितनी है, मास्टर जी ?' सुमति ने पूछा।

'पहले अधिक से अधिक दस मील प्रति घंटा थी,' सूरज ने बताया—'लेकिन अब ११२·५ मील प्रति घंटा तक रेलें दौड़ सकती हैं।'

'लेकिन मास्टर जी,' जयश्री ने पूछा—'रेलों का आविष्कार किसने किया था ?'

'भापगाड़ी का आविष्कार, जार्ज स्टीफेंसन ने सन् १८२१ में किया था,' सूरज ने कहा—'लेकिन फिर भी सन् १८२५ से पूर्व रेलें कहीं भी न चल सकीं। और फिर सन् १८२५ में २७ सितम्बर को सर्वप्रथम इंग्लेंड में, स्टॉकटन और डार्लिंगटन के मध्य रेल चली।'

'इसमें कितने डिब्बे थे मास्टर जी ?' सुमति पूछ उठी।

'इस रेल में ३८ डिब्बे थे, जो माल और मुसाफिरों से ठसाठस भरे हुए थे,' सूरज बोला—'तत्पश्चात् फ्रांस, जर्मनी, हालैंड, इटली तथा स्पेन में रेलें चलीं।'

'और भारत में कब चल सकीं ?' जयश्री ने उत्सुकता से पूछा।

'आज से लगभग १०३ वर्ष पूर्व, १८ फरवरी १८५२ को बम्बई में भायखला स्टेशन के आसपास पहला इंजन चला कर देखा गया था,' सूरज ने कहा—'फिर १८ नवम्बर १८५२ को, बम्बई और थाना स्टेशन के मध्य २१ मील के टुकड़े पर रेल चला कर देखी गई। इस रेल को थाना तक पहुँचने में ४५ मिनट लगे। इसके बाद १६ अप्रैल १८५३ को प्रथम रेल का मुहूर्त किया गया।'

'फिर यह रेल भी ४५ मिनट में ही पहुँची होगी ?' सुमति पूछ उठी।

'नहीं,' सूरज बोला—'यह रेल लगभग ४०० मेहमानों को अपनी गोद में छिपा कर, २१ तोपों की सलामी लेती हुई, जन समूह के शोर में, दिन के साढ़े तीन बजे चल कर, लगभग चार बज कर पैंतालीस मिनट पर थाना पहुँची थी।'

'फिर समस्त भारत में रेलें कब फैल गईं ?' जयश्री ने उत्सुकता से पूछा।

'लगभग एक वर्ष बाद १ मई १८५४ को यह लाइन कल्यान स्टेशन तक बढ़ा दी गई,' सूरज ने बताया और बम्बई राज्य के नक्शे में उस स्थान को दिखलाते हुए वह बोला—'बाद में कल्यान से खोपोली तक १२ मई १८५६ को, तथा खण्डाला से पूना तक १४ जून १८५८ को लाइनें खुलीं। खोपोली से खण्डाला तक अब भी बैलगाड़ियों में जाना पड़ता था, पर यह लाइन भी सन् १८६२ में तैयार हो गई।'

फिर सूरज ने मेज पर भारत का नक्शा बिछा दिया और बोला—'कसारा तक १ जनवरी १८६१ को लाइन बिछ चुकी थी और इगतपुरी तक ३० दिसम्बर १८६४ को लाइन खुली। इस प्रकार रेलों के विकास की नींव रख दी गई।'

'मास्टर जी,' सुमति ने शरारत से कहा—'अब थोड़ी चाय पीली जाय तो कैसी रहे ?'

'हाँ, मास्टर जी,' कहते हुए उर्मिला ने चाय की ट्रे मेज पर रख दी।

'तो क्या पूरी तैयारियों के बाद प्रस्ताव रखा गया था ?' सूरज ने हँसते हुए चाय को प्यालों में डाला और नक्शे को लपेट कर रख दिया।

'मास्टर जी,' उर्मिला ने चाय का घूँट लेते हुए कहा—'एक बात बताइए, अब भारत में कितने मील लम्बी रेलवें लाइनें बिछी हुई हैं ?'

'तब से आज तक रेलों सम्बन्धी विकास होता रहा है,' सूरज ने खाली प्याले को मेज पर रखते हुए कहा—'सन् १८८० तक भारतीय रेल प्रणाली के अन्तर्गत ६,००० मील लम्बी लाइनें थीं। बाद में इसकी लम्बाई ३७,२६६ मील से बढ़ कर ४१,१५३·७६ मील तक जा पहुँची और स्वतन्त्रता प्राप्ति के दिन भारत के पास ४०,५२४ मील लम्बी लाइनें थीं।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'लेकिन यह लम्बाई कम कैसे हो गई ?' सुमति पूछ उठी।

'लड़ाई के दिनों में कुछ लाइनें उखड़ गई थीं।' सूरज ने उत्तर दिया, 'सन् १९४७ में इसमें से कुछ भाग पूर्वी और पश्चिमी पाकिस्तान को मिल गया और कुछ लाइनें बढ़ीं भी। आज भारत में ३४,४०६ मील लम्बी रेलवे लाइनें बिछी हुई हैं जो संसार में तीसरा स्थान रखती हैं।'

'और अब बिजली की रेलें भी तो भारत में चलती हैं,' जयश्री बोली—'इनका चलन कब हुआ था ?'

'सर्वप्रथम ३ फरवरी १९२५ को विक्टोरिया टरमीनस से कुर्ला स्टेशन तक बिजली की रेल चली थी,' सूरज बोला—'बाद में कल्यान, पूना, इगतपुरी, बोरिविली तथा विराट तक बिजली की रेलें दौड़ने लगीं।

'और पहाड़ों पर कब चलीं ?' सुमति ने पूछा।

'संसार में सर्वप्रथम सन् १८३६ में आल्प्स पर्वत पर रेल चलाई गई थी,' सूरज ने कहा—'फिर भारत में सन् १८७८ में नीलगिरि और दार्जिलिंग के मध्य रेलें दौड़ने लगीं। बाद में शिमला, नीलगिरि और माथेरान पर्वतों पर भी रेलें चलने लगीं।'

'भारतीय रेलों के नाम तो आपने बताए ही नहीं अभी तक।' उर्मिला ने कहा—'सुना है, अब कुछ नाम बदल गए हैं।'

'हाँ', सूरज ने उत्तर दिया—'रेलवे बोर्ड के सन् १९५० के निर्णयानुसार भारतीय रेलों को छः बड़े-बड़े भागों में बाँटा गया था और उनका नाम उत्तर रेलवे, दक्षिण रेलवे, पूर्व रेलवे, पश्चिम रेलवे, मध्य रेलवे और पूर्वोत्तर रेलवे रख दिया गया है। हाल ही में १ अगस्त १९५५ को, पूर्व रेलों को भी दो भागों में विभाजित कर दिया गया है और पहला भाग पूर्व रेलवे और दूसरा भाग दक्षिण-पूर्व रेलवे कहलाता है।'

'इन भागों में कौन-कौन सी रेलें सम्मिलित हैं। जयश्री ने पूछा।

'उत्तर रेलवे में,' सूरज बोला—'ईस्टर्न पंजाब रेलवे, जोधपुर राज्य रेलवे, बीकानेर राज्य रेलवे तथा ईस्ट इंडियन रेलवे के तीन विभाग इलाहाबाद, लखनऊ तथा मुरादाबाद सम्मिलित हैं। दक्षिण रेलवे में मद्रास एण्ड सदर्न (मरहट्टा) रेलवे, साउथ इंडियन रेलवे तथा मैसूर राज्य रेलवे सम्मिलित हैं। पूर्व रेलवे में ईस्ट इंडियन रेलवे के दीनापुर, आसन सोल विभाग और हावड़ा विभाग का कुछ हिस्सा और दक्षिण-पूर्व रेलवे में बंगाल नागपुर रेलवे और हावड़ा विभाग का कुछ हिस्सा सम्मिलित है। पश्चिम रेलवे में बाम्बे बड़ौदा एण्ड सेंट्रल इण्डिया रेलवे, सौराष्ट्र रेलवे, राजस्थान रेलवे तथा जयपुर राज्य रेलवे सम्मिलित हैं। मध्य रेलवे में ग्रेट इंडियन पैनिनसुला रेलवे, निज़ाम राज्य रेलवे, सिंधिया राज्य रेलवे तथा धौलपुर राज्य रेलवे सम्मिलित हैं। पूर्वोत्तर रेलवे में अवध एण्ड तिरहुत रेलवे तथा आसाम रेलवे सम्मिलित हैं।

'पर, ये भाग बने कब ?' उर्मिला ने पूछा।

'१४ अप्रैल १९५१ को दक्षिण रेलवे बनी', सूरज ने बताया 'और ५ नवम्बर १९५१ को मध्य तथा पश्चिम रेलवे बनी। बाद में १४ अप्रैल १९५२ को उत्तर रेलवे, पूर्वोत्तर रेलवे तथा पूर्व रेलवे के भाग बने।'

'इन रेलों की लम्बाई कितनी-कितनी है ?' सुमति ने कहा।

'उत्तर रेलवे ६०२६ मील लम्बी है', सूरज ने बताया। दक्षिण रेलवे ६,०१६ मील, पूर्व और दक्षिण-पूर्व रेलवे मिलकर ५,६७५ मील, पश्चिम रेलवे ५,६६८ मील, मध्य रेलवे ५,६३१ मील तथा पूर्वोत्तर रेलवे ४,८०३ मील लम्बी है। इसके अलावा ग़ैर-सरकारी संस्थाओं के पास भी कुछ रेलें हैं, जिनकी लम्बाई ५५४ मील है।

'मास्टर जी, रेलों में कितने कर्मचारी काम करते हैं ?' जयश्री ने पूछा।

'इस समय रेल-कर्मचारियों की संख्या ६,६४,०६१ है', सूरज ने बताया। 'अच्छा, एक बात बताओ', उसने पूछा—'भारत में सबसे लम्बा प्लेटफ़ार्म किस स्टेशन का है ?'

'खड़गपुर का', उर्मिला ने जल्दी से उत्तर दिया।

'नहीं', सूरज ने सिर हिलाते हुए कहा—'सबसे लम्बा प्लेटफ़ार्म सोनपुर स्टेशन का है। यह स्टेशन पूर्वोत्तर रेलवे का है। इसकी लम्बाई २,४१५ फ़ीट है, जबकि खड़गपुर के प्लेटफ़ार्म की लम्बाई केवल २,३५० फ़ीट ही है और यह स्टेशन पूर्व रेलवे का है।'

तभी दीवार घड़ी ने टन-टन कर सात बजाए।

'अरे, सात बज गए', कहता हुआ सूरज उठ पड़ा—'तो कल गणित के सारे प्रश्न हल करके रखना', कहता हुआ वह चल पड़ा और बालकों ने हाथ जोड़कर नमस्ते की और बोले—'अब किसकी कहानी सुनाएँगे ?' पर, ये शब्द केवल कमरे में ही गूँज कर रह गए, सूरज काफ़ी दूर जा चुका था।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चीनी लोककथा

बादमराक

डी० मंजु लता

पुराने जमाने में चीन के पहाड़ी प्रदेशों के एक गाँव में बादमराक नाम का बालक रहता था।

उसके माता-पिता उसको बहुत प्यार करते थे। कुछ बड़ा होने पर वह स्कूल में दाखिल कराया गया। स्कूल गाँव के समीप के एक शहर में था।

पाठशाला के अध्यापक ने बादमराक के हाथ में एक क़लम, काग़ज़ और रोशनाई देकर चीनी अक्षर सिखाना शुरू किया।

पढ़ने-लिखने की तरफ़ उसको अरुचि होने लगी। उसे अक्षरों से डर होने लगा, क्योंकि चीनी के अक्षर बहुत-से हैं। एक हज़ार, दो हज़ार। 'पानी' माने क्या हैं ?, 'सूरज' माने क्या हैं ?, 'आदमी' माने क्या हैं ?—इस तरह बहुत कुछ जानना पड़ रहा था। हरेक अक्षर को याद रखना लोहे के चने चबाने के बराबर लग रहा था।

बादमराक बड़ी मुश्किल से स्कूल में एक दिन बैठा। दो दिन बैठा। तीसरे दिन स्कूल से भाग निकला।

यों वह स्कूल से भाग कर खेतों में चला गया। वहाँ चारों ओर हरी घास उगी हुई थी। उसी घास पर वह लेट गया और सोचने लगा—"अब क्या करना चाहिए ?" वह घर जाना नहीं चाहता था। अगर घर जाएगा तो माँ-बाप उससे नाखुश हो जाएँगे और पीटेंगे भी। लेकिन वह फिर पाठशाला की तरफ़ भी नहीं झाँकना चाहता। वह उतने अक्षर कभी नहीं सीख सकता। इस तरह वह बहुत देर तक सोचता रहा।

"हे भगवान् ! मुझे घर पर क्यों नहीं रहने दिया ? पहाड़ों पर घूमते हुए भेड़-बकरियों से खेलने का अवकाश क्यों नहीं दिया ? अध्यापक जो कुछ पढ़ाता है, वह सब मैं कैसे सीख सकूँगा ? मेरे लिए कोई चारा नहीं। अब मैं क्या करूँ ?"

बादमराक बड़ा दुःखी हुआ। उसकी आँखों से आँसू बह निकले। रो-रोकर आख़िर वह उसी घास पर नींद में सो गया। उसकी नींद तब खुली जब एक चींटी कोई चीज़ अपने मुँह में दबोचे उसके हाथ पर रेंगने लगीं। वह चींटी एक बड़े गेहूँ के बीज को जो उसके मुँह से भी बड़ा था, बड़ी कठिनाई से मुँह से पकड़े हुए थी।

वह फिर से सो गया और स्वप्न में देखा कि वह पहाड़ों पर इधर-उधर दौड़ रहा है। तुरन्त ही उसकी नींद खुली। तब उसने देखा कि वह चींटीं उस गेहूँ के बीज को मुँह से दबोचे उसके हाथ पर रेंग रही है।

बादमराक ने चींटी को झटका दे कर फिर नीचे गिरा दिया। इस बार वह उसकी तरफ़ टकटकी लगा कर देखने लगा कि वह क्या करेगी।

तीसरी बार फिर वह चींटी बादमराक के हाथ पर चढ़ गई। पर उसने चींटी को कुछ नहीं किया। उसने अपने आप में सोचा—'देखें, वह कहाँ जायेगी और क्या करेगी !'

वह चींटी अपने बीज के साथ हाथ पर धीरे-धीरे रेंगते हुए उस पार गई, और एक बड़े पत्थर पर चढ़ने लगी।

इस तरह वह उस पत्थर ही पर कुछ दूर तक गई थी कि हवा का एक झोंका आया और वह पत्थर के ऊपर से नीचे गिर पड़ी। बादमराक ने एक घास का तिनका लेकर चींटी की मदद के लिए उसकी तरफ़ बढ़ाया। वह थोड़ी देर तक आराम करके बीज को फिर से अपने मुँह में दबोचे पत्थर पर चढ़ने लगी। एक-दो अंगुल का रास्ता उसने तय किया ही था कि फिर हवा ने उसे ढकेल दिया। इस तरह कई बार हुआ। आख़िर जब सूरज डूबने को था, तब जाकर बड़ी मेहनत के साथ चींटी उस पत्थर के उपरले भाग तक पहुँच सकी।

इसके बाद वह बड़ी फुर्ती से पत्थर के उस पार अपने गन्तव्य स्थान को पहुँच गई।

"यह तो बहुत छोटा-सा जीव है, तो भी वह किसी न किसी तरह परिश्रम करके अपने गन्तव्य स्थान तक पहुँच गई।"—उसने सोचा, "मैं मनुष्य हूँ ! क्या मैं चींटी से भी गया बीता हूँ ?"

"तुम्हारी बात सच है बादमराक ! तुमने पढ़ा तो कुछ नहीं है, पर तुम्हारे विचार बड़े ऊँचे हैं। अगर तुम आइन्दा खूब पढ़ोगे-लिखोगे तो महान् आदमी बन जाओगे।" उसको कोई ऐसी आवाज सुनाई दी।

ये बातें चींटी के मुँह से निकली थीं। यों कहकर वह चींटी गेहूँ के बीज के साथ अपने बिल में चली गई।

बादमराक फौरन उठ खड़ा हुआ और पाठशाला की तरफ़ दौड़ पड़ा। तब से उसको पढ़ना-लिखना उतना कठिन नहीं लगा। कुछ वर्षों के बाद वह बहुत बड़ा विद्वान बन गया। लोगों ने बादमराक की बड़ी प्रशंसा की।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हरियाणे की लोरियाँ और बालगीत

कन्हैयालाल मिएडा

किसी भी प्रदेश की महत्ता उसके लोक साहित्य में अन्तर्हित होती है। हरियाणा-प्रदेश के लोकगीतों में उसके लोक जीवन की श्रेष्ठता झलकी पड़ती है। उत्कर्षमय लोकगीतों से स्पष्ट है कि इस प्रदेश का लोक जीवन वास्तव में सुखद रहा है। प्रफुल्लित माताएँ अपने बच्चों को दुलारते समय कितनी ममता भरी लोरियाँ गाती हैं इसकी सुन्दर झाँकी निम्न पंक्तियों में देखिये :—

"सोई गीगा सोई, तेरी माँ करै रसोई
रसोई मैं पक्या खाजा, गीगै का बाप दिल्ली का राजा
रसोई करदे लागी बार, गीगा जीमै चावल-दाल
चावल-दाल मैं कांकरिया, गीगैगा मामा ठाकरिया
ठाकरिया ठकराई करै, परसाँ बैठ बड़ाई करै,
घोड़ां चढ़, चढ़ाई करै, हाटां बैठ गुमराई करै"

बच्चों को लोरी देते समय भी माताएँ उनमें प्यार भरी भाषा में गौरवान्वित जीवन का उत्कर्ष फूँकती हैं, यह उक्त लोरी से सुस्पष्ट है। निम्न पंक्तियों में मनुहार भरी लोरियों का सुन्दर सम्पुट निरीक्षण कीजिये :—

"सोज्या गीगा सोज्या, स्याणा राजा होज्या
बिल्ली बोलै म्याऊँ-म्याऊँ, कुत्ता बोलै भ्याऊँ-भ्याऊँ
कोको कान कतरले, गीगा राम समरले
दिल्ली की छींट मँगा द्यूँ, झुगला, टोपी तन्नै सिमा द्यूँ
गीगा होग्या स्याणा, माँडै कबड्डी पाणा
गीगा आवै गली-गली, खील बखेरूँ खड़ी-खड़ी
गीगा आवै रात अँधेरी, चासूँ दिवला धरूँ चुफेरी
गीगा आवै खेल-खेल, माँडे राखूँ बेल-बेल
गीगा आवै हाटाँ-हाटाँ, लाडू फोडूँ भाठाँ-भाठाँ
लाडू फोड़ के करूँ कसार, जीमै गीगैगा परिवार"

अपने लल्ला पर माँ किस प्रकार बलिहारी जाती है इसका मनोग्राही आभास उपरोक्त लोरी में सन्निहित है। दूध बिलोती हुई माँ का लाल रोने लगता है तो उसे खेलाने के लिए कैसी सुन्दर लोरी गाई जाती है यह भी देखिये :—

"जग्गर-मग्गर दूध बिलोवै, गूजरी का बेटा रोवै
रोवै है तो रोवण दे, मन्नै दूध बिलोवण दे
झगर बिलोवणो खाटी छा, आओ ए लुगाइयो घालूँ छा
तड़कै नहीं मिलैगी छा, मुन्नो चलैगो पाँ-पाँ
आज तड़कै परस्यूँ, झुगला, टोपी करस्यूँ"

जब इतने पर भी लल्ला नहीं मानता और गोदी ले लेने के लिए मचल उठता है तो माता उसे कुछ देर और चुप रखने के लिए पक्षियों की ओर संकेत करती हुई पुनः लोरी गाती है :—

"आओ ए चिड़यो चाँचो, म्हारे मुन्नै आगै नाचो,
आओ रै कागो आओ, गीगै नै गीत सुणाओ,
आओ सूवा सूई, गीगा पहरै फतूई
फतूई मैं हूवा राखै गीगै की भूवा"

लल्ले को खेलाती हुई बुआ उसकी माँ से किस हास्यमय ढङ्ग से चुटकी लेती है यह भी कम मनोहारी नहीं है :—

"लल्ला-लल्ला लोरी, दूध भरी कटोरी
कटोरी मैं बताशे, लल्ला करै तमाशे
लोरी-लोरी पाटाँ की, बाप चतर माँ जाटाँ की
जोहड़ ऊपर बोले मोर, लल्ले की नानी नै लेगे चोर
मेरा भाई स्याणा, अनार का सा दाणा
अनार पाकी सूवा, खिलावै मुन्नै की भूवा"

प्रमुदित माँ भी अपने प्रति कसे गये व्यंग-हास्य का प्रत्युत्तर कितनी मधुर और विनोदमयी भाषा में देती है :—

"लल्ला-लल्ला लोई, तेरी भूवा करै रसोई
रसोई मैं बड़ग्या कुत्ता, लल्ला रहग्या भूखा
दुर कुत्ता दुर बिल्ली, लल्ला ब्याहा दिल्ली
दिल्ली की बेटी काली, वा माँगै लूँग-सुपारी
सुपारी कठैसूँ देऊँ, मैं रोगे बोबा लेऊँ
भूवा ए भूवा तेरी कातणी मैं चूवा
के करूँ भतीजा तेरा फूँफा खेलै जूवा"

चन्दा मामा बच्चों को अत्यन्त प्रिय होता है। बच्चों को खेलाते समय उनकी माताएँ भूवा को मुन्ने को न खेलाने का मीठा उलहना देती हुई लोरी की मधुर तान में जिस स्वाभाविक ढङ्ग से मुन्ने को पूरा लड्डू खाने की प्रेरणा देती हैं वह सर्वथा स्तुत्य है :—

"चन्दा मामा चाँदी दे, गेहूँ चणाँ की माँडी दे
दो लाडू और टिंडी दे, खेलण खातर गिन्डी दे
आधा लाडू भावै कोनी, भूवा गीत गावै कोनी
मामा भात ल्यावै कोनी, नई बीनणी आवै कोनी"

माँ ने पुनः भूवा पर व्यंग कस दिया। परन्तु बुआ कम नहीं है। वह अपनी बारी में गाती है :—

"चाँद बाबा चाँदी दे, घी खाँड और माँडी दे
गीगै नै नींद बणावैगी, भूवा मंगल गावैगी
झयान सारी सराहवैगी झम्मक लाड़ी आवैगी
बहू आवैगी मोटी, पाड़ै सासूगी चोटी"

जब बच्चा थोड़ा बड़ा हो जाता है तो उसे पाँव चलाना सिखाते हुए माताएँ कुत्ते और बिल्ली आदि को दुतकारने के बहाने गाती हैं :—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"दुर कुत्ता राँड का, लाडू ल्याई खाँड का
बिल्ली आई भाज कै, लाडू ल्याई काढ़ कै
कुत्ता आया दौड़ कै, लाडू ल्याया फोड़ कै
मुन्ना खेलै गली-गली, लाडू बाँटै डली-डली"

खोपरा खाने की भावना व्यक्त करती हुई माताएँ गाती हैं—

"दुर कुत्ता दुर जाई कुत्ता, बणिये की हटड़ी पाड़ी कुत्ता
बाणिया बुड्ढा डोकरिया, गीगै नै भावै खोपरिया"

बच्चे को दूध पिलाने के लिए प्रेरित करती हुई माताएँ लोरियों में दूध का अभाव प्रगट करती हैं जिससे बच्चे अपनी माँ से बल-पूर्वक दूध देने का आग्रह करते हैं और लोरी की तान से प्रभावित होकर चटपट दूध पी लेते हैं :—

"गोरी गाँ ब्याई है, लबेरा बच्छा ल्याई है
न्याणा तुड़ागी, हांडी फुड़ागी
बच्छा गमागी, जंगल मैं जा भागी
सारा दूध बहग्या, मुन्ना भूखा रहग्या"

जब बच्चे सोकर उठते हैं तो वे सहसा मुँह धुलाने में बड़ा नटखटपन करते हैं। ऐसे समय में भी माताएँ गीत गाकर उनका मुँह धोती हैं।

"छी छी छी छी बिल्ली खा, दूध-मलाई गीगा खा
चिट्टी-चिट्टी कागै नै, दूध-मलाई लालै नै"

बच्चों को थोड़ा बड़े होने पर जब माताएँ स्वयं चारपाई पर बैठ कर उन्हें अपने पाँव पर झुलाती हैं अथवा पालने में सुलाती हैं तो भी वे गीत गाती हैं :—

"गीरगड़ी भई गीरगड़ी, सास छोटी बहू बड़ी
सास गई पाणी नै, घर सांप्यो धीराणी नै
धिराणी बांट्या गिन्दोड़ा, दान मैं दिया गऊ-घोड़ा
एक गिन्दोड़ा घटग्या, सासू का नाक कटग्या
जद जद सासू पाणां नै जा, तब तब बहू गिन्दोड़े खा
ताते ताते खाती जा, सीले सीले धरती जा"

बच्चों के लाड़-प्यार में गाई जाने वाली लोरियों की कोई समता नहीं है। भाषा विज्ञान के अनुसार थोड़ी-थोड़ी दूर पर हुए भाषान्तर के साथ-साथ अनेक स्थानों में अपने ढंग की लोरियाँ गाई जाती हैं। मुख्य लोरियों में निम्न पंक्तियाँ भी उल्लेखनीय हैं :—

"लोरी लोरी लाल्लै नै, प्यारै मदनगोपाल्लै नै
गिग्गी बड़ी स्याणी, दूध-रोटी खाणी
आरै आरै आरै, गाँ पड़री लारै।"

बालकों की माया अनूठी और सूझ अनुपम होती है उनके जीवन प्रसंग में हास्य विनोदादि रसों का वैचित्र्य अन्तर्हित होता है। किस समय में वह क्या कह जाते हैं और वानरों की भाँति कितने ही हर्षोल्लास से उड़ानें लेते रहते हैं यह उनकी अपनी देन है। जब बच्चे खेलते हैं तो परस्पर पीठ पर हल्की थपकी लगाते हुए गाते हैं :—

"चढ़-चढ़ मकड़ी महादेव राणी
उरलै कुवैगा खारा पाणी
परलै कुवैगा मीठा पाणी
उरलै कुवैगै भूँत लगाऊँ
परलै कुवैगा पाणी प्याऊँ
आवैंगी राणी पीवैंगी पाणी
राजा की घोड़ी ब्याई,
छैल बछेरी ल्याई"

बच्चों को हँसाने के लिए उनकी हथेली पर गुदगुदी करते हुए गाया जाता है जिसे हरियाणा भाषा में "गदगावड़ी" कहते हैं :—

"गोरी गाँ, बिलाया बच्छा,
खल खाँदा, पाणी पिंदा
खोया गया, कणही देख्या होतो बताइयो
यो खोज यो खोज, यो पाया यो पाया"

बच्चों की टोलियाँ ठीकरी लेकर खेलती हैं और गाती हैं:—

"सरण वरण की ठीकरी, सरणाटे करदी जा
राजा जी के बाग में बरणाटे करदी जा"

यदि बच्चों को कोई ब्याह की मिठाई न दे तो वे उसके द्वार पर जाकर गाते हैं:—

"अल्ला खुदा तेरी नूरकी का ब्याह,
आज तेरी मँगनी कल है निकाह
फट गई सुथनी बिगड़ गया ब्याह
वाह भई वाह भई वाह भई वाह"

यदि घाम में मेंह बरसे तो नगर में बच्चों की टोलियाँ चाव से गाती सुनाई देती हैं:—

"तावड़ै मैं मेंह बरसै, भूँत भूँतणी का ब्याह हरसै
चिड़ीकरै चूँचाट, कागला ढोल बजाले रै
गुरसल गावै गीत, कमेड़ी भंग उठालें रै
तीतर चढ़ग्या जाँड, कमेड़ी निका पढ़ाले रै"

कहानी न कहने के बहाने में प्रायः बच्चे यह प्रसिद्ध कहावत कहते हैं :—

"कहाणी कहदां कागला, हुँकारे भरदा मइय्या
काणती नै चोर लेग्या भाजरै पँगलिया"

बच्चों को बानरों से विशेष प्रेम होता है और वे उन्हें देख-देख कर खिजाते हुए गाते हैं:—

"टीस बाँदरा टीस, तेरै बच्चे होए बीस
एक बच्चा मरग्या, तन्नै आई रीस
बाँदर-बाँदरी का ब्याह, चूसा भात लेकै जा
गादड़ ढोल बजांदा जा, बिल्लड़ गीत गांदा जा
लाल ढाल का बाँदरा, गण्ठा रोटी खा
गण्ठा फँसग्या घेटवै में, छा माँगण जा
छा मिली थोड़ी, ठें बरोली फोड़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ले बाँदर रोटी पाड़ बहू की चोटी
चोटी में ढ़ेरे, ले राँड के फेरे"

जो बालक अपना नाम ले लेता है उसको भी वे कम नहीं कोसते:—

"अपणा नाम लेलिया, नाली में सिर दे लिया,
नाली गई फूट, सासू गई ऊत"

यदि कोई व्यक्ति बच्चों का कहना न माने तो बच्चे उनकी बड़ी धज उड़ाते हैं :—

"काशीराम चौधरी, मुस्से मारे नौधड़ी
एक मुस्सा घटग्या, चोधरी का नाक कटग्या
नन्हीं-नन्हीं बूँद पड़ै, गोड्डां पाणी चढ़ग्या
फतेचन्द की टांग टूटगी, सारा साँग बिगड़ग्या"

इस प्रदेश में बालकों के अनेक गीत ऐसे प्रचलित हैं जिनमें न तो यति गति है और न ही उनका अर्थ विशेष किन्तु तो भी ऐसे गीत बालक गाते देखे जाते हैं। हिन्दी की गहरी छाप हरियाणे के वालगीतों पर भी पड़ी है और हरियाणे के बालगीत भी प्रायः हिन्दी गीत जैसे ही बनते जा रहे हैं। हरियाणे के लोक कवि तो लोक साहित्य को उन्नतांशों में हिन्दी के समीप ले गए हैं और आजकल हिन्दी साहित्य की कथा, कहानी आदि ही विशेषतः प्रचलित होती जा रही है:—

"हरी टोपी लाल दुशाला, कहाँ चले उद्दी के लाला
मिस्टर जी के आड़ ताड़े, तोड़ दिये तप्पड़ ताड़े
अलो गली में पड़ी जंजीर, कोई ल्यो तुक्का कोई ल्यो तीर"

बालकों में देशभक्ति का भावना भी लहरें मारती है और कभी-कभी बच्चों की मस्त टोलियाँ गाती हुई सुनाई देती हैं:—

"खरया रपग्या चाँदी का रै, राज महात्मा गान्धी का
सुभाष करग्या घणा कमाल, राज करर्या जुहारलाल
बालकां की सुणी पुकार, काम करण लागी सरकार
राजेन्द्र होग्या घणा निहाल, देश होग्या मालामाल
जयहिन्द बोलो चालो साल"

हरियाणा के छात्र पाठशालाओं में छुट्टी होने से पूर्व नित्य कालीन प्रार्थना की भाँति अत्यन्त प्रिय गीत गाया करते हैं जो अभिभावक गुरुजनों के सम्मान और सरस्वती आराधन का सूचक है :—

"सुरसत सुरसत तूँ जुग ज्याणी हंस चढ़ी लटकावै वाणी
तेरे सद्दे हैं लग च्यार, विद्या माँगै ऊबा बार
खेती करी न बिणजी जा, विद्या कै वल बैठया खा
एकल सरिया जा चढ़या, सरस्वती पर जा पड़या
सर सर सर बाणी चक होर, सुरसत बैठी कंठ मोर
मोर गए हैं चुग्गा पाणी, सुरसत बैठी पंडत बाणी
पढ़ पढ़ाके होए अनन्त, राजा हैं दुतियों के छन्द
हेरणी दोरंगी चंगी, बारह मास के दो भइ अंगी
दो पद दो पद कुआ चिणाया, सूणा सा सब साँग सजाया
कूवे में दो अम्बे बोले, दे सुरसत वाणी के झोले
ज्यूँ ज्यूँ अम्बा लोरी ले, त्यूँ त्यूँ सुरसत विद्या दे
थाल कचोला गुरुवाँ जी का, लेखन पुस्तक म्हारी
लेखन पुस्तक लेकर जास्याँ, मात-पिता नै सबक सुणास्याँ
मात-पिता तुम देओ असीस, चेला जीवै कोट वरीस
कोट वरीस के ऊँचे पाये, जय गुरू जी भले पढ़ाये
छोटा-सा बिनाकिया, पाटी पढ़ण जा था
पाटी पर तैं जा पड़या, मालण के घर जा जा पड़या,
मालण दिया पान-फूल कूणै बैठया खा था
कूणै मैं दो खूँटी, सब छोराँ की छूटी
आई विद्या गया भों, मास्टर जी का भला हो"

बालकों के छठी उत्सव नामकरण संस्कार, मुण्डन संस्कार, दशोटन आदि माँगलिक अवसरों पर हरियाणी महिलाओं द्वारा गाया जाने वाला प्रसिद्ध गीत :—

"उभ घड़ी शुभ घड़ी जिस दिन जाएगी,
जिस दिन गीगा आपणै बाबा के घर जावैगा
बाबा कै घर जावै, दादी हँस-हँस लाड़ लड़ावैगी
पैराँ मैं पैंजणियाँ लाला छिम्मक छिम्मक डोलैगा
हाथ मैं झुँझणियाँ लाला रुणझुण रुणझुण खेलैगा
हाथ में कटोरी लाला गाँ का दूध पीवैगा।"

★

आवश्यक सूचना

बाल-भारती का मई १९५६ का अङ्क 'बुद्ध-स्मृति अंक' होगा। प्रति वर्ष की भाँति जून १९५६ में बाल-भारती का वार्षिकाङ्क प्रकाशित होगा जो 'पशु-पक्षी अंक' होगा।

—संपादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वेद-शिक्षा

अतुलानन्द चक्रवर्ती

आज हमारे देश में अशोक को सभी लोग जानते हैं। हर जगह राष्ट्रीय झंडे पर उसका फहराता हुआ चक्र और कपड़ों पर छपे हुए उसके शेर दृष्टिगोचर होते हैं। स्वतन्त्र भारत अशोक की शक्तियों और उसकी पवित्रता को पाने के लिए उत्सुक हैं। भारत माँ अशोक की स्मृति में उसके अभाव को अनुभव करके बेचैन है।

जिस प्रकार आज भारत का सम्बन्ध अशोक से है, उसी प्रकार अशोक का सम्बन्ध अपने पूर्वजों से था। महात्मा बुद्ध के समान अशोक भी प्रजा को पुत्रवत् मानता था। उनके ही समान वह भी आर्य-पथ का अनुगामी था।

भारतीय शिक्षा का मूल स्रोत वेद हैं। अशोक के पितामह और पिता वेदोक्त देवताओं के उपासक थे। अतः यह देवश्रद्धा तथा राज्य अशोक को उत्तराधिकार में मिले थे। इसीलिए वह अपने आपको 'देवप्रिय' कहा करता था। बौद्ध धर्मानुयायी किसी देवता की उपासना नहीं करते। गौतम बुद्ध का कहना तो केवल यह था कि मनुष्य को स्वयं अच्छा होना चाहिए और दूसरों की भलाई करनी चाहिए।

कलिंग युद्ध ने अशोक के जीवन में महान् परिवर्तन कर दिया। भीष्म पितामह ने जिस शान्ति का उपदेश महाराज युधिष्ठिर को दिया था उसी शान्ति के लिए अशोक ने आशापूर्ण दृष्टि से बुद्ध की ओर देखा।

अशोक के विषय में भली भाँति जानने के लिए उसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को जानना आवश्यक है। अशोक के ऊपर वैदिक और बौद्ध धर्म दोनों का प्रभाव था।

राज्यारूढ़ होने के कुछ ही समय बाद अशोक ने बौद्ध धर्म स्वीकार कर लिया था। बौद्ध धर्म और वैदिक धर्म में थोड़ा-सा अन्तर है। परन्तु प्रश्न यह है कि बौद्ध धर्म में वैदिक धर्म की अपेक्षा ऐसी क्या विशेषता है जिसके कारण अशोक ने उसे महत्त्व दिया। अशोक और तत्कालीन परिस्थितियों को समझने के लिए हमें पिछले इतिहास के पन्ने उलटने पड़ेंगे।

इन सब बातों को जानने के लिए अनेक प्राचीन कहानियाँ प्रचलित हैं। सभ्यता के आदि युग में लोग केवल कहानियाँ सुनाया करते थे। अतः हमारा प्राचीन इतिहास केवल उन्हीं कहानियों पर आधारित है जिनकी सत्यता के प्रमाण मौजूद हैं। लेकिन कठिनाई तो यह है कि न कहानी कहने वाला और न कहानी सुनने वाला इन प्रमाणों की चिन्ता करता है। एक ही कहानी के बारे में इसीलिए विद्वानों के भिन्न मत होते हैं। मैं तुमको केवल एक रूपरेखा भर बता देना चाहता हूँ। जब तुम लोग स्वयं इसका अध्ययन करोगे तब इस बारे में विस्तार से समझ सकोगे।

इतिहास, तिथियों, नाम और घटनाओं के आधार पर ही बनता है। परन्तु हमारे प्राचीन इतिहास की कोई भी बात निश्चित नहीं है। उदाहरणार्थ हम आज निश्चयपूर्वक यह नहीं जानते कि हम जिस अशोक की बात कर रहे हैं उसका असली नाम अशोक ही था। उसने अपने जिस नाम का उल्लेख किया है वह है 'देवानाम् प्रिय अशोक'। वह स्वयं को 'मगधराज प्रियदर्शी' भी कहा करता था। वह प्रियदर्शी उसका असली नाम था अथवा उसकी उपाधि थी, इसका भी कोई निश्चित प्रमाण नहीं मिलता। जब हमें इस महान् राजा के नाम का ही निश्चय नहीं तो महात्मा बुद्ध के समय से भी पूर्व प्रचलित आख्यानों के बारे में क्या कह सकते हैं?

यह सब कहना सचमुच ही बड़ा सन्दिग्ध होगा कि किन राजाओं के नेतृत्व में और किन तिथियों में वैदिक आर्यों ने अपने पुराने निवास-स्थान को छोड़ कर किस क्रम से भारत के किन स्थानों पर अपना प्रभुत्व जमाया। हमारे इतिहास का मुख्य स्रोत वेद हैं और दुर्भाग्य से स्वयं वेदों के बारे में हमें प्रायः नहीं के बराबर मालूम है।

वेदों के निर्माता स्वभाव से कवि थे, और कवि कभी इतिहास-लेखकों की तरह नहीं लिखा करते। कवि बात को सीधा न कह कर कथानक में गूँथ कर कहता है। जब सरल ग्रामीण कहानियाँ सुनाते हैं तो वे अपने जीवन की यथार्थ घटनाओं का ही उल्लेख करते हैं और उन्हीं कहानियों में यदि हम जीवन की यथार्थता का सूत्र खोज सकें तो कुछ-कुछ इतिहास का पता लगता है। उदाहरणार्थ महाभारत युद्ध की तिथि को हम चाहे कितना ही इधर-उधर कर लें परन्तु इतना असंदिग्ध है कि प्राचीन काल में इस प्रकार का एक युद्ध अवश्य हुआ था जिसमें अनेक शूरवीर मारे गए थे और वर्षों तक भारत को कोई योग्य शासक नहीं मिल पाया था।

उसी प्रकार तुम लोगों को वेद किसने, कब और क्यों बनाए, यह बताने की अपेक्षा यह बताना कहीं अधिक सहज है कि हमारे वैदिक पूर्वजों के विचार किस प्रकार के थे। क्योंकि हमारे पूर्वजों के यही विचार वेदों के पृष्ठों पर बिखरे पड़े हैं। परन्तु स्वयं वेदों के बारे में कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं है। हमारे बुद्धिमान पूर्वज इसीलिए कहा करते थे कि वेदों को देवताओं ने कवियों के माध्यम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से बनाया है और मनुष्य को उनके स्रष्टा और स्रोत के बारे में कुछ भी ज्ञात नहीं है।

वेदों में एक कथा है जिसमें सृष्टि-निर्माण के पूर्व का चित्र खींचा गया है। यह वर्णन अत्यन्त सुन्दर है और अन्त में कहा गया है कि सृष्टि-निर्माण के रहस्य को कोई नहीं जानता। यहाँ तक कि स्वयं ब्रह्मा जानता है, इसमें भी सन्देह है।

सृष्टि-निर्माण का रहस्य अभी तक अज्ञात है और उसी प्रकार मनुष्य-मनुष्य के बीच का सम्बन्ध भी गुप्त है। तुम सबने यू० एन० ओ० अर्थात् संयुक्त राष्ट्र संगठन का नाम सुना होगा। मनुष्य का मनुष्य को समझने का यह सबसे बड़ा प्रयत्न है। हमारे प्राचीन पूर्वज भी इसके लिए सदैव प्रयत्नशील रहे परन्तु सरल हृदय होने के कारण उन्होंने यह कभी नहीं कहा कि उनकी बात ठीक है, शेष सब लोगों की गलत। गलती होने पर उनको पश्चात्ताप होता था और वह निष्कपट होकर क्षमा माँग लेते थे।

आज के ही समान संगठन की आवश्यकता सदैव से रही है। मुट्ठी भर आर्य जब अनार्यों के दलों से घिर गए तो स्वभावतः ही उन्होंने अपने दल में एकता की कामना की। उन्होंने उन लोगों से भी सन्धि करनी चाही जो उनके पहले इस देश में आकर बस गए थे। खुद जिन्दा रहना और दूसरों को रहने देना यही सब लोग चाहते थे। परन्तु जैसा कि तुम सब जानते हो, जिन्दा रहने की कला एक कठिनतम कला है। आज इतनी उन्नति होते हुए भी विश्व में अशान्ति का बोलबाला है। कोई आश्चर्य नहीं कि हमारे पूर्वज भी सफल कम और असफल अधिक हुए हैं। यही क्या कम है कि उनको संगठन का महत्त्व ज्ञात था। वह कहा करते थे कि यदि हम संगठित होकर विचार करेंगे तो हमारी एकता बनी रहेगी। वह जानते थे कि फूट में बड़ी शक्ति होती है और इसीलिए वह उससे जी-जान से बचने की कोशिश करते थे।

तुम कहोगे, या कम से कम तुमने दूसरों को कहते सुना होगा कि जिन मनुष्यों ने इतने देवताओं का सृजन किया है वह एक राष्ट्र की स्थापना कैसे कर सकते हैं। तुमको मालूम होना चाहिए कि हमारे पूर्वजों ने न कभी देवताओं का विभाजन किया और न मनुष्यों का। उनका कहना था कि भगवान् एक है और सब मनुष्यों का जन्म उस परम पुरुष के विभिन्न अंगों से हुआ है। परन्तु किन्हीं भी दो मनुष्यों का शरीर, बुद्धि अथवा व्यवहार कभी भी समान नहीं होता। केवल मनुष्यता के ही नाते सब मनुष्य समान हैं और गुणों के कारण एक-दूसरे से भिन्न हैं। इसीलिए उस परम पुरुष को वह लोग निर्गुण कहा करते थे।

हम लोग कहते हैं कि हमारे पूर्वजों ने भगवान् के बनाये हुए मनुष्यों को जातियों में विभाजित कर दिया। ठीक होते हुए भी यह एकदम सच नहीं है क्योंकि जातियों का श्रीगणेश वेद के उत्तरकाल में हुआ था। इसे आरम्भ हुए कम से कम तीन हजार वर्ष अवश्य हो गये होंगे। इसलिये ऐसा मालूम होता है कि यह जाति-भेद सभ्यता के आदि-काल से चला आ रहा है। परन्तु एक समय था जब जाति-भेद का नामोनिशान भी नहीं था। समय के साथ-साथ जनसंख्या बढ़ी और काम भी बढ़ा। नवीन आवश्यकतायें पूरी करने और व्यर्थ के मनमुटाव को दूर करने के लिये हमारे विद्वान ऋषियों ने सम्पूर्ण मनुष्य-वर्ग को काम के अनुसार जातियों में बाँट दिया।

इस विभाजन के आरम्भ में किसी प्रकार की कटुता नहीं थी। उपनिषदों में स्पष्ट उल्लेख है कि ब्राह्मण गुरु ईश्वर को जानने के लिये क्षत्रिय राजाओं के पास आया करते थे। तुम कह सकते हो कि ब्राह्मण चतुर थे और राजाओं की चाटुकारी कर उनसे गाय, पृथ्वी और वन आदि पाने के लिये ऐसा किया करते थे। लेकिन यह सच नहीं है। खैर छोड़ो यह समय इस बहस में पड़ने का नहीं है। मैं इस बारे में तुम्हें केवल एक बात बताऊँगा। क्या तुम गायत्री मंत्र के बारे में जानते हो? यह वेदों का सबसे प्रमुख मन्त्र है। परन्तु इसका निर्माता कौन है? विश्वामित्र। और विश्वामित्र कौन था? एक राजा, न कि ब्राह्मण। इस प्रकार ब्राह्मणों ने क्षत्रियों के मन्त्रों को इतना ऊँचा स्थान देने में कभी आपत्ति नहीं की।

शायद तुम्हें अभी भी सन्तोष न हुआ हो और तुम कहो कि ब्राह्मण और क्षत्रियों में अधिक दूरी नहीं थी। असली निश्चय तो शूद्रों के साथ व्यवहार से होगा। मैं तुम्हें सिर्फ एक उदाहरण दूँगा। तुम जानते हो कि वेद के दो भाग होते हैं—एक मन्त्र, और दूसरा ब्राह्मण—जिसमें मन्त्रोच्चारण के संकेत दिये रहते हैं। एक ही वस्तु के दो भाग होने के कारण मन्त्र और ब्राह्मण का स्थान समान है। ऋग्वेद सबसे श्रेष्ठ वेद है और उसका सर्वश्रेष्ठ ब्राह्मण ऐतरेय ब्राह्मण है।

एक कहानी है कि एक ऋषि थे जिनकी दो पत्नियाँ थीं। पहली आर्य और दूसरी अनार्य। उस युग में अनेक ऋषियों की इसी प्रकार पत्नियाँ हुआ करती थीं। लड़के और लड़कियाँ यज्ञभूमि में शिक्षा पाया करते थे। एक बार जब वह ऋषि यज्ञ कर रहे थे उनकी पत्नियों ने अपने पुत्रों को शिक्षा लेने को भेजा। पिता ने आर्य पत्नी के पुत्र को बड़ी रुचिपूर्वक पढ़ाया। परन्तु शूद्र पत्नी के पुत्र की ओर कोई खास ध्यान नहीं दिया। उपेक्षित पुत्र को बड़ा दुःख हुआ और वह रोता हुआ अपनी माँ के पास आया। माता ने अपने पुत्र की शिक्षा के लिये जगत-माता पृथ्वी से प्रार्थना की। पृथ्वी ने प्रगट होकर उस बालक का उत्तरदायित्व ले लिया। बड़ा होकर वह लड़का बड़ा विद्वान हुआ और यही वह लड़का था जिसने ऐतरेय ब्राह्मण की रचना कर संसार को यह बता दिया कि एक शूद्र जाति की स्त्री का पुत्र भी इतना होनहार हो सकता है। इस कहानी से स्पष्ट है कि योग्यता होने पर निम्न जाति का व्यक्ति भी समान आदर का अधिकारी हो सकता था। असाधारण प्रतिभा वाले व्यक्ति के सामने जात-पाँत के सारे बंधन छिन्न-भिन्न हो जाते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब तुम कहोगे कि और चाहे जो कुछ भी हो, राजनीति में तो वह पीछे ही थे। प्रकृति का भण्डार किसी भी युग में और किसी भी व्यक्ति के लिये खाली नहीं होता। उसकी सामर्थ्य का कभी अंत नहीं होता। कोई मनुष्य किसी क्षेत्र में उन्नति करता है और कोई किसी में। परन्तु फिर भी उन्नति के लिये क्षेत्र सदैव खुला रहता है। वैदिक जनता अपने राजाओं का चुनाव स्वयं करती थी। यद्यपि उनका यह चुनाव बड़े सरल ढंग से होता था। पुरोहित राजा का नाम पेश करता था और जनता उसका समर्थन कर देती थी। जनता का पूरा अधिकार रहता था। राजा के गलती करने पर वह उसे सिंहासन से हटा सकती थी। राजा का कर्तव्य था कि वह प्रजा को प्रसन्न रखे।

हमारे पूर्वज जनतंत्रात्मक विचारों के ही नहीं, बल्कि साम्यवादी विचारों के भी थे। सामाजिक सुविधाओं का सब समान रूप से उपभोग करते थे। खाने, पीने, काम करने और देव-पूजा करने की सबको समान स्वतन्त्रता थी। उनका कहना था कि अपनी क्षुधा के अनुसार मनुष्य जितना चाहे खा सकता है। परन्तु उससे अधिक लेने की चेष्टा करने वाले को समाज चोर की सजा देगा। क्या यह सारे विचार आज के आधुनिक नहीं मालूम पड़ते ?

आधुनिक वातावरण में पले हुए हम लोग धर्म पर हँसते हैं। हमारे अनुसार यही सारी बुराइयों की जड़ है। परन्तु हमारे पूर्वजों का कहना था कि हमारे पथ-भ्रष्ट शत्रु का सुधार केवल धर्म के ही द्वारा हो सकता है। उनको विचार और धर्म की पूर्ण स्वतन्त्रता थी। और तुम जानते हो कि अतलांतक चार्टर में उल्लिखित चार स्वतन्त्रताओं में यह दो अधिकार भी शामिल हैं। हमारे पूर्वज 'नमोधर्माय नमः सर्वधर्मातिरिक्ताय' के अनुसार धर्म को सर्वश्रेष्ठ महत्व देते थे। महाराज अशोक का भी यही विश्वास था।

अब तुम लोग समझ गये होगे कि वेदकालीन मनुष्यों के विचार कितने प्रगतिशील थे। दो शब्द ऐसे हैं जिनको आप प्रायः सुनते हैं। परन्तु उनका अर्थ नहीं समझते। यह दो शब्द हैं—प्रगतिवाद और गतिवाद। इन्हीं दो शब्दों से हम पश्चिम के उन्नत कहे जाने वाले लोगों का सम्मान करते हैं। हमारे पूर्व-पुरुष भी अकर्मण्य नहीं थे। महाकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर ने ऐतरेय ब्राह्मण की उस सुन्दरता का उल्लेख किया है जिससे उसमें मनुष्य को कर्मनिष्ठ रहने की ओर प्रेरित किया गया है। ऐतरेय ब्राह्मण ने लिखा है—

"राजकुमार रोहित, सुनिये, जो थकने से पहले कान बन्द नहीं करता है वह जीवन की सुन्दर वस्तुएँ—श्री—प्राप्त करता है और जो निरन्तर आगे बढ़ता रहता है इन्द्र उसका साथी बन जाता है। जो एक ही स्थान पर ठहरकर आगे बढ़ने की चेष्टा नहीं करता वह अपने सारे गुणों को भी खो बैठता है।

"जो व्यक्ति आगे बढ़ना चाहता है उसके शरीर में फूलों का सौंदर्य आ जाता है और आत्मा पूर्ण विकसित हो जाती है। सत्य के मार्ग पर अनवरत चलते रहने से उसके अपराध थक कर स्वयं उसका साथ छोड़ देते है।

"जो एक जगह बैठा रहता है उसका भाग्य भी आगे नहीं बढ़ता है। और जो उठता है उसकी तकदीर भी उसका साथ देती है।

"जब तुम सोते हो वही कलिकाल है, जब जागते हो तो वही द्वापर है। जब उठते हो तो त्रेतायुग का प्रादुर्भाव होता है और आगे बढ़ने का ही नाम सत्ययुग है।

"पथ पर अग्रसर होना अमरत्व है। आगे बढ़ना स्वयं अमृत है। ऊपर देखो सृष्टि के आदि-काल से सूर्यदेव ने अपनी यात्रा एक बार प्रारम्भ की है तो क्षण भर को भी कहीं विश्राम के लिये नहीं रुके हैं।"

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रसारिका

अमेरिका में हर दूसरे आदमी के पास रेडियो होता है। यूरोप में हर छठे व्यक्ति के पास रेडियो है, जबकि एशिया में हर पचासीवाँ व्यक्ति ही रेडियो रखता है। परन्तु भारत में हर दो ऐसे व्यक्तियों पर जिनके पास रेडियो है, नौ सौ अट्ठानवे ऐसे हैं जिनके पास रेडियो नहीं है। अगर आपके पास रेडियो नहीं है और जब तक आप इस कमी को दूर नहीं कर सकते, रेडियो से हिन्दी में प्रसारित होने वाली स्थायी महत्त्व की चीज़ें आप 'प्रसारिका' से प्राप्त कीजिए।

'प्रसारिका, साहित्य, कला, इतिहास, यात्रा, दर्शन, धर्म, विज्ञान, मनोविज्ञान आदि विषयों पर देश भर के प्रख्यात व्यक्तियों के चुने हुए भाषणों का संग्रह है। उच्च कोटि की बौद्धिक सामग्री के अलावा इस संग्रह में कहानी, कविता, नाटक, हास्य-रस के लेख आदि भी होते हैं। ऐसी उत्कृष्ट सामग्री सभी को सुलभ करने के लिए इस सचित्र, लगभग सौ पृष्ठ की पत्रिका का मूल्य केवल आठ आने रखा गया है।

नोट—प्रसारिका के पहले दो अंक 'रेडियो संग्रह' नाम से प्रकाशित हुए हैं।

पब्लिकेशन्स डिवीज़न
ओल्ड सेक्रेटेरियट, दिल्ली-८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्कृष्ट प्रकाशन

महात्मा गान्धी

महात्मा गान्धी की कहानी—चित्रों में

यह चित्रमय कहानी काल क्रम अनुसार है और महात्मा गान्धी के अलौकिक जीवन के महत्त्वपूर्ण अध्यायों में बँटी हुई है। यह आशा की जाती है कि इस समय तक उनके जीवन तथा कार्य-कलाप के सम्बन्ध में जो प्रचुर सामग्री एकत्र हुई है यह प्रकाशन उसका उपयुक्त चित्रमय पूरक प्रमाणित होगा।

सादा जिल्द १०) रु०
सिल्क जिल्द १५) रु०

स्वाधीनता और उसके बाद—
जवाहरलाल नेहरू के भाषण

प्रधान मंत्री नेहरू के १९४६ से १९४९ तक विशेष अवसरों पर दिए गए ६० महत्त्वपूर्ण भाषण। स्वाधीनता, महात्मा गांधी, साम्प्रदायिकता, काश्मीर, हैदराबाद, शिक्षा, उद्योग, भारत की वैदेशिक नीति, भारत और राष्ट्र मण्डल, भारत और विश्व, आदि विषयों पर। सभी दृष्टियों से संग्रहणीय और पठनीय ग्रन्थ। रु० ५)

भारत दर्शन

(चित्रों में)

भारत की कहानी दिग्दर्शित करने वाले विविध चित्रों का अनमोल संग्रह है। देश के निवासी, पशु, वनस्पति, प्राकृतिक रचना, आदि का विहंगावलोकन। भारतीय जीवन विचारधारा, परिस्थिति, प्राकृतिक दृश्य इत्यादि, विभिन्न पहलुओं का स्थलानुरूप समावेश। रु० ७॥)

भारतीय कला का सिंहावलोकन

मोहिन्जोदरो के समय से लेकर भारत के प्राचीन मध्ययुगीन तथा आधुनिक कला के ३७ रंगीन और १०० एक रंगी चित्रों का संग्रह। रु० ६॥)

भारत की एकता का निर्माण

अगस्त, १९४७ से दिसम्बर १९५० तक भारत के इतिहास के तेजस्वी काल में दिए गए सरदार वल्लभ भाई पटेल के २७ महत्त्वपूर्ण भाषण जो स्वतन्त्र भारत के निर्माण का यथार्थ प्रमाण हैं कई दुर्लभ चित्रों सहित। रु० ५)

पब्लिकेशन्स डिवीज़न,
ओल्ड सेक्रेटेरिएट, दिल्ली-८

Published by the Director, Publications Division, and Printed by the Production Officer, United Press, Government of India, Old Secretariat, Delhi.

Regd. No. D—508

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

9-7-56
पुस्तकालय गुरुकुल कांगड़ी

बाल-भारती

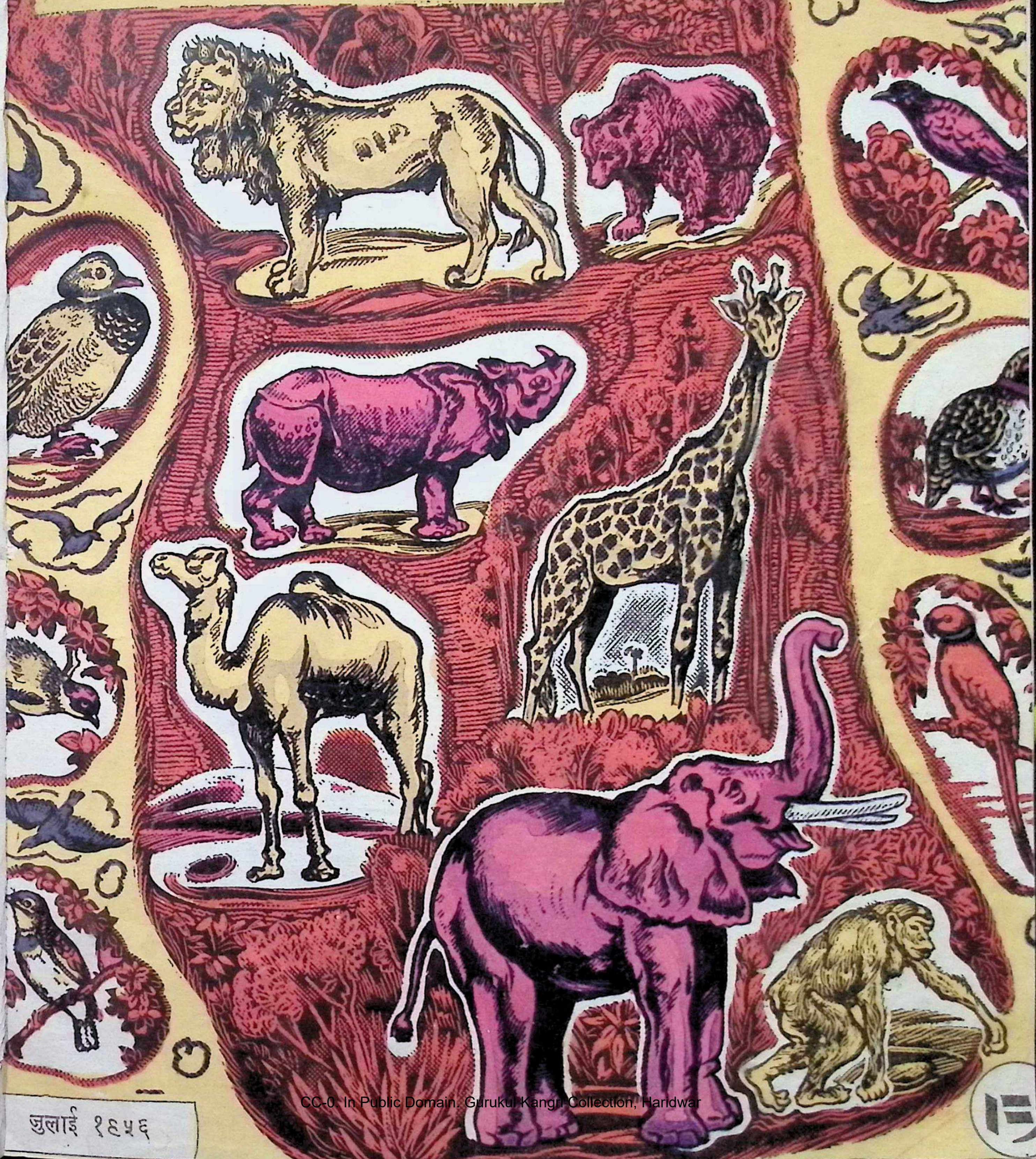

जुलाई १९५६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रसारिका

अमेरिका में हर दूसरे आदमी के पास रेडियो होता है। यूरोप में हर छठे व्यक्ति के पास रेडियो है, जबकि एशिया में हर पचासीवाँ व्यक्ति ही रेडियो रखता है। परन्तु भारत में हर दो ऐसे व्यक्तियों पर जिनके पास रेडियो है, नौ सौ अट्ठानवे ऐसे हैं जिनके पास रेडियो नहीं है। अगर आपके पास रेडियो नहीं है और जब तक आप इस कमी को दूर नहीं कर सकते, रेडियो से हिन्दी में प्रसारित होने वाली स्थायी महत्त्व की चीज़ें आप 'प्रसारिका' से प्राप्त कीजिए।

'प्रसारिका', साहित्य, कला, इतिहास, यात्रा, दर्शन, धर्म, विज्ञान, मनोविज्ञान आदि विषयों पर देश भर के प्रख्यात व्यक्तियों के चुने हुए भाषणों का संग्रह है। उच्च कोटि की बौद्धिक सामग्री के अलावा इस संग्रह में कहानी, कविता, नाटक, हास्य-रस के लेख आदि भी होते हैं। ऐसी उत्कृष्ट सामग्री सभी को सुलभ करने के लिए इस सचित्र, लगभग सौ पृष्ठ की पत्रिका का मूल्य केवल आठ आने रखा गया है।

नोट—प्रसारिका के पहले दो अंक 'रेडियो संग्रह' नाम से प्रकाशित हुए हैं।

पब्लिकेशन्स डिवीज़न

ओल्ड सेक्रेटेरियट, दिल्ली-८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

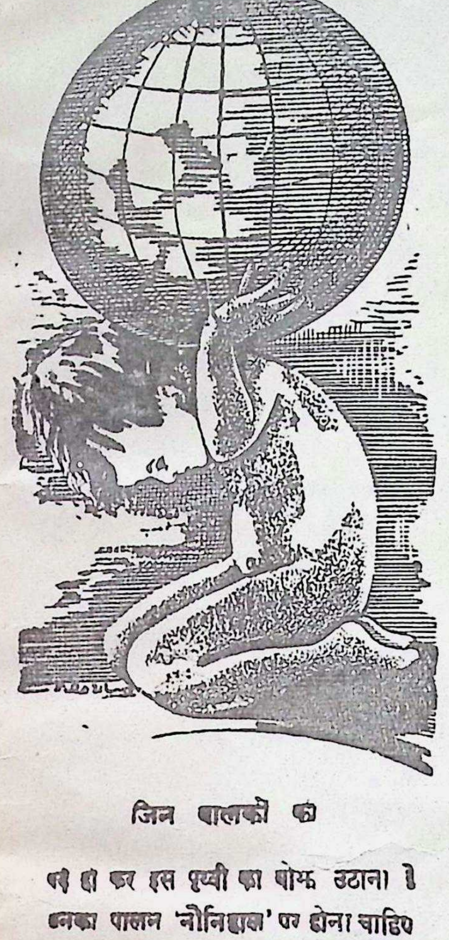

बाल भारती

संख्या २ | जुलाई १९५६ | वर्ष ९

सम्पादक
प्रयागनारायण त्रिपाठी

सहकारी सम्पादक हिन्दी विभाग

विषय-सूची

चालाक किसान	कृष्ण चन्द्र	... २
लोरी	राजेन्द्र किशोर	... ४
विचित्र न्याय	आरिग पूडि	... ५
पुरस्कार	शारदा वर्के	... ७
तीन कविताएँ	कीर्ति चौधरी	... ८
आज़ादी का अर्थ	उदयकुमार यादव	... ९
किसमें अधिक आनन्द है	श्री मनोर्जीत बसु	... १०
एकदन्ती गणेश	सावित्री देवी वर्मा	... १२
भोजाजानीय	मन्मथनाथ गुप्त	... १४
कुक्कुर जातक	दादा	... १६
बुद्धि का दुकानदार	ज्ञानेश दत्त शुक्ल	... २०
पुष्प का सन्देश	श्री आरसी प्रसाद सिंह	... २२
गुड़िया का ब्याह	राजनारायण बिसारिया	... २२
बातचीत करने का ढंग	दीनानाथ श्रीवास्तव	... २३
बुद्धिमान रूपा	कला पन्त	... २५
बौद्ध धर्म का प्रचार	प्रभा नागपाल	... २७
वर्षा के बादल	लक्ष्मी प्रसाद द्विवेदी 'चन्द्र'	... ३०
कोई रोक नहीं सकता !	आशाकान्त बी० आचार्य	... ३२

वार्षिक मूल्य—चार रुपये, १ डालर या ७ शिलिंग

एक प्रति—छः आने, १० सेंट या ८ पेंस

पब्लिकेशन्स डिवीजन, ओल्ड सेक्रेटेरियट, दिल्ली-८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चालाक किसान

कृष्ण चन्द्र

बहुत अर्सा गुजरा एक बुढ़िया थी। उसके दो बेटे थे। एक मर गया। दूसरा रोजी की तलाश में किसी दूर के देश में चला गया। बुढ़िया बेचारी अकेली रह गई।

उसके दूसरे बेटे को सफर पर गए हुए अभी तीन दिन हुए होंगे कि सिपाही बुढ़िया के पास आया और कहने लगा, "दादी अम्माँ, बहुत दूर से आया हूँ, रात बसर करने के लिए थोड़ी-सी जगह दे दो। कहीं पड़ा रहूँगा।"

"आओ बेटा, आओ", बुढ़िया बोली, "कहो कहाँ से आ रहे हो?"

"मैं?—मैं तो दूसरे जहाँ से आ रहा हूँ", सिपाही ने कहा। बूढ़ी माँ एक दम खुश हो गई। उसकी बलाएँ लेती हुई बोली, "अरे जरा देखूँ तो, तुम भी वहीं से आ रहे हो जहाँ मेरा प्यारा बेटा मर के गया है—दूसरे जहाँ में! भला बताओ, तुमने कहीं मेरे बेटे को वहाँ देखा था?"

"देखा था", सिपाही ने गुर्रा के कहा, "अजी वह और मैं तो एक ही कमरे में रहते थे दूसरे जहाँ में।"

"खुदा तुम्हारा भला करे, वह आजकल क्या काम करता है?"

"दादी माँ, वह आजकल शुतुर्मुर्ग चराता है। जैसे लोग यहाँ भेड़ें चराते हैं।"

"बहुत कठिन काम सौंपा है उन लोगों ने मेरे बेटे को", बुढ़िया हाथ मलते हुए बोली।

सिपाही ने बड़ा-सा मुँह बनाते हुए कहा, "तुम जानती हो शुतुर्मुर्ग कोई भेड़ें थोड़ी हैं कि जिधर चाहे हाँक लो चलती जाएँगी। वह तो बहुत तेजी से भागती हैं।"

"तो मेरा बेटा बेचारा हर समय उनके पीछे भागता रहता होगा", बुढ़िया बड़े अफसोस से बोली।

"तुम स्वयं समझ सकती हो। भागते-भागते बेचारे की बुरी हालत हो गई है। सब कपड़े फट गए हैं। उसे पहचाना नहीं जाता।"

बुढ़िया ने कहा, "सुनो, मेरे पास चालीस गज़ कपड़ा है और दस रूबल के सिक्के हैं। तुम कृपा करके इन्हें साथ लेते जाओ। मेरे बेटे को दे देना।"

"बहुत अच्छा अम्माँ।"

सिपाही ने कपड़े और रूबल ले लिए और दूसरे दिन बुढ़िया को धन्यवाद देकर चला गया।

इस घटना के कुछ दिन बाद बुढ़िया का दूसरा बेटा, जो रोजगार की तलाश में किसी दूसरे देश को गया हुआ था, वापस आ गया। आ कर उसने अपनी माता को सलाम किया।

माँ उसे गले से लगा कर बोली, "बेटा बहुत अच्छा किया तुम आ गए। तुम्हारे जाने के बाद मुझे अपने पहले बेटे की भी खबर मिल गई। दूसरी दुनियाँ से एक सिपाही आया था। वह और मेरा बेटा दोनों वहाँ एक ही कमरे में रहते हैं। मैंने उस सिपाही को ४० गज कपड़ा और दस रूबल दे दिए हैं ताकि वह जाकर मेरे मरे हुए बेटे को दे दे।"

बेटे ने सब कुछ सुनके कहा, "माँ, मैं तो यहाँ रहने के लिए आया था। मगर मैं अब जाता हूँ और उस समय तक नहीं लौटूँगा जब तक मुझे तुम से बड़ा कोई मूर्ख नहीं मिल जाएगा। खुदा हाफिज़।"

माँ बेचारी चिल्लाती ही रही। मगर लड़के ने एक न सुनी और चला गया।

चलते-चलते वह एक गाँव में पहुँचा और नम्बरदार के घर के सामने जाके रुक गया। नम्बरदार के घर के बाहर एक बकरी अपने बच्चों को दूध पिला रही थी। नौजवान किसान ने बकरी को देखा और उसके सामने घुटने टेक कर सर झुकाने लगा।

नम्बरदार की पत्नी ने अपने घर की खिड़की से उसे सर झुकाते देख लिया। उसने एक मामा को बुला के कहा, "जाओ और उस बेवकूफ किसान से पूछो कि वह हमारी दुधेल बकरी के सामने घुटने क्यों टेक रहा है?" मामा दौड़ती हुई बाहर आई और

किसान से पूछने लगी, "तुम्हें क्या हुआ है जो इस तरह हमारी बकरी को सलाम कर रहे हो?"

किसान ने कहा, "तुम्हारी तो बकरी है लेकिन रिश्ते में मेरी खाला होती है। मेरे छोटे भाई की कल शादी है। और मैं उससे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कह रहा हूँ कि अगर नम्बरदार की नेक बीबी उसे आज्ञा दे दे तो इसे एक दिन के लिए मैं शादी के दिन के लिए अपने घर ले जाऊँ। शादी के रोज़ भी अगर रिश्तेदार एकत्र न हों तो शादी का क्या मज़ा ?"

नम्बरदार की पत्नी ने जो यह क़िस्सा सुना तो मारे हँसी के लोट-पोट हो गई। बोली, "कितना बेवक़ूफ़ किसान है—बकरी को अपनी खाला समझता है और उसे अपने घर ले जाना चाहता है ! मेरा ख्याल है मैं भी उसे आज्ञा दे दूँगी। शौक से ले जाए बकरी को अपने घर। उसके खानदान वाले हँस-हँस कर उसका मज़ाक उड़ायेंगे। खूब रहेगी। री मामा ! देख, उस बकरी को अच्छे-से कपड़े पहना दे। मेरी शादी का वह पुराना जोड़ा। और हाँ, मेरा गर्म कोट भी ओढ़ा दे। ज़रा ठाठ से जाएगी, मेरी बकरी। और हाँ मेरी बग्घी भी निकाल दे। मेरी बकरी गाड़ी में बैठ के जाएगी। नम्बरदार की बकरी है कोई मज़ाक नहीं है।"

मामा ने गाड़ी निकाल दी। बकरी को अच्छे से कपड़े पहना दिये। किसान ने जल्दी से बकरी और उसके बच्चों को गाड़ी में बिठाया और घोड़े को जोर से चाबुक लगाई। गाड़ी हवा से बातें करने लगी।

नम्बरदार शिकार को गया हुआ था। जब वापस आया तो उसकी पत्नी मारे हँसी के दोहरी हुई जा रही थी। नम्बरदार ने पूछा क्या बात है ? तो बड़ी मुश्किल से अपनी हँसी रोक के बोली—"हाय रे क्या बताऊँ। अरे तुम यहाँ होते तो उस समय—जब वह किसान मेरी बकरी को झुक-झुक कर सलाम कर रहा था ! कह रहा था, तुम्हारी बकरी का रंग काला है। पर यह तो मेरी खाला है। मेरे भाई की बारात आएगी। खाला उसमें जाएगी।"

नम्बरदार ने कहा—"मैं समझ गया। तुमने बकरी और उसके बच्चे उसके हवाले कर दिये होंगे।"

"हाँ जी, तुम कैसे मेरी बात को जल्दी समझ लेते हो ? मैंने बकरी भी दी और उसे अच्छे कपड़े भी पहना दिये। और गाड़ी में सवार करा के भेज दिया शादी पर। आखिर मुझे तुम्हारी इज़्ज़त का भी तो ख्याल था।"

"क्यों नहीं, क्यों नहीं।" नम्बरदार ने सिर पीट लिया, बोला, "वह किसान कहाँ का रहने वाला था ?"

"मुझे मालूम नहीं मगर सीधा इस सड़क पर ले गया है।"

नम्बरदार घर से बाहर दौड़ा। अपने घोड़े पर सवार हुआ और किसान का पीछा करने लगा। नौजवान किसान ने भी घोड़े की टापों की आवाज सुन ली। उसने गाड़ी का रुख एक जंगल की ओर मोड़ दिया। गाड़ी को घने जंगल में छुपा दिया। और स्वयं सड़क पर आके एक ओर बैठ गया। उसने अपनी बड़ी ऊनी टोपी उतार कर जमीन पर रख ली और अपना बायाँ हाथ उसके ऊपर रख दिया।

थोड़ी देर में नम्बरदार घोड़ा दौड़ाता हुआ वहाँ से गुज़रा। उस किसान को देख कर उसने घोड़ा रोका। बोला—

"अरे बुड्ढे बच्चे ! तू ने किसी किसान को घोड़ा-गाड़ी दौड़ाते हुए देखा है ?" "जी हाँ देखा है, हजूर ! मगर उसे तो गए हुए कई घंटे हो गए"—किसान ने जवाब दिया। "किस रास्ते से गया है वह, किस तरफ ? मुझे उसे पकड़ना है।"

"उसका पकड़ना तो अब बहुत मुश्किल है।" किसान ने जवाब दिया, "वह तो बहुत समय हुआ यहाँ से चला गया। फिर यह रास्ता भी बहुत टेढ़ा है। क्या आप इस इलाके से अच्छी तरह वाकफ़ हैं सरकार ?"

नम्बरदार घोड़े से उतर पड़ा और बोला, "उस किसान को पकड़ के मेरे पास ले आओ। मैं तुम्हें इनाम दूँगा।"

किसान ने कहा, "मैं तो कहीं जा नहीं सकता।" "मेरी इस टोपी के नीचे" किसान ने अपनी ऊनी टोपी की तरफ इशारा किया—"एक बाज़ बँधा है। यह बाज़ मेरे मालिक का है।"

"मैं तुम्हारे बाज़ की रखवाली करूँगा।"

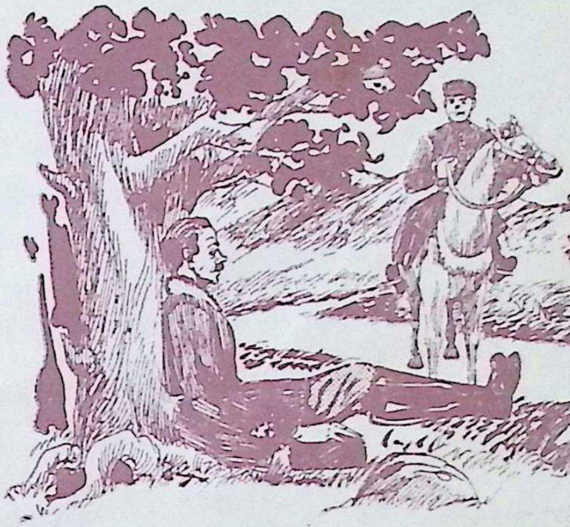

"अगर आपने टोपी को ज़रा सा भी ज़मीन से उठाया तो बाज़ उड़ जाएगा। "नहीं उठाऊँगा"—नम्बरदार ने जवाब दिया।

"आपका क्या भरोसा ? हजूर ! मैं ग़रीब किसान हूँ। यह बाज़ मेरे मालिक का है। उसने तीन सौ रूबल में खरीदा है। अगर यह बाज़ कहीं उड़ गया तो मालिक तो मुझे जान से मार डालेगा।"

"घबराओ नहीं। अगर यह बाज़ उड़ गया तो मैं उस की कीमत तुम्हें अदा कर दूँगा।"

"कहते सभी हैं करता कोई नहीं", किसान ने सर हिला के कहा, "मैं ग़रीब किसान हूँ।" "मालूम होता है" नम्बरदार ने कहा "तुम्हें मुझ पर भरोसा नहीं है। यह लो तीन सौ रूबल। अपने पास रक्खो। जब तक तुम उस किसान को पकड़ के लाते हो, मैं तुम्हारे बाज़ की रखवाली करता रहूँगा मगर जल्दी आना।

"अभी आया" किसान ने तीन सौ रूबल ले कर कहा, "कम्बख्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुझसे बच कर जायगा कहाँ ! आपका घोड़ा ले जाऊँ ? पैदल चलने में देर होगी।"

"हाँ हाँ ले जाओ।"

नौजवान ने रूबल अंटी में रखे और घोड़े पर सवार होकर जंगल में गुम हो गया। नम्बरदार उसकी ऊनी टोपी पर हाथ रखे बहुत देर तक बैठा रहा। आखिर जब कई घन्टे हो गए और वह किसान न लौटा तो उस ने घबरा कर ऊनी टोपी को जरा सा हटा कर देखा फिर बिलकुल उठा के देखा। ऊनी टोपी के नीचे कुछ न था। खाली ज़मीन थी। बाज़ नहीं था।

नम्बरदार ने सर पीट लिया। अरे यह कम्बख्त वही किसान होगा जिसने मुझे भी उल्लू बना दिया !

बहुत रात गए किसान अपनी अम्माँ के घर वापस आया और कहने लगा, "अम्माँ ! अब मैं यहाँ रहूँगा। मैंने देख लिया है। दुनिया में तुम ही सबसे बेवकूफ नहीं हो। यह देखो। उन्होंने मुझे घोड़ा गाड़ी दी है। दो घोड़े एक बकरी। दो बकरूटे। और तीन सौ रूबल नक़द। और यह सब मुफत। बिल्कुल मुफत। अब हम मज़े में रहेंगे। मेरी अच्छी अम्माँ। अब हम कभी भूखे नहीं रहेंगे।"

★

लोरी

राजेन्द्र किशोर

सोजा रे सोजा मेरे लाड़ले, देख, चंदा भी सोया दुलारा रे,

ठंडी हवा में जो सोई कली
देखते-देखते सारा जग सो गया,
सपनों के नीले हिंडोले पे चढ़ के
फूलों का राजा गया, खो गया,
सोजा रे सोजा मेरे लाड़ले, कल उसे ढूँढ लाएगा तारा रे।

झपने लगी चाँदनी की पलक
गोद में बादलों की गगन सो गया,
सो गई रात भी, जब परी की कथा
सुनते-सुनते सितारा मगन हो गया,
सोजा रे सोजा मेरे लाड़ले, ओ रे, परियों ने तुझको पुकारा रे।

झूला लगा इन्द्रधनु में अनोखा
कि झूले की मादक घड़ी आई है,
नन्हीं-सी वह तेरी परियों की रानी
तुझे ही बुलाने चली आई है,
सोजा रे सोजा मेरे लाड़ले, तेरा घोड़ा है द्वारे सँवारा रे।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विचित्र न्याय

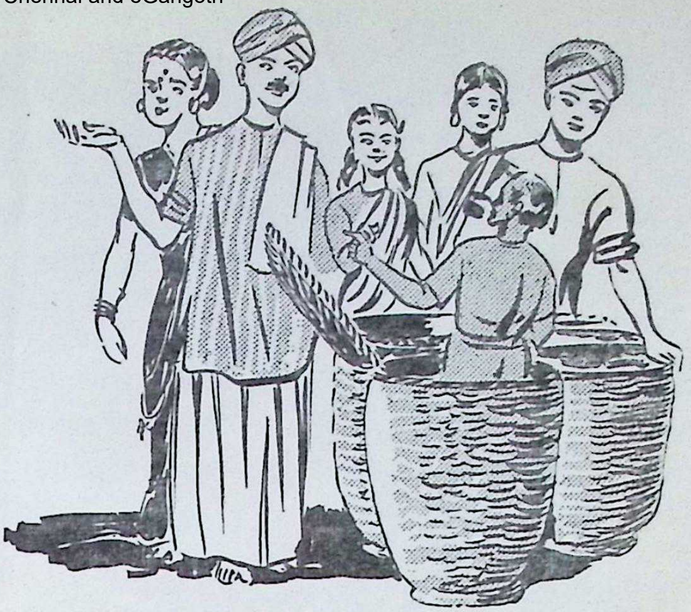

आरिग पूडि

जब हर साल फसल कटते ही गाँव वाले तीर्थ यात्रा पर जाते तो गणपति शास्त्री और उसकी पत्नी दिल मसोस कर रह जाते। वे प्रति वर्ष नए-नए तीर्थों की यात्रा करना चाहते थे पर उनके हाथ इस कदर तंग थे कि मुश्किल से गुजारा होता था।

गणपति शास्त्री का गाँव कृष्णा नदी के किनारे था। नदी किनारे एक मन्दिर था। उसकी तरह उसके पूर्वज भी उस मन्दिर में पुजारी का काम किया करते थे। यही काफी था कि उसको असमय में शिवरात्रि न करनी पड़ती थी। पर हर वर्ष वे जब दूसरों को तीर्थ पर जाते देखते तो वे अपनी गरीबी को कोसते।

गाँव समृद्ध था। किसानों की बस्ती थी। हरेक के पास कुछ न कुछ जमीन थी। जमीन बहुत उपजाऊ थी, थोड़ी मेहनत से ही गुजारे भर की आय हो जाती थी। मन्दिर के नाम भी कई एकड़ जमीन थी। यदि गणपति शास्त्री चाहता तो उसकी आय हड़प सकता था। पर वह भोला-भाला आदमी था। पराये धन को लेना चोरी समझता था।

गणपति शास्त्री बहुत श्रद्धालु था। उसका विवाह हुए कई वर्ष हो गए थे पर उसके कोई सन्तान न हुई थी। कई तीर्थ घूम आया था। कई तावीजें जमा कर ली थीं। मगर भगवान् ने उसकी इच्छा पूरी न की। वह उम्मीदें बाँधता बाँधता अधेड़ हो गया। उसको यह भय सताने लगा कि मरने के बाद उसका श्राद्ध कौन करेगा। क्या उसका वंश उसी से समाप्त हो जाएगा? पत्नी भी विना सन्तान के सुखी न थी।

शास्त्री को बाप-दादाओं की काफी जमीन मिली। पर उसने तीर्थों की यात्रा इस प्रकार की कि बहुत सी जमीन खर्च के लिए उसको बेचनी पड़ी। अब उसके नाम केवल एक एकड़ जमीन रह गई थी।

उस साल वे तीर्थ यात्रा पर न गए। लाचारी थी। पर उन्होंने निश्चय कर लिया कि अगले साल आँधी आए या ओले बरसें वे जैसे तैसे रुपये बचाकर तिरुपति हो आएँगे, और तिरुपति के बाद दक्षिण के अन्य मन्दिर भी देख आएँगे।

साल भर उन्होंने बड़ी मेहनत की। बचत की भी हद न थी। वे एक वार दिन में रूखा-सूखा खाकर रहते। अगर कहीं से दक्षिणा मिलती तो उसे भी बचाकर रख लेते। फसल कटने पर उन्होंने अपने लिए थोड़ा-सा धान रख लिया और बाकी सब बेच दिया। रो-धो कर उन्होंने तीन सौ रुपये जमा कर लिये।

तीन सौ रुपये लेकर तीर्थ यात्रा पर जाना अच्छा न था। कहीं ऐसा न हो कि वे गुम हो जाएँ और दर-दर पर भटकने की नौबत आ जाए। अगर साथ भी ले जाते तो सम्भव था कि वे सारा खर्च कर देते, और अगले साल बीज के लिए भी पैसा मिलना मुश्किल हो जाता। इसलिए उन्होंने गाँव के बनिया, वेन्कय्या के पास उन्हें हिफाजत से रखवाने की ठानी।

वेन्कय्या की गाँव में पन्सारी की दुकान थी। फसल के दिनों में चावल की आढ़त भी कर लेता था। गाँव में अगर किसी का दुमंजला मकान था तो उसी का था। काफी रईस था पर अव्वल दर्जे का कंजूस था। दान देना अपराध समझता था। अगर किसी को कर्ज देता तो दुगना-तिगुना सूद वसूल करता। मगर फिर भी लोग उस पर भरोसा करते। इसका कारण यह था कि किसान के पास कभी पैसे रहते तो कभी न रहते। वेन्कय्या के पास हमेशा रहते और जरूरत पड़ने पर जितना चाहो उतना उससे मिल सकता था।

गणपति शास्त्री ने सौ रुपये—ठनठनाते चान्दी के रुपये, एक लोटे में रखे और उस लोटे को खूब जोर से बन्द कर वह वेन्कय्या को दे आया। वेन्कय्या ने उसी के सामने लोटे को तिजोरी में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रख दिया। गणपति शास्त्री पत्नी को साथ ले और गाँव वालों के साथ निश्चिन्त हो तीर्थ यात्रा पर निकल गया।

जब वे दो महीने बाद वापिस आए तो गणपति शास्त्री की गाँठ खाली हो गई थी। पैसे की जरूरत पड़ी, वह वेन्कय्या के पास गया। वेन्कय्या ने तिजोरी खोल कर उसका बन्द लोटा उसको दे दिया। घर जाकर जब गणपति शास्त्री ने लोटा खोला तो वह काठ का सा हो गया। लोटे में रोड़े पत्थर थे, रुपये न थे।

वह दौड़ा-दौड़ा गाँव के मुखिया के पास गया। उससे शिकायत की। वेन्कय्या को बुलवाया गया। उसने कहा, "इसने मुझे लोटा दिया था, मैंने उसको लोटा वापिस कर दिया। मुझे क्या मालूम कि उसमें रुपये थे या रोड़े-पत्थर। इसी के सामने तो मैंने लोटा तिजोरी में रखा था। यह झूठी शिकायत करके मुझसे रुपये ऐंठना चाहता है।"

"मुझे झूठ बोलने की जरूरत नहीं है। मैं सच कह रहा हूँ। भगवान् की सौगन्ध, लोटे में मैंने रुपये रखे थे," गणपति शास्त्री ने कहा।

"रुपये रखे थे तो कह दिया होता। खतो—किताबत हो जाती," वेन्कय्या ने कहा।

"मुझे क्या मालूम—कि—तुम—" अभी गणपति शास्त्री कुछ कहना ही चाहता था कि वेन्कय्या ने कहा "जी, जरा जबान सम्भाल कर, ऊट पटांग कुछ न कहना, वरना—" गणपति शास्त्री घबरा गया।

मुखिया को कुछ दाल में काला नजर आया। वह गणपति शास्त्री को अच्छी तरह जानता था। वह बेचारा किताबी कीड़ा था। बहुत ही सीधा था, बच्चे भी उसे ठग लेते थे, और वेन्कय्या तो ठगों को भी ठगता था। पर वह फैसला क्या देता? कोई गवाही न थी। किसी की बात पर विश्वास न किया जा सकता था, भले ही गणपति शास्त्री सीधा, गौ आदमी हो। वह पशोपेश में था। उसने कहा, "कल आना, फैसला कर दूँगा।"

मुखिया के एक लड़की थी। वह बहुत होशियार थी। बड़ों के भी कान काटती थी। कठिन से कठिन समस्या भी सुलझा देती थी। मुखिया अक्सर उसकी मदद लेता। उसने उसको गणपति शास्त्री और वेन्कय्या का झगड़ा भी सुनाया। उसने कहा, "पिता जी, बेफिक्र रहिए। मैं फैसला कल दे दूँगी।"

अगले दिन निश्चित समय पर गणपति शास्त्री और वेन्कय्या अपनी-अपनी पत्नी के साथ फैसला सुनने के लिए आए। उनकी पत्नियाँ भी स्वयं अपने कानों से फैसला सुनना चाहती थीं।

मुखिया की लड़की ने आँगन में चार बड़े-बड़े टोकरे रखवाये और उन चारों से कहा कि वे टोकरे उठाकर मन्दिर तक होकर आएँ। मन्दिर मुखिया के मकान से लगभग आधा मील दूर था। टोकरे बहुत भारी थे। वे उठा नहीं पा रहे थे। वेन्कय्या की तो बुरी हालत हो गई। मोटा शरीर था। भारी तोंद थी। जल्दी हाँफ जाता था। उसकी पत्नी भी कम मोटी न थी। वह तो रोने लगी। उसने धीमे से कहा, "सौ रुपये की ही तो बात थी। ब्राह्मण का पैसा था। तुम न मारते तब भी क्या होता? यह मुसीबत तो न आती।"

"रुपया रुपया है, अगर उसके लिए मील भर टोकरे उठाने पड़ गए तो क्या हो गया? पैसा आसानी से थोड़े ही आता है? पसीना बहाना होता है," वेन्कय्या ने कहा।

"तुम स्वयं बहा लेते। मैं भी अच्छी पगली हूँ कि साथ चली आई!" पत्नी ने सिसकते हुए कहा।

इधर गणपति शास्त्री भी लड़खड़ाता जाता था। दुबला-पतला शरीर था। कभी बोझ उठाया नहीं था। मुश्किल से पैर पड़ रहे थे। उस की पत्नी ने एक जगह सुस्ताना भी चाहा, पर टोकरी नीचे रखती तो कोई उठाने वाला न था। "तीर्थ यात्रा भी हो आए, और यह कष्ट न टले। आपने इस कम्बख्त के पास ही क्यों रुपये रखवाये थे? कोई और न मिला?" गणपति शास्त्री की पत्नी ने कहा।

"रईस है। मुझे क्या मालूम था कि सो रुपये के लिए इतनी बेईमानी करेगा? भगवान् सब जानते हैं, यह अपने किये का जरूर फल भुगतेगा। पर फैसला देने का यह क्या विचित्र तरीका है?" गणपति शास्त्री ने कहा।

रो-धोकर चारों ने मुखिया के मकान से मन्दिर तक और मन्दिर से मकान तक बड़े टोकरे ढोये। इतने में सारा गाँव मुखिया के यहाँ जमा हो गया। ज्यों ही चारों ने टोकरे नीचे रखे तो उनमें से चार लड़के हाथ में कागज का टुकड़ा लेकर बाहर निकले। उन चारों ने जो कुछ कहा था, उन्होंने नोट कर लिया था। मुखिया ने वह पढ़ा और एकत्रित लोगों को सुनाया भी। अब फैसला देने की जरूरत नहीं थी। फैसला साफ था। सारा गाँव वेन्कय्या को गाली देने लगा। मगर वह चिकना घड़ा था। उसको नीचे मुँह किये जाते देख मुखिया की लड़की खम्बे के सहारे खड़ी होकर खिल-खिला कर हँस रही थी।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुरस्कार

शारदा बर्के

एक बार भारतवर्ष में महाभयंकर अकाल पड़ा। उस समय किसी गाँव के बालक-बालिकाओं ने एक धनिक के घर जाकर उससे भोजन की याचना की। धनिक बोला—"कल से मैं प्रत्येक बालक-बालिका को प्रतिदिन एक-एक रोटी दिया करूँगा।"

तदनुसार धनिक के नौकर ने रोटियों से भरी हुई एक टोकरी निश्चित समय पर घर के आँगन में ला रखी। बालक-बालिकाएँ भी अपनी-अपनी रोटी लेने के लिए वहाँ पर आ पहुँचे। प्रत्येक बालक अपने लिये बड़ी से बड़ी रोटी लेने का इच्छुक था। अतः रोटियाँ लेते समय उनमें काफी झगड़ा होना भी स्वाभाविक था।

किन्तु एक पितृहीन अल्पवयस्का बालिका ने उस झगड़े में भाग नहीं लिया। वह चुपचाप समझदारी के साथ प्रतीक्षा करती हुई खड़ी रही। इस प्रकार जब सभी बालक-बालिका अपनी-अपनी रोटियाँ ले चुके, तब वह उस टोकरी के पास पहुँची। उस समय टोकरी में केवल एक रोटी बची थी और वह भी सब से छोटी।

दूसरे दिन फिर से जब बालक-बालिकाएँ रोटियाँ लेने के लिये पहुँचे, तो पुनः उसी प्रकार उनमें झगड़ा हुआ। उस अल्पवयस्का बालिका ने पुनः उसी प्रकार चुपचाप प्रतीक्षा करते हुए सब से बाद में रोटी ली, जो कि पहले जैसी ही सब से छोटी निकली। बालिका पहले दिन की ही भाँति उस रोटी को अपनी विधवा माँ के पास ले आई।

किन्तु जब उसकी माँ ने उस रोटी के टुकड़े किये, तो उसमें से दो रुपये निकल कर नीचे गिरे। यह देख उसकी माँ बोली—"इसमें अवश्य ही कुछ न कुछ भूल होनी चाहिए। अतः यह रुपये उस धनिक को लौटा दिए जाएँ। हमें दूसरों का ऐसा धन कदापि नहीं लेना चाहिए।"

इस विचार के साथ वह धनिक के पास पहुँची और उसे सारी बात बतलाते हुए वे रुपये लौटाने लगी। किन्तु धनिक ने रुपये वापस नहीं लिये। वह बोला—"इसमें कुछ भी भूल नहीं हुई है। रोटियाँ बनाते समय, मेरे नौकर ने मेरी ही आज्ञा से सब से छोटी रोटी के अन्दर यह रुपये रखे थे। अतएव यह रुपये तुम्हारी बालिका की समझदारी का पुरस्कार है और तुम उसको आनन्द के साथ स्वीकार करो। साथ ही मैं तुम्हारी अल्पवयस्का किन्तु समझदार बालिका पर जितना प्रसन्न हूँ, उतना ही तुम्हारी

ईमानदारी पर भी। इसलिए मैं तुम्हें अपने भोजन-गृह की प्रमुख बनाता हूँ। कल से रोटियाँ बाँटने का काम भी तुम्हीं किया करो।"

यह सुनकर गरीब विधवा माँ तथा उसकी बालिका को बड़ा आनन्द हुआ। उनके सारे दुःख दूर हो गए।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाह

काश कि होती मैं अलमारी !
पगड़ी वह जो ढीली-ढाली,
अम्मा की धोती बंगाली,
कोट-पैंट, धोती, नेकटाई,
जगह मुझी में जाती पाई,
चीज न फिरती मारी-मारी,
काश कि होती मैं अलमारी !

काश कि होती मोटरकार !
भाभी रोज सिनेमा जातीं,
दीदी कालेज रोज घुमातीं,
चाचा जी मित्रों के साथ,
सदा फिरा करते फुटपाथ,
सभी घूमते ले बाजार,
काश कि होती ! मोटरकार

काश कि होती एक इकन्नी !
दादी जी ले पान चबातीं,
अम्मा रसगुल्ला मँगवातीं,
चोरी-चोरी छोटा भैया—
खाता कम्पट, मीठी लैया,
गोलक में रखती ले मुन्नी,
काश कि होती एक इकन्नी !

काश कि होती एक इमरती !
हलवाई के हाथों पकती,
मुन्नी मुँह बाये ही तकती,
मीठी-मीठी, रस से पूरी,
पैसे से कम होती दूरी,
जो भी पाती मुँह में धरती !
काश कि होती एक इमरती !

तीन कविताएँ

कीर्ति चौधरी

गीत

लाल सूरज ढला, गिरे किरनों के बान
खेल छोड़ें, चलो उठे गीतों की तान
लाल सूरज ढला
खेल कूद दिन भर मन भाया
पढ़ना लिखना कुछ न सुहाया
छुई-छुवौवल, आती-पाती
मिलकर खेलें सँग सँगाती
लाल सूरज ढला, करो घर को प्रयाण
गिरे किरनों के बान
रूठे, मने, हँसे औ रोये
बैर भाव उपजा कर खोये
जल-से निर्मल हृदय हमारे
स्नेह-प्रेम के हम मतवारे
लाल सूरज ढला, करें कामों का ध्यान
छिपे झरनों के बान
लाल सूरज ढला

गीत

बच्चो, समय कभी मत खोना।

है अनमोल यहाँ पल, छिन भी
रातें और काम के दिन भी
कभी न हाथ पड़े यों धोना
बच्चो, समय कभी मत खोना ।

जो कुछ मिले समय पर लेना
लालच से सब खो मत देना
तुमको पड़े न लज्जित होना
बच्चो, समय कभी मत खोना।

अपनी इच्छा पर दृढ़ रहना
पक्की बात सदा ही कहना
जिससे पड़े न लज्जित होना
बच्चो, समय कभी मत खोना ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

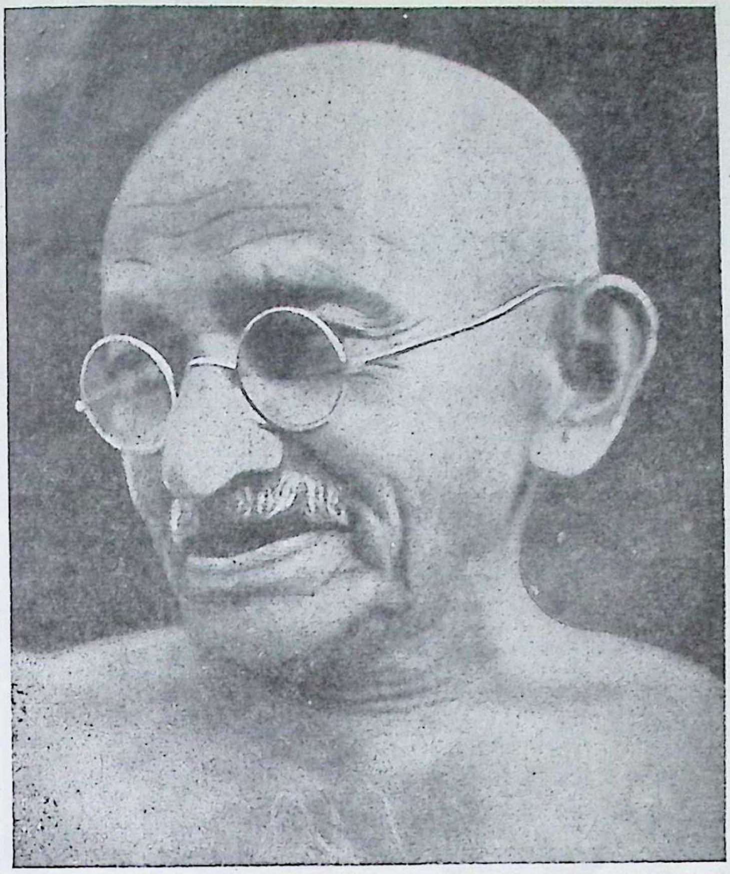

आज़ादी का अर्थ

उदयकुमार यादव

१५ अगस्त १९५९ को भारत को आज़ादी प्राप्त किये नौ वर्ष हो जाएँगे। सदियों की दासता के पश्चात हमने आज़ादी तो हासिल करली परन्तु आज़ादी का वास्तविक अर्थ क्या है? आज़ादी का अर्थ है स्वतंत्रता और स्वतंत्रता का अर्थ है देश के नागरिकों पर अनावश्यक बन्धन का न होना। यह आज़ादी का एक मोटा अर्थ हो गया। जहाँ स्वतंत्रता होती है वहाँ अधिकतर प्रजातंत्र की स्थापना होती है। जहाँ प्रजातंत्र की स्थापना होती है वहाँ राज्य की ओर से नागरिकों को कुछ अधिकार दिए जाते हैं और उसके बदले में नागरिकों को कुछ कर्त्तव्य करने होते हैं। जैसे हमें सड़क पर चलने और गाड़ी चलाने का अधिकार है, वैसे ही हमारा यह कर्त्तव्य भी है कि हम अपनी गाड़ी पर नियन्त्रण रखें और कोई भी सड़क पर ऐसी असावधानी न करे जिससे किसी भी प्रकार की दुर्घटना की आशंका हो। हमें सड़क पर चलने का अधिकार है किन्तु यह अधिकार नहीं है कि हम अपने को आज़ाद समझकर मनमाने ढंग से चलें। मनमाने ढंग से चलना आज़ादी का गलत अर्थ है और गलत अर्थ लगाने से हमें उसका दुष्परिणाम भी भुगतना पड़ता है। आज़ादी का वास्तविक अर्थ है अधिकार और कर्त्तव्यों का समुचित पालन करना।

सड़क पर चलने वालों को सड़क पर चलने के नियमों का पालन करना चाहिए। जो पैदल चलने वाले हैं उन्हें फुटपाथ पर चलना चाहिए। फुटपाथ न हो तो सड़क के किनारे चलना चाहिए। सड़क को समकोण से पार करना चाहिए और सड़क पार करते समय सड़क के दोनों ओर देख लेना चाहिए। सड़क पर दौड़ना नहीं चाहिए। सड़क पर यकायक ठहरना अच्छा नहीं होता। किसी से धक्का-मुकी न करनी चाहिए। महिलाओं, निर्बलों, वृद्धों तथा बच्चों के प्रति शिष्टता दिखानी चाहिए। सड़क पर केला आदि वस्तुएँ नहीं फेंकनी चाहिए जिससे किसी के गिरने का भय हो। सड़क पर शान्ति से चलना चाहिए। अंधेरा होने पर साइकिल की बत्ती जला लेनी चाहिए। पुलिसमैन के इशारे के अनुसार कार्य करना चाहिए। हमें ध्यान रखना चाहिए कि 'बाँईं ओर चलो' यह सड़क का सुनहरी नियम है। यदि हम इन बातों का ध्यान रखें तो कोई नहीं कह सकता कि हम आज़ादी का अर्थ नहीं जानते। अपने अधिकारों और कर्त्तव्यों के प्रति सजग रहना आज़ादी का सच्चा अर्थ है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसमें अधिक आनन्द है ?

मूल लेखक—श्री मनोजीत वसु

अनुवादक—चन्द्रिकाप्रसाद शर्मा

आरती दौड़ती हुई माँ के पास पहुँची। माँ उस समय बरामदे में बैठी एक पुस्तक पढ़ रही थी। गले से लिपट कर आरती ने माँ से कहा, "जानती हो माँ, हम लोगों के गाँव में इस बार क्या आया है ?" हाथ की पुस्तक बगल में रखती हुई माँ ने बड़े स्नेह से पूछा—"क्या आया है रे ?"

"वाह, तुम कुछ जानती ही नहीं, कलकत्ते से एक भारी सिनेमा कम्पनी आई है। हम लोगों के यहाँ के थिएटर घर को ही उन्होंने भाड़े पर लिया है। आज से ही सिनेमा का खेल शुरू होगा। क्या तुम्हें कुछ भी मालूम नहीं ?" इतनी बातें एक साथ कह कर आरती ने दम लिया।

आश्चर्य प्रकट करती हुई माँ ने पूछा, "अरे तुमसे यह किसने कहा ?"

"अभी अभी मैं उस मुहल्ले से आ रही हूँ माँ, वहाँ पर तृप्ति का बड़ा भाई बातें कर रह था। वहीं से सुन कर आई हूँ। वे लोग तो आज ही सिनेमा देखने जाएंगे, क्या हम लोग नहीं चलेंगे ?" आशा भरी निगाह से आरती माँ की ओर देखने लगी।

इसी समय शिवू भी आ उपस्थित हुआ। शिवू आरती का बड़ा भाई है, आगे पीछे के दोनों भाई बहन हैं। दोनों में बात-बात में झगड़ा और बात-बात में मेल होता रहता है। दोनों ही माँ-बाप के बड़े प्यारे हैं। आते ही शिवू ने आरती से पूछा, "पाजी कहीं की, क्या जानती हो हमारे गाँव में इस बार क्या आया है ?"

"बस, बस, रहने दो, भारी खबर ले के आये हो, तुमसे बहुत पहले से जानती हूँ। सोचा कह कर आरती पर रोब जमा लेंगे, क्यों, मैंने माँ को पहले ही आकर खबर दे दी है।" आरती को बेजवाब करने की गरज से शिवू ने पूछा—"अच्छा बहुत जानने वाली हो, बताओ न आज से कौन-सा खेल शुरू होगा ?"

आरती इस बार मुश्किल में पड़ गई। तृप्ति के भाई से यह बात तो सुन कर आई नहीं थी, क्या जवाब दे ? किन्तु आरती क्या शिवू से हार मान जाएगी ? इस तरह की वह लड़की नहीं है। ऐसा भाव दिखाती हुई कि वह सब कुछ जानती है, बोली, "ऊँह, मैं नहीं जानती, जानती तो हूँ पर क्यों बताऊँ ?" "खाक जानती हो, जानोगी तभी न बताओगी।" शिवू ने हँसते हुए कहा। शिवू की बात सुन कर आरती गुस्से में आकर बोली, "अच्छा मैं नहीं जानती, तुम्हीं बताओ तो जानूँ।"

"क्यों बताऊँ ?"

"तुम भी खाक जानते हो, जानोगे तभी तो बताओगे," ऐसा कह कर आरती खिलखिला कर हँस पड़ी।

इसी तरह दोनों में सवाल जवाब चल रहा था कि माँ ने कहा—"तुम लोग आपस में इसी तरह झगड़ते ही रहोगे कि कुछ बताओगे भी। जो जानता हो वही बतावे भई, मैं तो कुछ नहीं जानती।"

शिवू माँ के नजदीक आकर बैठ गया और कहने लगा—"देखो माँ, तुम्हारी यह लड़की आरती आजकल भारी दुष्ट बनती जा रही है, जानती कुछ नहीं फिर भी कहेगी सब कुछ जानती हूँ। और तुम उसको डांटती भी नहीं।"

माँ ने हँस कर जवाब दिया, "अच्छा डाटूँगी, अब बताओ क्या खेल शुरू होगा ?"

माँ का आग्रह देख कर शिवू ने कहा—"तुमको खूब अच्छा लगेगा, माँ, चण्डीदास का खेल शुरू होने जा रहा है। अन्ध गायक किष्टो बाबू ने उसमें सुन्दर गान गाया है। क्या तुम नहीं जाओगी माँ ?"

माँ के कुछ कहने के पहले ही आरती बोल उठी—"क्यों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं जायगी, एक सौ बार जायगी। क्या माँ ने कभी सिनेमा देखा है कि नहीं जायगी ?" "देखो माँ यह बोलने वाला सिनेमा है इसकी हर तस्वीर को गाना गाते, हँसते, बातचीत करते सुना जाता है। बाइस्कोप की तरह तस्वीर भी देखो और ग्रामोफोन की तरह गाना भी सुनो, ओह, क्या मजा आता है !"

आरती की ओर देखते हुए शिबू ने कहा, "जानती हो आरती थियेटर घर के सामने ऐसी भीड़ है मानो रथयात्रा का मेला लगा है। इस गाँव में तो कभी सिनेमा आया नहीं इसीलिए सभी ने अपने बाल-बच्चे, नाती-पोते आदि को लेकर आना शुरू कर दिया है। यही नहीं—पास-पड़ोस के गाँव के लोग भी जिन्हें खबर मिली है, आने लगे हैं। बड़ी भारी भीड़ लग गई है। आरती, तुम क्या देखने चलोगी ?"

स्नेह भरे शब्दों में माँ ने पूछा, "क्या अभी जाओगे, सिनेमा क्या दिन में होता है ?" इस बात पर भाई-बहन दोनों हँस पड़े, शिबू ने पहले जवाब दिया, "नहीं माँ, खेल शाम को शुरू होगा। आरती को ले जा रहा हूँ भीड़ दिखाने के लिए, साथ ही टिकट भी खरीदता आऊँगा। पहले टिकट खरीद लेने से बैठने की अच्छी जगह मिल जाती है।"

आरती आनन्द के मारे नाच उठी, कहने लगी—"भैया, जरा ठहर जाओ, अभी कपड़े बदल कर आई। सिर्फ एक मिनट—" यह कहती हुई आरती घर के भीतर दौड़ गई। माँ ने भी बक्स से रुपया निकाल कर शिबू के हाथ में दे दिया।

शिबू आज बड़ा प्रसन्न है। बहुत दिनों के बाद आज वह सिनेमा देखने जायगा। बहुत दिन पहले वह एक बार अपने पिता के साथ कलकत्ते में सिनेमा देखने गया था। आरती भी उस समय साथ थी। यह बहुत दिनों की बात है। उस समय की बातें अच्छी तरह याद-सी नहीं। इसीलिए गाँव में सिनेमा आया देख कर उसकी खुशी का वारा-पार नहीं।

आरती को आने में देर होते देख शिबू गला फाड़ कर चिल्ला उठा—"ओ आरती, क्या कपड़े बदल लिए ? तुमको तो लेकर कोई काम करना मुश्किल है, जल्दी आओ।"

एक क्षण के बाद ही आरती आ पहुँची। दोनों भाई-बहन चल पड़े। थियेटर घर कुछ दूर पड़ता था। थोड़ी दूर जाने पर उन्होंने रास्ते पर पुल के नजदीक एक लड़के-लड़की को खड़ा देखा। फटे-पुराने चीथड़े वे पहने हुए थे। सिर में तो महीनों से शायद एक बूंद तेल भी नहीं पड़ा था। उनके सारे शरीर से गरीबी फूटती दिखाई पड़ रही थी। "बाबू एक पैसा"—कह कर लड़के ने बड़े कातर भाव से शिबू की ओर देखा।

"बहन हम लोग बहुत गरीब हैं" कहती हुई लड़की बड़े दीन भाव से आरती की ओर देखने लगी।

शिबू ने पाकेट में हाथ डाला पर एक पैसा भी नहीं था। था केवल टिकट खरीदने का रुपया। आरती को लेकर वह आगे बढ़ चला।

थोड़ी दूर जाने पर आरती ने कहा—"भैया, तुमने उन्हें कुछ दिया नहीं ? वे बड़े गरीब मालूम पड़ते थे।"

"समझता हूँ, पर मेरे पास एक धेला भी नहीं था। पास रहने पर क्या नहीं दे देता ? टिकट खरीदने का रुपया ही सिर्फ मेरे पास है।" शिबू ने जवाब दिया।

आरती का मन दुःखित हो गया। भारी मुँह बना कर आरती ने जवाब दिया, "नहीं भैया आज सिनेमा जाना नहीं हो सकेगा। चलो हम लोग लौट चलें। शायद उनसे फिर मुलाकात हो जाय। उनकी हालत को देख कर मुझे बड़ा दुःख हो रहा है।"

दोनों भाई बहन पीछे की ओर लौटे। पुल के नजदीक भिखारी लड़का लड़की उस समय भी खड़े मिले। आरती ने पूछा—"क्या आज तुम लोगों को कुछ मिला है ?"

"नहीं बहिन, सवेरे से हम लोग घूम रहे हैं, अभी तक एक धेला भी नहीं मिला। जिससे मांगता हूँ मुँह फिरा लेता है। कल से हम लोगों ने कुछ भी नहीं खाया है।" कातर स्वर से लड़के ने आरती और शिबू की ओर देखते हुए कहा।

आरती और शिबू उन दोनों को एक पूड़ी की दूकान पर ले गये और पेट भर खाने को दिया। आरती को इसमें बहुत अधिक आनन्द मिला। जब वे खा रहे थे चुपके से उसने शिबू के कान में कहा—"देखते हो भैया, ये कैसे खा रहे हैं ?" शिबू ने जवाब दिया, "कल से इन्होंने कुछ भी नहीं खाया था।"

उन्हें पेट भर खिला कर शिबू ने बाकी पैसे उनके हाथ पर दे दिए। वे तो अवाक् रह गये। ऐसी दया, ऐसा प्यार तो उन्हें कभी नहीं मिला था। जाते समय वे शिबू और आरती की जयकार करने लगे। आरती को इसमें बड़ा आनन्द मालूम हुआ। शिबू को भी बड़ी प्रसन्नता हुई। इसके बाद वे घर को लौट आये।

माँ ने पूछा—"क्यों रे, टिकट मिला—? कब के गये अब लौट रहे हो। देखूँ तो टिकट कहाँ है ?" आरती ने कहा "माँ, आज तो टिकट नहीं खरीदा जा सका है। माँ हम लोगों की ही तरह दो भाई बहन रास्ते में भीख माँग रहे थे। उन्हें अब तक कुछ नहीं मिला था, वे बहुत गरीब थे। उन्हें हम लोगों ने पेट भर खिला दिया। जानती हो मां उन्हें कितनी भूख लगी थी ? उनकी हालत देख कर बड़ा दुःख होता था। इसीलिये माँ उन्हें बिना खिलाये नहीं रह सकी। सिनेमा देखने में जितना आनन्द मिलता उससे कहीं अधिक आनन्द उन्हें खिला देने में मिला। क्यों भैया ?"

शिबू ने हँसते हुए जवाब दिया—"हाँ माँ आरती ठीक कह रही है।"

आनन्द के मारे माँ का दिल भर आया। दोनों हाथों से पकड़ कर उसने आरती और शिबू को गले से लगा लिया। बच्चों को दुलारते हुए माँ ने कहा—मेरे लाल, तुम लोगों ने बहुत ठीक किया है। ऐसा ही करना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एकदन्ती गणेश

सावित्री देवी वर्मा

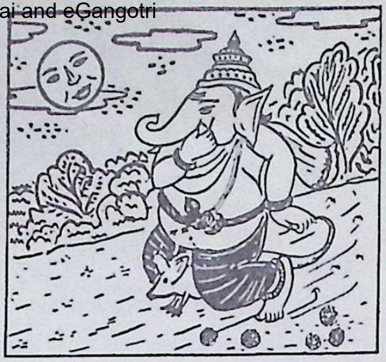

राजा इन्द्र असुरों पर विजय पाकर अपनी राजधानी को लौटे थे, इसीलिए इन्द्र-लोक में चारों ओर उत्सव मनाया जा रहा था। स्वर्ग-लोक के सब देवता इन्द्र को बधाई देने इकट्ठे हुए थे। शाम को देवताओं के स्वागत में इन्द्राणी ने बहुत बड़ा प्रीति-भोज दिया था।

जब सब देवता भोजन-गृह में अपने-अपने आसन पर विराज गये और सब ने खाना शुरू कर दिया तो इन्द्राणी घूम-घूम कर सबको श्रीखंड परोसने लगीं। इन्द्राणी ने देखा—और सब देवता तो आपस में परिहास और बातचीत करते हुए खा रहे हैं, पर पेटू गणेश जी थाली में सिर गड़ाये, अपनी मोटी-मोटी उँगलियों से बड़े-बड़े कौर सान कर खाने में ही जुटे हुए हैं। प्रत्येक चक्कर में परोसने वाले उनकी पत्तल भर कर जाते हैं और उनके लौटते तक ही वह फिर खाली हो जाती है। इन्द्राणी को खिलाने-पिलाने का बड़ा शौक था। गणेश जी को इस चाव से खाते देख कर इन्द्राणी को बड़ा आनन्द हुआ। वह उनकी पत्तल के पास ही एक पीढ़ा खींच कर पंखा लेकर बैठ गईं और उन्हें खुद ही मिष्टान परोसने लगीं। गणेश जी को इससे बड़ा सन्तोष हुआ। वह प्रशंसा करके और तेजी के साथ भोजन निगलने लगे। डकार ले-लेकर गणेश जी ने इतना भोजन खाया कि उनका पेट फूल कर कुप्पा हो गया। अन्त में लड्डू परोसे गये। गणेश जी मोदक-प्रिय तो हैं ही। अन्य सब देवताओं ने केवल दो-दो, चार-चार लड्डू लिये पर गणेश जी ने अपने सामने लड्डुओं की परात ही धरवा ली और लगे घप्प-घप्प करके लड्डू निगलने। सब देवता उनके खाने के इस विचित्र ढंग को देखकर मुँह दबा-दबा कर हँसने लगे। और जब गणेश जी ने ठूँस-ठूँस कर लड्डू पेट में भरने शुरू किये और उनका पेट गुब्बारे की तरह फूलने लगा तो देवताओं की हँसी रुकनी कठिन हो गई। पर हँस कैसे सकते थे! गणेश जी उन सबके पूज्य जो थे। कहीं नाराज हो जाते तो फिर खैर नहीं थी। जब लड्डुओं की परात खाली हो गई तो गणेश जी ने सिर उठा कर देखा कि केवल वह ही खा रहे हैं, जबकि अन्य देवताओं ने तो सौंफ-सुपारी और पान के बीड़े भी चबा लिये और जाने की तैयारी में हैं। सबके वाहन अपने-अपने स्वामी को ले जाने के लिए दरवाजे पर कसे-कसाये तैयार खड़े हैं।

गणेश जी के पास तो कोई वाहन था नहीं। ऊपर से इतना भोजन ठूँस लेने के बाद उनके लिए अब चलना दूभर हो गया। इतने में उन्होंने देखा कि बड़ी-बड़ी मूँछों और लम्बी-सी पूँछ वाला एक मूषकराज (चूहों का राजा) भोजनालय में थालियों के आस-पास जो कुछ मिठाई का चूरा गिरा पड़ा था उसे खाता हुआ इधर-उधर दौड़ रहा है। जब वह सूँघता हुआ लड्डुओं की परात के पास आया तो गणेश जी ने लपक कर उसकी पूँछ पकड़ कर अपनी ओर उसे घसीट लिया और बोले, "मूषकराज, आज से तुम मेरी सवारी हो।"

मूषकराज ने हाथ जोड़ कर गिड़गिड़ाते हुए कहा, "महाराज, दया करो, मैं जरा-सा जीव हूँ और भगवान की कृपा से आप भारी डील-डौल के हैं। भला मैं आपका बोझ कैसे सँभाल सकता हूँ?"

गणेश जी ने चूहे पर सवार होते हुए कहा, "मूषकराज, घबड़ाने की कोई बात नहीं। क्या तुम नहीं जानते कि मेरा नाम गणेश है। मैं गणना करके अपना बोझ इस प्रकार से तुम्हारी पीठ पर सन्तुलित (बैलेंस) करूँगा कि तुम्हें भारी नहीं लगेगा।"

और सचमुच में मूषकराज पर सवार होकर गणेश जी खुटर-खुटर करते हुए चल दिये। सब देवता यह चमत्कार देख कर हैरान रह गये। चूहा गणेश जी की तोंद के नीचे दिखाई भी न पड़ता था और रास के बदले गणेश जी ने चूहे की दुम पकड़ी हुई थी।

चूहा अपने स्वभाव के अनुसार ऊबड़-खाबड़ रास्ते में से होकर गणेश जी को ले चला। रास्ते में जब धचके आते तो गणेश जी को लड्डू पेट में लुढ़कते प्रतीत होते। इससे उनका पेट कभी दाईं ओर को झूल जाता, कभी बाईं ओर को और कभी सामने को। गणेश जी लड्डुओं को ठीक-ठिकाने रखने के लिए पेट पर हाथ फेरते, डकार लेते, पर लड्डुओं ने पेट में गड़बड़ मचानी नहीं छोड़ी।

उस दिन पूनम की रात थी, जंगल और पहाड़ों पर दूधिया चाँदनी छाई हुई थी। एक पहाड़ी के पीछे से चंदा मामा गणेश जी के बिगड़े हुए हुलिए को देख कर मुसकरा रहे थे।

इतने में चूहे को कुछ शैतानी सूझी। वह ऊँची जगह से एक दम से नीचे कूदा। जोर का धचका लगने पर गणेश जी का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पेट गुब्बारे की तरह आवाज़ करके एक ओर को थोड़ा-सा फट गया। बस, उनके पेट में से लड्डू निकल कर रास्ते में बिखरने शुरू हो गये।

भला मोदक-प्रिय गणेश अपने प्रिय लड्डूओं को इस प्रकार बिखरना किस प्रकार सह सकते थे? उन्होंने फटी जगह पर चट से हथेली रख दी। पर लड्डूओं के जोर के मारे पेट चिरता ही जा रहा था। गणेश जी ने इधर-उधर नजर दौड़ाई, एक काला लम्बा साँप चूहे के लोभ में उनकी ओर ही आ रहा था। गणेश जी ने उसका फन झट से अपनी मुट्ठी में पकड़ कर अपने पेट पर साँप को पट्टी की तरह बाँध लिया। पेट दब गया और लड्डू गिरने से बच गये। साँप को देख कर चूहा डर कर थोड़ा चीं-चीं करने लगा तो गणेश जी ने उसे थपथपाते हुए हौसला दिया, "मूषकराज, डरो मत, इन साँपों से तो मैं छुटपन में खेलता रहा हूँ। मेरे पिता महादेव के तो बदन में ये लिपटे रहते हैं। मेरे होते हुए तुम्हारा यह कुछ नहीं बिगाड़ सकते।"

आश्वासन पाकर चूहा फिर ठुमक-ठुमक चलने लगा। पेट कस जाने से गणेश जी को अड़चन महसूस होने लगी थी, कभी वह दाईं करवट बैठते, कभी बाईं। चन्द्रदेव अब तक आकाश में काफी ऊपर उठ आये थे। गणेश जी की अड़चन देख कर उन्हें बड़ी हँसी आई। वह ठठा कर जोर से हँस पड़े। गणेश जी ने सिर ऊपर उठाया तो चन्द्रमा की व्यंगपूर्ण हँसी सुन कर उन्हें बड़ा गुस्सा आया। उन्होंने चन्द्र को डाँट कर कहा, "अबे चन्द्रा, तू मुझ पर हँसता है। शर्म नहीं आती?"

अबकी चन्द्रमा और भी जोर से हा! हा! करके हँस पड़ा। गणेश जी बिगड़ उठे। उन्होंने डपट कर कहा, "खबरदार जो अब के हँसा। याद रख ऐसा लप्पड़ मारूँगा कि पाँचों उँगलियाँ ऊभर आयेंगी।"

शैतान बच्चे की तरह चन्द्रमा की हँसी थमने को ही नहीं आती थी। गणेश जी को इस बुरी तरह बिगड़ते देख कर वह आँख नचा कर ताली पीट कर खी-खी करके और भी जोर से हँसने लगा। अब तो गणेश जी का पारा सातवें आसमान पर चढ़ गया। गुस्से में उनके नथने फड़कने लगे। चेहरा तमतमा आया। आँखें लाल हो गईं, गाल फूल गए। पर चन्द्रमा दूर था, उसे लप्पड़ मारते तो कैसे मारते? और कुछ हाथ नहीं लगा तो ताव में आकर गणेश जी ने अपना एक दाँत पकड़ कर इस प्रकार उखाड़ा जैसे कोई खेत में से मूली उखाड़े। और उसे चन्द्रमा की तरफ खींच कर जोर से फेंका।

कहते हैं तभी से चन्द्रमा के चेहरे पर उस चोट के दाग पड़े हुए हैं। और गणेश जी तभी से एकदन्ती अर्थात एक दाँत वाले कहलाते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भोजाजानीय

मन्मथनाथ गुप्त

वाराणसी राज्य में ब्रह्मदत्त नाम का एक राजा था। उसका भोजाजानीय नाम का एक घोड़ा था जो अच्छे कुल का था और तरह-तरह के अलंकारों से विभूषित होकर अच्छे-अच्छे भोजन करता था। राजा को अपने घोड़े पर गर्व था और सभी देश के लोग यह चाहते थे कि वाराणसी पर कब्जा हो जाए जिससे कि उनका नाम संसार में चमके और वे उस घोड़े के मालिक बनें।

एक बार ऐसा हुआ कि सात राजाओं ने मिल कर वाराणसी को घेर लिया और कहा कि या तो सिंहासन छोड़ कर चले जाओ और हमें राज्य दे दो, नहीं तो आकर लड़ाई करो।

इस पर राजा ने चिन्तित होकर अपने मन्त्रियों को बुलाया और उनसे सलाह माँगी कि अब क्या किया जाए। मन्त्रियों ने कहा—महाराज! पहले आप युद्ध के लिए न जाएँ। पहले आप अमुक नाम के घुड़सवार को लड़ाई के मैदान में भेजें, जब वह हार जाएँ तो देखा जाएगा।

राजा को यह बात पसन्द आई और राजा ने उस घुड़सवार वीर को बुला कर कहा—ऐसी-ऐसी विपत्ति आई है। तुम जाकर युद्ध करो।

उस वीर ने कहा—युद्ध करने तो मैं खाली हाथ भी जा सकता हूँ, पर यदि आप मुझे भोजाजानीय घोड़ा दें तो मैं सात राजा तो क्या, जम्बू द्वीप के राजाओं के साथ लड़ाई कर सकता हूँ।

राजा ने मन में सोचा कि यदि यह बात है कि एक घोड़े से ही मेरा काम बन जाता है और शत्रु सेना हार जाती है तो उसमें हर्ज ही क्या है? बोला—अच्छी बात है, तो चाहे जिस घोड़े को ले जाओ।

तब उस वीर ने भोजाजानीय घोड़े को मंगवा कर उस पर कवच बाँधा और स्वयं भी सब शस्त्रों से लैस होकर उस पर सवार हो गया। उसने बिजली की तरह घोड़ा दौड़ाकर पहली सेना का घेरा तोड़ दिया और उसके राजा को पकड़ लिया। फिर इसी प्रकार से उसने दूसरी सेना का घेरा तोड़ दिया और राजा को पकड़ लिया। इस प्रकार से उसने पाँच राजाओं को जिन्दा पकड़ लिया, पर छठी सेना का घेरा तोड़ कर छठे राजा को पकड़ते समय भोजाजानीय घोड़े को चोट आ गई और खून बहने लगा। जब वीर ने यह परिस्थिति देखी तो उसने भोजाजानीय को छोड़-कर दूसरे घोड़े को कसने की तैयारी की। भोजाजानीय घोड़ा बोधिसत्व थे। उन्होंने यह देखा कि यह व्यर्थ में दूसरे घोड़े को कस रहा है, न तो इससे आगे कोई घेरा टूटेगा और न कोई राजा पकड़ में आएगा। इस प्रकार मेरा किया कराया सब काम नष्ट हो जाएगा। यह भी मौत के घाट उतार दिया जाएगा। नतीजा यह होगा कि वाराणसी का राज्य भी दूसरे के हाथों में चला जाएगा। बात यह है कि मेरे अलावा कोई घोड़ा सातों सेना के घेरे को तोड़ कर सातवें राजा को पकड़ नहीं सकता।

यह सोच कर बोधिसत्व ने उस घुड़सवार वीर को बुलाया और कहा—मित्र, यह व्यर्थ की बात न करो। मेरे अलावा यह किसी घोड़े के बूते के बाहर है कि वह घेरे को तोड़ कर राजा को कैद करे। मैं अपने किए कराए को नष्ट होने न दूँगा। इसलिए तुम मुझे ही कस लो और फिर मैं अपना काम करूँगा।

तब घुड़सवार ने भोजाजानीय के जख्मों को बाँधा और फिर उस पर सवारी की। सातवीं सेना हरा दी गई और सातों राजा कैद कर वाराणसी के राजा के सामने ले जाए गए। तब बोधिसत्व ने राजा से कहा—महाराज, अब तो आपकी जीत हो गई। अब आप इन राजाओं को न मारें। आप धर्म आचरण करें। शत्रुओं को क्षमा करने में ही बड़ाई है।

राजा ने उपदेश मान लिया और राजाओं को क्षमा कर दिया। बाद को भगवान् बुद्ध ने बताया कि वाराणसी का राजा आनन्द था, घुड़सवार सारिपुत्त थे और भोजाजानीय वे स्वयं थे।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोगों की भीड़ उत्सुकता से तोतों का सरकस देख रही है। पास ही उपयोग में लाई गई चीजें रखी हुई हैं

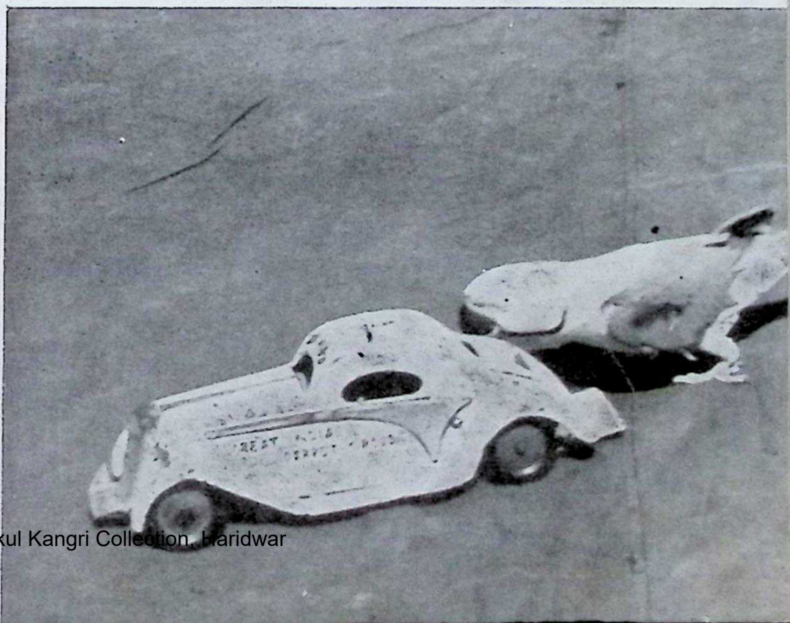

तोताराम ड्राइवर अपनी मोटर में चाबी भर रहा है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

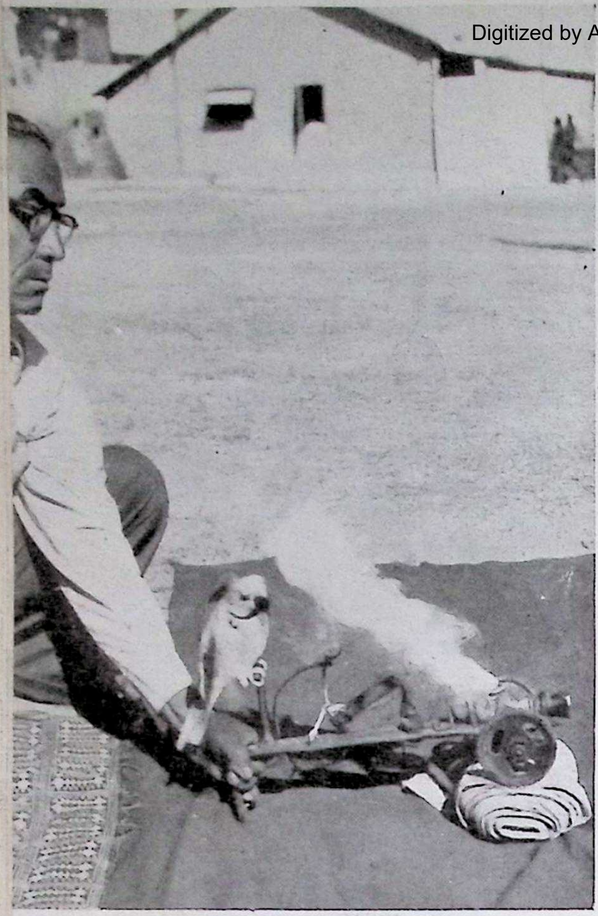

पन्ना तोता—"मैं वीर सिपाही हूँ—मेरा निशाना अचूक है।"

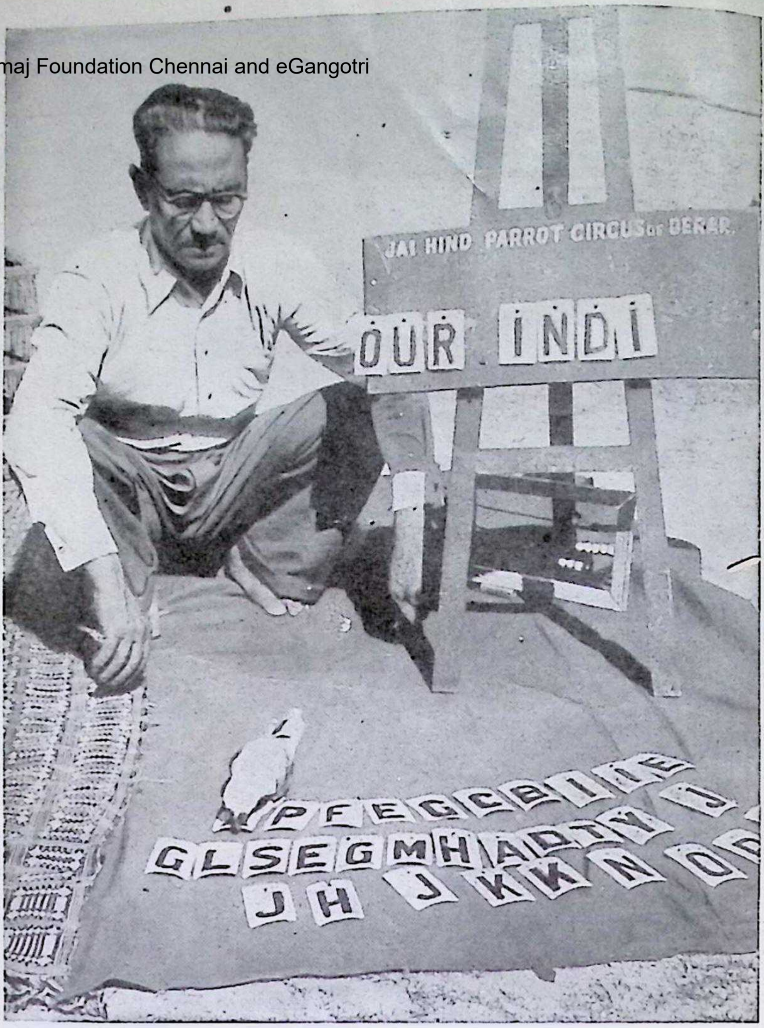

मुन्नू तोता—"मैं सही हिज्जे करता हूँ।"

तोतों द्वारा दिखाये

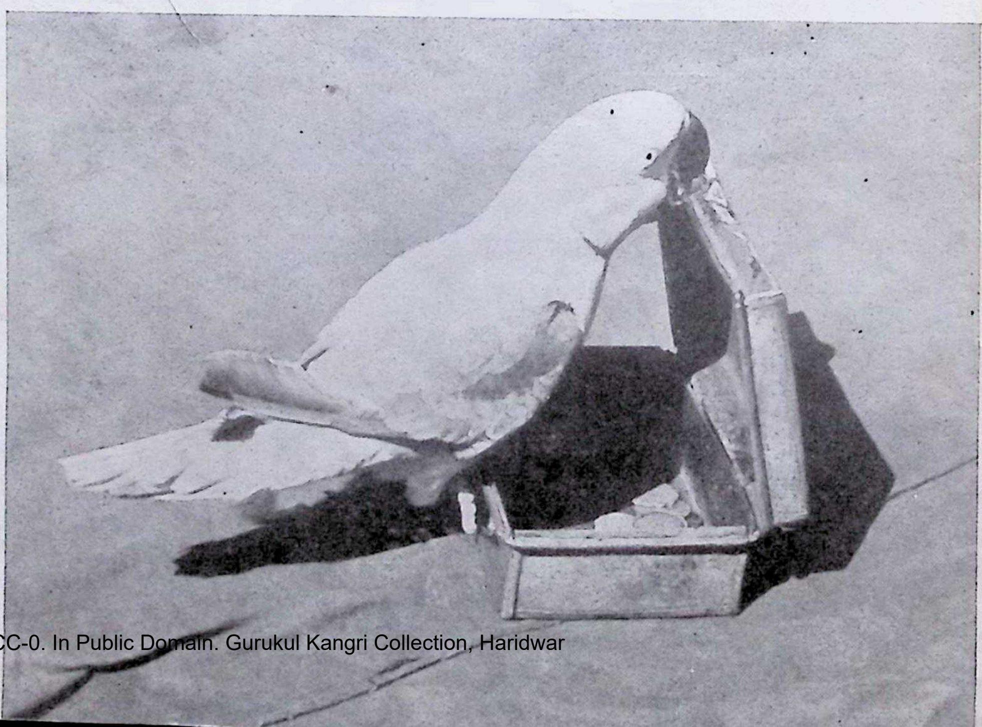

पन्ना की माँ—"यह मेरे राजा बेटा का कैश बक्स है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"पढ़ूँगा लिखूँगा
बनूँगा होशियार।"

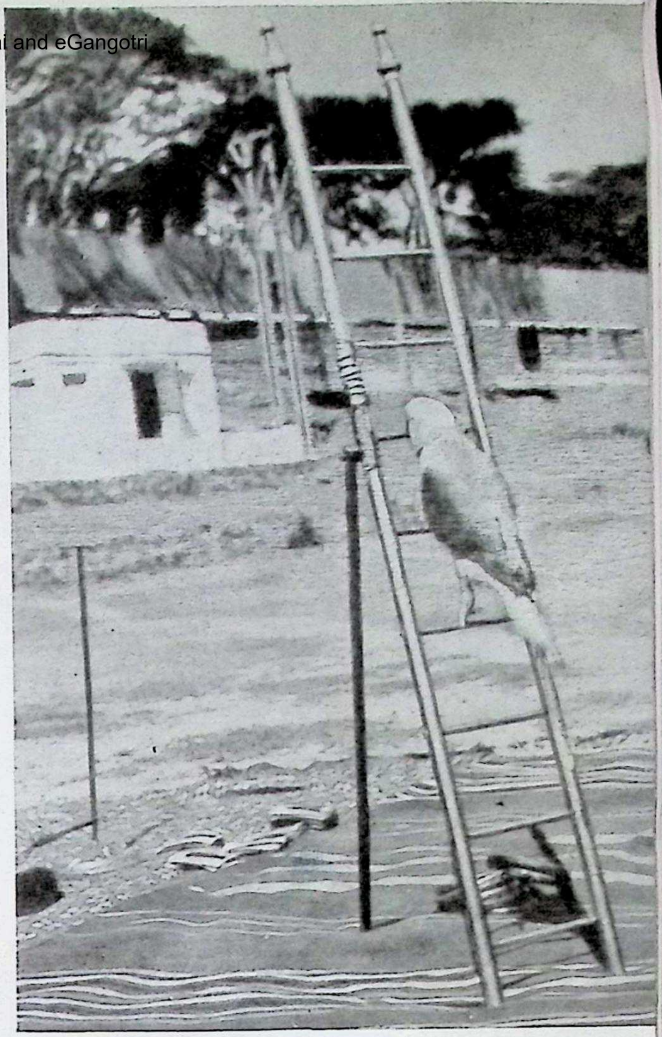

"चढ़ जा बेटा सीढ़ी पर,
राम भला करेगा।"

दिखाये गये चमत्कार

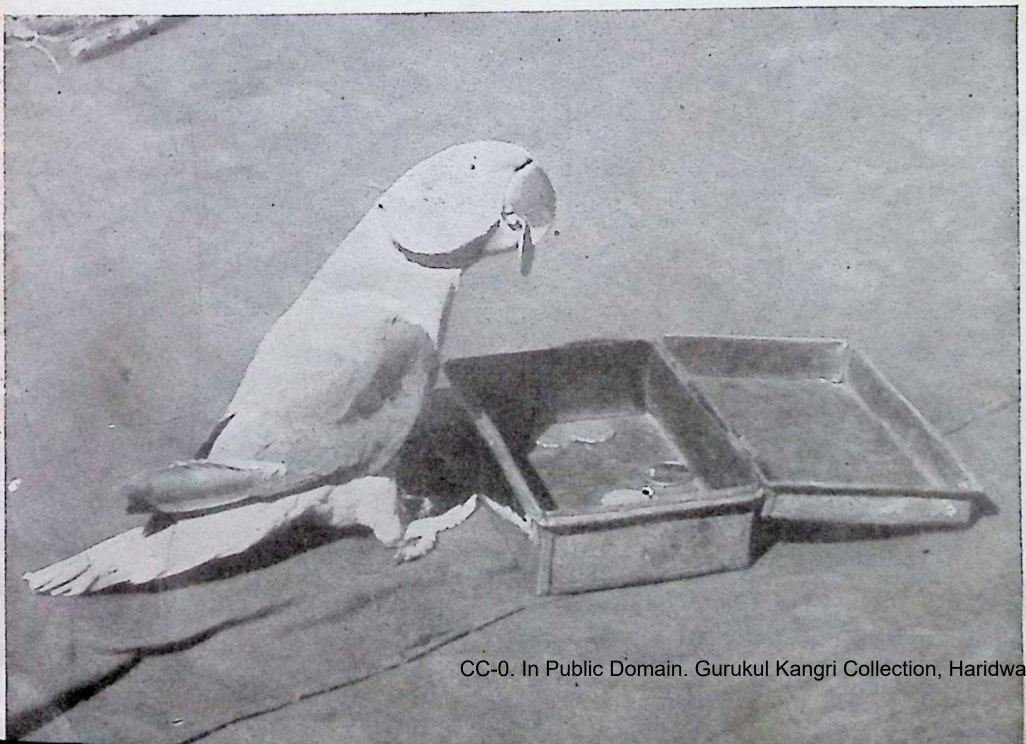

"अच्छी अम्मा !
एक पैसा ले लूँ ?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

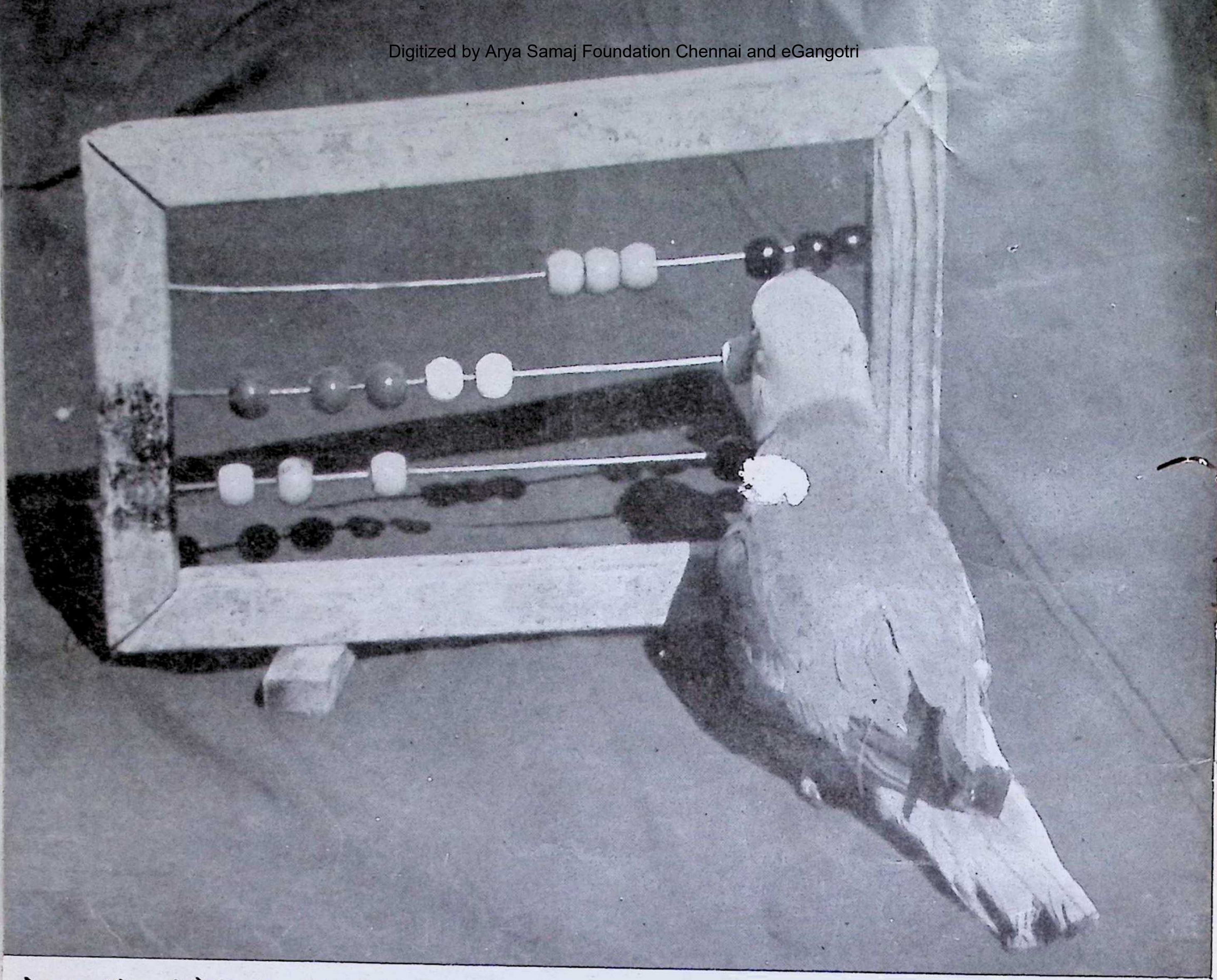

तोताराम—"देख लो मैं गिनती गिनने में भूल कभी नहीं करता।"

तोती—"मैं कौन खाली बैठी हूँ। सारा गेहूँ पीस कर ही उठूँगी।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुक्कुर जातक

दादा

बहुत पुराने युग की बात है। उस समय बोधिसत्व कुत्ते के रूप में पैदा हुए थे। वे बहुत से अन्य कुत्तों के साथ महाश्मशान में रहते थे। राजमहल में ऐसी घटना हुई की एक दिन राजा अपने रथ पर सवार होकर निकले तो दिन भर खेलने के बाद जब सूर्यास्त हुआ तो वे नगर में लौटे। वे इतने थके हुए थे कि उन्होंने रथ को कसा-कसाया आँगन में छोड़ दिया। रात को पानी बरसा और रथ भीग गया। पानी में भीगने के कारण रथ का चमड़े वाला हिस्सा कुछ गँधाने लगा, इससे महल के कुत्तों ने उन चमड़े और चमड़े की रस्सियों को खा डाला।

यह खबर राजा को पहुँचाई गई। राजा सुन कर आग बबूला हो गए और उन्होंने क्रोध में आकर यह हुक्म दिया—''जहाँ जो भी कुत्ता मिले, उसे फौरन मार डालो।''

इससे कुत्तों पर बड़ी भारी विपत्ति आई। बहुत से कुत्ते जब मारे जा चुके, तब कुत्तों ने सलाह करके बोधिसत्व के पास अपनी बात कहने का निश्चय किया। सब कुत्तों को इकट्ठे आते देखकर बोधिसत्व ने पूछा—''तुम लोग आज इस तरह हड़बड़ाकर मेरे पास क्यों आए हो?''

उन लोगों ने उत्तर दिया—''अजीब बात है कि महल के कुत्तों ने राजा के रथ के चमड़े और चमड़े की रस्सियाँ खा डालीं, पर उनसे यह बताया गया कि महल से बाहर के कुत्तों ने आकर चमड़ा और रस्सियाँ खा डालीं, इसलिए राजा ने नाराज होकर कुत्तों को मारने की आज्ञा दी है।''

यह सुनकर बोधिसत्व सोच-विचार में पड़ गए और उन्होंने मन ही मन सोचा कि जो चोर है वह तो मजा कर रहा है और जो चोर नहीं है, वह मारा जा रहा है। यह कोई अच्छी बात नहीं है। क्यों न मैं राजा को यह बता दूँ कि चोर कौन है और इस प्रकार से अपनी जाति को निश्चित विनाश से बचा लूँ? यह सोच कर बोधिसत्व ने कुत्तों से कहा—''तुम लोग यहीं पर रहो। मैं राजा से मिलने के लिए जाता हूँ। आशा है कि कोई नतीजा निकलेगा।''

यद्यपि वे कुत्ते बने हुए थे पर थे तो वे बोधिसत्व। इसलिए उन्होंने ऐसा चमत्कार किया कि रास्ते में उन्हें देखकर भी किसी ने उनको छेड़ा नहीं। वे राजा के दरबार में पहुँच कर सिंहासन के नीचे चले गए। तब चारों तरफ से लोग दौड़ पड़े और 'पकड़ो-पकड़ो', 'मारो-मारो' की आवाज होने लगी। राजा ने सब लोगों को रोक दिया कि देखो तो क्या बात है, फिर मारना। तब बोधिसत्व सिंहासन के नीचे से निकल कर राजा को प्रणाम करते हुए बोले—''राजन्! आपने यह जो कुत्तों को मारने का हुक्म दिया है, इसका क्या कारण है?''

इस पर राजा ने कहा—''कुत्तों ने बहुत बुरी बात की। उन्होंने यह जानते हुए भी कि रथ का चमड़ा या उसकी रस्सी खाने की चीज नहीं है, खा डाली और मेरा नुकसान किया।''

इस पर बोधिसत्व ने कहा—''आपको मालूम है कि किन कुत्तों ने ऐसा काम किया?''

राजा बोला—''नहीं मुझे नहीं मालूम। इसलिए मैंने सब कुत्तों को मारने का हुक्म दिया है और यह कहा है कि जहाँ-जहाँ कुत्ते दिखाई दें, वे मार डाले जाएँ।''

बोधिसत्व ने कहा—''तो क्या आपने सभी कुत्तों के मारे जाने का हुक्म दिया है या कुछ कुत्ते इस हुक्म से बाहर भी हैं?''

राजा ने कहा—''हमारे महल के कुत्ते इस हुक्म से बाहर हैं।''

तब बोधिसत्व ने कहा—''आपने जो बात की है, वह राजा के उपयुक्त नहीं है। यह राजधर्म नहीं है। आपको पता लगाकर तभी कुत्तों को मारना चाहिए। क्योंकि आपके अनजान में शायद हो यह रहा है कि जो कुत्ते दोषी हैं वे तो बचे हुए हैं और जो दोषी नहीं है, व मारे जा रहे है। इससे तो आपके न्याय पर आँच आती है।''

राजा ने कहा—''कुत्ते! क्या तुम्हें यह मालूम है कि किसने यह शरारत की है?''

बोधिसत्व ने कहा—''हाँ, मैं जानता हूँ।''

—''किन्होंने यह कर्म किया है?''

—''आपके महल के कुत्तों ने ही यह काम किया है।''

राजा ने कहा—''इसका प्रमाण क्या है?''

तब बोधिसत्व ने कहा—''प्रमाण मैं दूँगा। आप थोड़ा मट्ठा और दूब के तिनके लाने की आज्ञा दें।''

राजा ने फौरन मट्ठा और दूब के तिनके मँगवाए और इन तिनकों को मट्ठे में मथकर अपने महल के कुत्तों को पिलवा दिया। फौरन कुत्तों ने उलटी की और उसमें से रथ के चमड़े आदि निकल पड़े। तब राजा ने यह समझ लिया कि यह बोधिसत्व हैं और श्वेत छत्र से उनकी पूजा की। कुत्ते ने तब राजा को धर्मोपदेश किया और यह कहा कि आगे आप इस प्रकार की बात न किया करें। राजा ने सभी कुत्तों और सभी प्राणियों को अभयदान देकर सब के लिए अपनी तरह भोजन का प्रबन्ध किया और मरने पर उसे देवलोक प्राप्त हुआ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बुद्धि का दुकानदार

ज्ञानेश दत्त शुक्ल

एक ब्राह्मण था। वह किसी दफ्तर में नौकर था। उसे बहुत कम वेतन मिलता था। पर सन्तोष के साथ वह उतने से ही अपनी गुजर-बसर कर लेता था। उसके एक लड़का था। उसका नाम रामदीन था। वह स्कूल में पढ़ता था। पढ़ने-लिखने में वह बहुत होशियार था। उसका स्वाभाव भी अच्छा था। शिक्षक और सहपाठी, सभी उससे खुश रहते थे। परन्तु दुर्भाग्य से उसके पिता की मृत्यु हो गई और उसका पढ़ना बन्द हो गया।

अब रामदीन को एक दफ्तर में क्लर्की करनी पड़ी। इसमें उसे बहुत कम वेतन मिलता था परन्तु इन्हीं से वह अपनी गुजर-बसर चलाता था। जब देखा कि इस तरह काम नहीं चलेगा तब उसने नौकरी छोड़ दी।

रामदीन परदेश चला गया। वहाँ एक शहर में उसने दुकान खोली। अपनी दुकान के साइनबोर्ड में उसने सुन्दर अक्षरों में "बुद्धि बेचने की दुकान" लिख दिया। उसकी दुकान शहर के ठीक बीच में थी। उसके आस-पास महाजनों की कोठियाँ थीं जिनमें हर समय लाखों का सौदा होता रहता था। उस बाजार में फेरीवाले भी बहुत आते-जाते रहते थे। कोई कहता "नागपुरी सन्तरे" तो कोई कहता "कुल्फी मलाई।"

फेरीवालों का ढंग रामदीन को पसन्द आ गया। दूसरे दिन से वह भी चिल्ला-चिल्ला कर बुद्धि बेचने लगा। जहाँ कोई उसके दुकान के आगे से निकलता, वह चिल्ला उठता, "बुद्धि लो बुद्धि।" पहले तो लोगों ने उसके चिल्लाने की ओर ध्यान न दिया। लेकिन एक दिन कुछ लोग उसकी दुकान के आगे खड़े होकर उसकी हँसी उड़ाने लगे। कोई कहता, "भला! बुद्धि कौन खरीदेगा?" कोई कहता, "अगर किसी को खरीदना ही होगा तो क्या वह तुझ जैसे छोकरे से खरीदेगा?" पर रामदीन ने उनकी रत्ती भर परवाह नहीं की। वह अपनी धुन का पक्का था। उसने अपनी आवाज लगाना बन्द न किया। यहाँ तक कि उसकी दुकान की चर्चा शहर भर में होने लगी। कुछ लोग हँसी करने के विचार से आए भी और आने दो आने की बुद्धि मोल भी ले गए। रामदीन का काम चल निकला। पर वैसा नहीं। तो भी वह हताश नहीं हुआ।

उस शहर में एक ब्राह्मण रहता था। उसके पास बहुत धन था पर था वह मूर्ख। उसके पिता का नाम विद्याधर था। वह उस से भी बढ़ कर मूर्ख था। एक दिन विद्याधर रामदीन की दुकान के सामने से आ निकला। "बुद्धि लो बुद्धि लो" की आवाज कान में पड़ते ही वह खड़ा हो गया। उसने रामदीन से पूछा "भाई! बुद्धि कितने रुपये मन बिकती है?"

लड़के ने कहा, "मैं तौल कर नहीं बेचता। जितने की कहो, दे दूँ।"

उस मूर्ख ने झट दो पैसे फेंक दिए। रामदीन ने पैसे उठा लिये और उस मूर्ख को एक कागज का टुकड़ा पकड़ा दिया। उसमें लिखा था, "खड़े होकर दो आदमियों को लड़ते देखना बुद्धिमानी नहीं है।" विद्याधर ने उस कागज को जेब में रख कर घर की राह ली।

घर आकर विद्याधर ने अपने पिता से कहा, "दादा! देखो मैं दो पैसे की बुद्धि मोल लेकर आया हूँ।" यह कह कर उसने वह कागज अपने पिता के हाथ में दे दिया। उसे पढ़ते ही वह आग बबूला हो गया। उसने कहा, "तू बड़ा मूर्ख है। कौन नहीं जानता कि दो आदमियों की लड़ाई खड़े होकर देखना ठीक नहीं है। दो पैसे यों ही फेंक दिए।" इस प्रकार अपने मूर्ख बेटे को डाँट-डपट कर वह दौड़ा हुआ रामदीन की दुकान पर पहुँचा। उसने कहा, "अरे! बेईमान, तूने मेरे लड़के को मूर्ख जान कर ठग लिया है। मेरे पैसे वापस कर, नहीं तो पुलिस को खबर देता हूँ।"

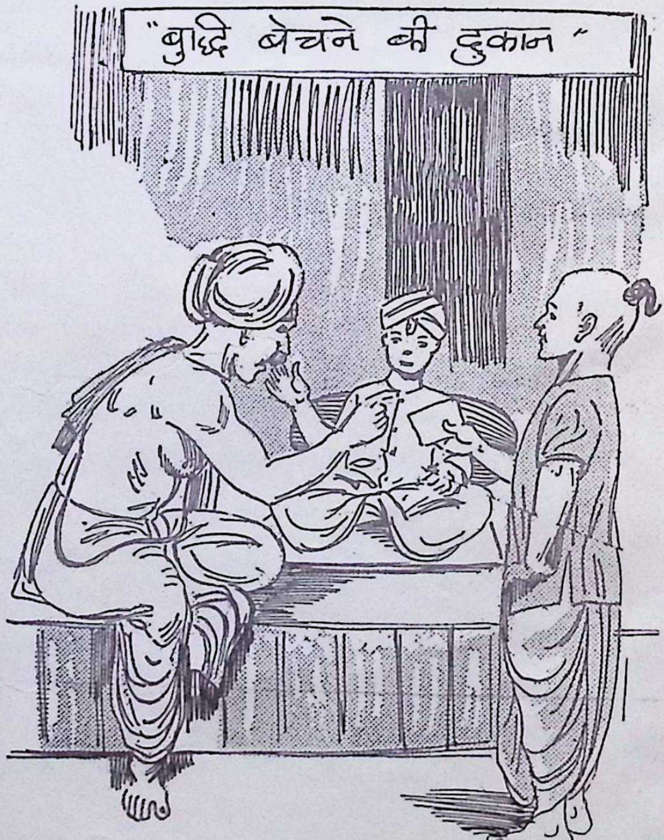

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामदीन ने शान्ति के साथ कहा, "क्यों व्यर्थ नाराज हो रहे हो ? आपका लड़का अपनी इच्छा से खरीदकर ले गया है। मेरी चीज लौटा दो, अपने पैसे ले लो।" उस ब्राह्मण ने कागज के पुर्जे को फेंक कर कहा, "ले अपनी चीज और दे मेरे पैसे।"

लड़के ने कहा, "ऐसा नहीं हो सकता। आपको एक कागज लिख देना पड़ेगा कि आज से मेरा लड़का तुम्हारी शिक्षा नहीं मानेगा और जब जहाँ दो आदमी आपस में लड़ते होंगे तब वहाँ खड़ा रह कर वह उनकी लड़ाई देखता रहेगा।" जो लोग वहाँ खड़े थे, उन्होंने भी रामदीन का पक्ष लिया। इस पर उस ब्राह्मण ने कागज पर लिख दिया और पैसे लेकर अपने घर की राह ली।

उस नगर के राजा की दो रानियाँ थीं। एक दिन उनकी दासियाँ बाजार गईं और रामदीन की दुकान के पास ही एक दुकान में साग-भाजी खरीदने लगीं। भाजी वाले के पास एक कटहल था। प्रत्येक दासी चाहती थी कि कटहल मैं लूँ, दूसरी न ले पावे। इस पर दोनों में झगड़ा हो गया। यह हाल देख कर भाजी वाला दुकान को छोड़कर भाग गया। संयोगवश उसी समय विद्याधर वहाँ से आ निकला। और जगह होती तो वह भी भाग जाता पर रामदीन को पास ही देख कर वह भाग न सका। उसे अपने पिता की प्रतिज्ञा याद थी। लाचार होकर वह वहाँ खड़ा होकर उनका झगड़ा देखने लगा। उसे खड़ा देखकर एक दासी ने कहा, "पंडित जी ! आप मेरे गवाह हैं। बीच बाजार में मेरी जो दुर्गति इसने की है, उसकी गवाही आपको देनी होगी।"

दूसरी बोली, "हाँ पंडित जी ! आप मेरे भी गवाह हैं। ईश्वर के नाम पर रानी जी के सामने सब बातें सच-सच कह देना।" इसके बाद वे महलों को चली गईं। इधर विद्याधर भी अपने घर आया।

उन दासियों ने अपनी-अपनी रानी से आकर शिकायत की और दोनों ने विद्याधर को अपना गवाह बतलाया। रानियों ने विद्याधर के पास कहला भेजा कि अगर तुम मेरी दासी के पक्ष में गवाही न दोगे तो तुम्हारे लिए अच्छा न होगा। अब वह संकट में पड़ गया। पिता-पुत्र ने सलाह की और रामदीन से ही सलाह लेना ठीक जचा। तब वे दोनों उसके पास गए और अपना हाल कहा। रामदीन ने कहा, "मैं सलाह तो दूँगा किन्तु ५०० रुपये लूँगा।" लाचार होकर विद्याधर के पिता ने ५०० रुपये गिन दिए। रामदीन ने कहा, "तुम राजा के सामने पागल बन जाना। जब तुम से कुछ पूछा जाए तो तुम अंट-शंट जवाब देना।"

यह सुनकर वे दोनों खुशी-खुशी अपने घर चले गए। दूसरे दिन दरबार में उसे बुलाया गया। राजा ने उससे झगड़े का हाल पूछा। उसने अंट-शंट जवाब दिया। राजा ने उसे पागल समझ कर निकाल दिया। इस प्रकार वह रानियों के कोप से बच गया क्योंकि उसने किसी के विरुद्ध गवाही नहीं दी। परन्तु अब दूसरी शंका उठ खड़ी हुई। विद्याधर के पिता ने सोचा कि अगर राजा को इस बात का पता हो जाएगा कि विद्याधर पागल नहीं था, उसने पागल बनने का बहाना किया था, तो वह कड़ा दंड देगा। उसने अपने मन की बात विद्याधर से कह दी। विद्याधर की सारी खुशी हवा हो गई। उसने कहा—"चलो दादा ! उसी लड़के से सलाह ले लें। वह कुछ न कुछ उपाय जरूर बताएगा।"

वे दोनों रामदीन के पास फिर गए और अपने मन का संदेह उससे कहा। रामदीन ने कहा, "पाँच सौ रुपये पहले गिन दो तो सलाह बताऊँगा।" विद्याधर के पिता ने उसके आगे पाँच सौ की थैली रख दी। रामदीन ने कहा—"किसी दिन राजा के पास जाकर सारा सच्चा-सच्चा हाल कह दो। तुम्हारा काम बन जाएगा।"

रामदीन की बात उन दोनों के मन में बैठ गई। एक दिन मौका पाकर विद्याधर राजा के पास गया और उसे सारा हाल ज्यों का त्यों सुना दिया। राजा मौज में था ही। वह विद्याधर की बुद्धिमानी की बात जान कर बहुत खुश हुआ। उसने उसे क्षमा कर दिया।

विद्याधर से रामदीन का हाल सुनकर राजा ने उसे दरबार में बुलाया। राजा ने कहा, "क्या तुम मेरे हाथ बुद्धि बेचोगे ?" रामदीन ने उत्तर दिया, "हाँ अन्नदाता ! पर एक लाख रुपये मूल्य लूँगा।" राजा ने एक लाख रुपये देने का हुक्म दिया। रामदीन ने राजा को जो पुर्जा दिया उसमें लिखा था, "बिना अच्छी तरह विचार किए कोई काम न करो।" राजा ने उसकी इस शिक्षा को अपने सोने के कमरे में टंगवा दिया।

कुछ दिनों के बाद राजा बीमार पड़ा। इसलिए मन्त्री ने चिकित्सक को मिला कर राजा को विष देने का विचार किया। एक दिन वैद्य राजा की दवा में विष मिलाकर ले गया। जब राजा ने दवा पीना चाहा तब उसकी निगाह उस शिक्षा-पत्र पर गई जो उसके सामने दीवार पर टंगा हुआ था। राजा रुक गया और दवा को ध्यान से देखने लगा। इस पर वैद्य को सन्देह हो गया कि राजा को विष की बात मालूम हो गई है। तब वह राजा के पैरों पर गिर पड़ा। उसने हाथ जोड़ कर कहा, "अन्नदाता ! मन्त्री के दबाव से मुझ से यह भूल हुई है। उन्हीं के कहने से इसमें मैंने विष मिलाया है।"

यह बात जान कर राजा बड़ा चकित हुआ। उसने मन्त्री को बुला कर वह दवा उसको पीने को दी। इस पर मन्त्री भी राजा के पैरों पर पड़ा और क्षमा माँगने लगा। राजा ने तुरन्त उसका सिर उतरवा दिया और वैद्य को राज्य से निकलवा दिया। इसके बाद उसने रामदीन को बुलवा भेजा और उसे अपना मन्त्री बना लिया, क्योंकि उसी की शिक्षा से उसके प्राण बचे थे। इस प्रकार अनाथ बालक रामदीन, अपने बुद्धि-बल से राज्याधिकारी हो गया।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

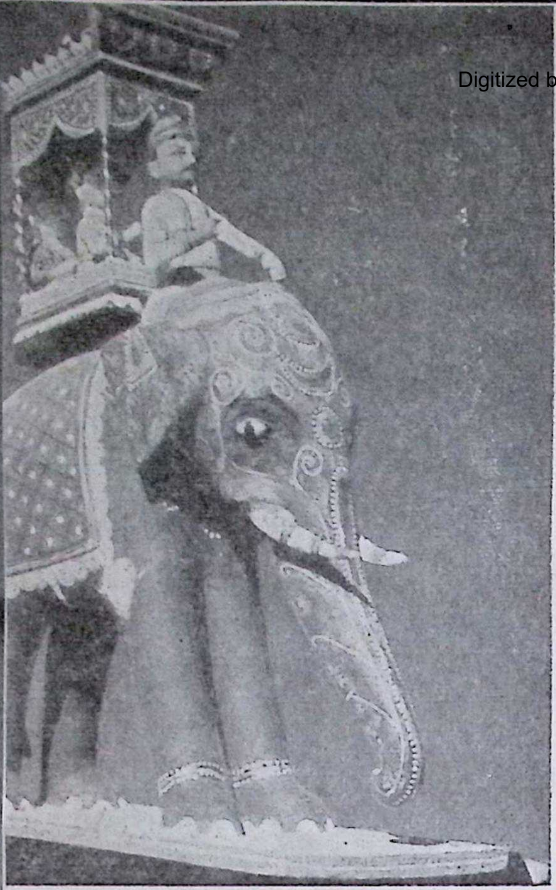

गुड़िया का ब्याह

राजनारायण बिसारिया

ढम ढम ढोल बजाकर हमने
ब्याह रचाया गुड़िया का,
नए सूट पर सेहरा बाँधे
दूल्हा आया गुड़िया का !
बिन्नी आई, मिन्नी आई
पम्मी और रमा आई,
फूलों के जेवर, रेशम के
नए-नए कपड़े लाई ।
फिर सब सखियों ने मिलकर
सिंगार सजाया गुड़िया का !
नए सूट पर सेहरा बाँधे
दूल्हा आया गुड़िया का ॥
चन्दर आया, इन्दर आया,
बन-ठन चले बराती, रे,
मुन्नी नाची, मुन्ना नाचा,
नाचे घोड़ा-हाथी, रे !
ठुमक-ठुमक कर गुड्डा नाचा,
था मन-भाया गुड़िया का !
नए सूट पर सेहरा बाँधे
दूल्हा आया गुड़िया का ॥
सब ने चमचम रसगुल्लों की
दावत खूब उड़ाई, रे,
छल-बल आँसू बहे, कि गुड़िया
रोई, हुई बिदाई रे !
सखियों ने मिलकर समझाया
धीर बँधाया गुड़िया का !
नए सूट पर सेहरा बाँधे
दूल्हा आया गुड़िया का !!

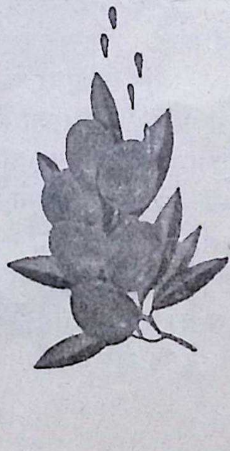

पुष्प का सन्देश

श्री आरसी प्रसाद सिंह

इस जगत में यदि नहीं होते मनोहर फूल,
देख किसका मुख मनुज निज दुःख जाता भूल ?
इसलिए ये पुष्प खिलते हैं सरस सुकुमार,
कर सके अवलोक जिनको नर जगत् से प्यार !
फूल बन कर है खिला सौन्दर्य का मधुमास !
तारकों से जगमगाता ज्यों शरत्-आकाश !
मुस्कुराते फूल देते हैं यही सन्देश—
"जानते हैं हम न कोई क्लेश अथवा द्वेष !
हम धरा के हास, हैं हम भुवन के शृंगार !
हम सुशोभित कर रहे हैं देव-मन्दिर-द्वार !
चेतना की सुरभि से भरते पवन के प्राण !
मृत्यु-पथ में भी हमारी खेलती मुस्कान !"
शूल-शय्या हो कि ज्वाला हो अनल की क्षुब्ध !
मुस्कराते ही सदा रहते सुमन-शिशु मुग्ध !
"देव-मस्तक पर चढ़ें अथवा बनें पथ-धूल !"
सोचते ऐसा नहीं हैं भूल कर भी फूल !
आ गए हँसते, कराते विश्व को रस-पान !
और हँसते चल पड़े सुन दूर का आह्वान !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बातचीत करने का ढंग

दीनानाथ श्रीवास्तव

मनुष्य के चरित्र से सम्बन्ध रखने वाले अन्य महत्त्वपूर्ण विषयों की भाँति "बातचीत करने का ढंग" भी उसके चरित्र का एक विशेष अंग है। बातचीत करने के ढंग से हमारा अर्थ बोल-चाल के उस ढंग से है जिसके द्वारा हम अपने विचारों को दूसरों पर प्रकट करते हैं तथा दूसरों के विचारों को स्वयं ग्रहण करते हैं। हमारे बातचीत करने का यह ढंग हमें प्रायः संतोष, प्रसन्नता तथा सफलता प्रदान करता है तथा यही हमें क्रोध, चिंता और लड़ाई-झगड़ों की ओर खींच ले जाता है। इसी के द्वारा हम दूसरे लोगों के मन में अपने प्रति प्यार, आदर तथा प्रशंसा के भाव उत्पन्न करते हैं तथा दूसरे के विषय में उसके अच्छा-बुरा, शिक्षित-अशिक्षित तथा सभ्य-असभ्य होने का अनुमान लगाते है।

एक कहानी मुझे याद आ गई। किसी जंगल में एक राजा अपने मंत्री तथा एक सेवक के साथ आखेट के लिए निकला। दुर्भाग्यवश उस घने जंगल में वे तीनों एक दूसरे से बिछड़ गए। उसी जंगल में एक सूर संत की छोटी-सी कुटिया थी। संत अपने नित्य-कर्म में व्यस्त था कि उसी क्षण राजा का सेवक उधर निकला तथा उसने उस सूर संत से प्रश्न किया—"ओ अंधे! इधर से कोई गया है?" संत ने उत्तर दिया—"भई मैं तो सूर ठहरा किन्तु मेरे कानों में अभी तक इधर से किसी के जाने की आहट नहीं हुई।"

संत का उत्तर सुनकर सेवक आगे बढ़ गया। सेवक के जाने के पश्चात् राजा का मंत्री भी उधर आया तथा सूर संत से प्रश्न किया—"क्यों सूरदास! अभी-अभी इधर से कोई राजा तो नहीं गए?" सूर संत ने पुनः उत्तर देते हुए कहा—"भई, अभी-अभी एक व्यक्ति अवश्य ही यहाँ आया था किन्तु वह राजा न था।"

सेवक तथा मंत्री के जाने के पश्चात् कुछ देर बाद राजा भी संत की कुटिया में पहुँचा तथा उसने भी संत से अपने मंत्री तथा सेवक के विषय में पूछा—"क्यों सूरदास जी महाराज, इधर से कोई व्यक्ति तो नहीं निकला?"

सूरसंत ने आसन बिछाते हुए कहना आरम्भ किया—"बैठिये महाराज! अवश्य ही आपके सेवक तथा मंत्री महोदय आपको ढूँढ़ते हुए इधर आए थे।"

संत का उत्तर सुनकर राजा को बड़ा आश्चर्य हुआ तथा उन्होंने पुनः प्रश्न किया—"महाराज, आप तो सूर हैं फिर आपने उन व्यक्तियों में कैसे भेद कर लिया कि उनमें से एक मेरा सेवक तथा दूसरा मेरा मंत्री था और मैं ही वह राजा हूँ जिनकी उन्हें खोज थी?"

सूर संत ने नम्रतापूर्वक उत्तर देते हुए कहा—"महाराज, पहला व्यक्ति जिसने मुझसे आपके विषय में पूछा उसकी वाणी में शिक्षा का अभाव था और मैंने अनुमान लगा लिया कि वह सेवक ही हो सकता है। इसी प्रकार दूसरा व्यक्ति जिसने पुनः मुझ से आपके विषय में पूछा उसकी वाणी में शिक्षा का अभाव न होते हुए भी नम्र भाव की कमी मुझे अनुभव हुई तथा मैंने अनुमान लगाया कि वह कोई उच्च पदाधिकारी कर्मचारी होगा और आपकी वाणी को सभ्यता तथा नम्रता दोनों ही से परिपूर्ण पाकर मुझे यह अनुभव करने में तनिक भी देर न लगी कि आप ही वह राजा हैं जिनकी उन्हें खोज थी।" राजा सूर संत के इस उत्तर से बहुत प्रसन्न हुए तथा उन्हें बहुत कुछ दिया।

ऊपर की कहानी से स्पष्ट है कि हमारे बातचीत करने के ढंग से कोई भी व्यक्ति चाहे वह अपरिचित ही क्यों न हो, सरलता से हमारे चरित्र, स्वभाव तथा सभ्यता आदि से सम्बन्धित एक निश्चित तथा सही राय स्थापित कर सकता है। इसलिए हम अपनी बातचीत को जितना ही अधिक सरस तथा मधुर बना सकें और सभ्यता के साँचे में ढाल सकें उतना ही अधिक लोगों के स्नेह, आदर तथा प्रशंसा के पात्र बन सकते हैं।

बातचीत करने के पूर्व हमें अपने अधरों से विलग होने वाले प्रत्येक शब्द को पूरी प्रकार से तोलना चाहिए कि कहीं उनका प्रभाव सामने वाले व्यक्ति की रुचि, बुद्धि तथा सम्मान के विरुद्ध तो नहीं पड़ेगा।

अधिक बातचीत करना अप्रशंसा का कारण बन जाता है, जैसा कि हम प्रायः लोगों को कहते सुनते हैं—"अमुक व्यक्ति बड़ा बातूनी है।" इसलिए हमें चाहिए कि अनावश्यक अधिक न बोलें। फिर दूसरों कि बात सुनना तो कहीं अधिक आसान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कार्य है। फिर क्यों न हम दूसरों की सुनने ही की ओर अधिक ध्यान दें? अधिक वाद-विवाद करना भी ठीक नहीं होता। विशेष कर बिना मतलब तथा निरर्थक विषयों पर। इससे हमारी प्रकृति में हठ, क्रोध तथा झुँझलाहट की प्रवृत्तियाँ जन्म लेती हैं। ऐसी दशा में यदि कभी ऐसा अवसर आ भी जाए तो अधिक दलीलों से काम न लेकर जो कुछ कहना हो नम्रतापूर्वक कह देना चाहिए। कभी जोर देकर जबरदस्ती किसी से अपनी बात मनवाने का प्रयास नहीं करना चाहिए। इससे सामने वाले व्यक्ति के अधिकारों को ठेस पहुँचती है।

जब दो आदमी बातचीत कर रहे हों तो बीच में कूदने की आदत भी बुरी है। इससे अप्रसन्नता के भाव उत्पन्न होते हैं तथा अनायास ही उनके बीच किसी विरोधी भावना के उत्पन्न होने की सम्भावना बनी रहती है। इसलिए ऐसे अवसर पर जब तक कुछ पूछा अथवा राय देने को न कहा जाए गंभीर बना रहना चाहिए। राय देने की आवश्यकता पड़ने पर, राय देते समय भी इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि अपनी राय इतनी विभिन्न अथवा कड़वी न हो जिससे उनमें से किसी की निन्दा हो अथवा उसके भावों को ठेस पहुँचे। किसी की आलोचना अथवा निन्दा करना उसके ऊपर प्रहार करने से भी अधिक प्रभाव डालता है। लोकोक्ति प्रसिद्ध है—"छुरी के घाव भर जाते हैं किन्तु बात के घाव नहीं भरते।"

बातचीत करते समय सच बोलने का विशेष ध्यान रखना चाहिए। सच्चे व्यक्ति को कहीं लज्जित नहीं होना पड़ता तथा सच्चाई विश्वास व सम्मान का क्षेत्र विस्तृत करती है। यदि कभी कोई गलती भी हो जाए तो झूठ बोलकर अपना बचाव करने से अधिक उचित है कि सच बोल कर उस गलती को स्वीकार कर लिया जाए क्योंकि बल्लियों के सहारे खड़ा किया गया गिरता हुआ मकान जिस प्रकार गिरे बिना नहीं रह सकता उसी प्रकार झूठ भी अधिक देर तक नहीं छुप सकता। एक बात और, सत्य भी इतना कड़ुआ नहीं होना चाहिए कि दूसरों को कष्ट पहुँचे। ऐसे अवसर पर बोलने की जगह चुप रहना अधिक बुद्धिमानी है। अक्खड़पन सब को बुरा लगता है। बुरे को बुरा कहकर पुकारने से उसे उतना ही बुरा लगता है जितना अच्छे को बुरा कहकर पुकारना।

बातचीत के बीच में यदि स्वयं की बड़ाई अथवा प्रशंसा का विषय आन टपके तो भूल कर भी अपनी उत्सुकता का प्रदर्शन नहीं करना चाहिए और न ही अपने मुख से कोई ऐसी बात निकलने देनी चाहिए जिसमें "अपने मुँह मियाँ मिट्ठू" वाली बात बन जाए। बातचीत के बीच में भावुक हो उठना भी चरित्र की बहुत बड़ी दुर्बलता है। इससे अनायास दूसरों को हानि पहुँचने का भय बना रहता है। भावुकता की दशा में हम बहुत सी ऐसी बातें कह जाते, हैं जो हमें नहीं कहनी चाहिएं, जैसे दूसरों के भेद आदि।

बड़ों के साथ अथवा उनकी संगति में बातचीत करते समय सभ्यता, गम्भीरता तथा सहनशीलता को अधिक महत्त्व देना चाहिए। कम से कम तथा धीरे बोलने की ओर भी विशेष ध्यान देना चाहिए। बात करते समय आँख, भौं अथवा किसी अन्य अंग को मटकाना असभ्यता का चिन्ह है।

बातचीत करते समय साधारणतः निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए :

(१) वाणी में मिठास
(२) शैली में सभ्यता
(३) कथन में सत्यता
(४) वाणी-व्यवहार में समानता
(५) बातचीत में गम्भीरता
(६) स्वभाव में सहनशीलता
(७) विचार में प्रगतिशीलता
(८) भाषा में सरलता
(९) राय में उपयुक्तता
(१०) तथा बातचीत के समय में कम से कम समय के भीतर अधिक-से-अधिक उपयोगिता का ध्यान आदि।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बुद्धिमान रूपा

कला पन्त

प्राचीन काल में अलकापुरी के एक छोटे से गाँव में रूपा नाम की एक अत्यन्त रूपवती कन्या रहती थी। रूपवती होने के साथ-साथ वह गुणवती भी थी। उसके रूप और गुणों की चर्चा दूर-दूर तक फैली हुई थी। यद्यपि रूपा एक निर्धन किसान की कन्या थी, पर रूप और गुण के कारण उसका विवाह पास के एक जमींदार के पुत्र से हो गया। जमींदार के पास असंख्य धन-दौलत थी। जब तक जमींदार जीवित रहा तब तक उसका लड़का भी सर्वगुण सम्पन्न रहा पर जमींदार के मरते ही रूपा के पति ने शराब पीनी आरम्भ कर दी। यहाँ तक कि शराब के कारण कुछ ही दिनों में उसने अपने सोने के घर को मिट्टी कर दिया। रूपा उसके इस अवगुण से अत्यन्त दुःखी थी। उसने अपने पति की बुरी आदत छुड़ाने के कई उपाए किए पर सब निरर्थक हुए। इस प्रकार रूपा का पति कई दिनों तक शराब से बेसुध रहता था। एक दिन दोनों पति-पत्नी नाव की सैर करने को गए। नाव पर बैठते समय रूपा के पति ने अपने पैर में यह सोच कर तागा बाँध लिया कि कहीं मैं शराब के नशे में दूसरे आदमी से न बदल जाऊँ ? उसके बाद उसने खूब शराब पी और दोनों नाव पर सवार हो गए। उसको नशे में बेसुध देखकर एक दूसरे व्यक्ति ने जो कि उसी नाव पर बैठा था उसके पैर से तागा निकल कर अपने पैर में बाँध लिया। जब नाव किनारे पर आई तो मल्लाह ने रूपा के पति से भी नाव से उतर जाने को कहा क्योंकि अन्य सब लोग नाव से उतर चुके थे। जमींदार का पुत्र अभी भी नशे में बेहोश था और मल्लाह की आवाज सुनकर वह अपने पैर का तागा देखने लगा। तागा दूसरे आदमी के पैर में देखकर वह बोला, "अरे भा-भाई। मैं मैं तो उतर गया हूँ।"

केवट ने कहा—"मूर्ख, बेसुध होकर नाव में पड़ा है और कहता है कि मैं तो उतर गया, यह क्या ?" यह सुनकर जमींदार का पुत्र फिर बोला, उसने कहा—"वह जिसके पाँव में डोरा बँधा है सो मैं हूँ, क्योंकि मैं बदल न जाऊँ इस विचार से मैंने अपने पाँव में डोरा बाँध लिया था, अतः मैं तो उतर गया हूँ। तू अधिक बकबक मत कर !" यह सुनकर आसपास के सब लोग हँस पड़े। केवट को शीघ्र ही दूसरे पार जाना था अतः उसने क्रोध में आकर रूपा के पति को एक तमाचा मारा जिससे उसका सारा नशा उतर गया और वह झटपट नाव से उतर गया। दूर किनारे पर खड़ी रूपा यह सब देख रही थी। अपने पति की यह हीन दशा देख कर वह बेहोश होकर गिर पड़ी। लोग उसे बड़ी कठिनाई से घर तक लाए। होश में आने पर रूपा के पति ने रूपा के सामने प्रतिज्ञा की कि वह फिर कभी शराब नहीं पीएगा। पर दूसरे ही दिन वह फिर शराब की दुकान पर चला गया और अपनी प्रतिज्ञा को भूल गया। रूपा ने भी प्रण किया कि जब तक वह अपने पति की इस बुरी आदत को नहीं छुड़ाएगी तब तक चैन न लेगी। कुछ दिनों बाद उसे अचानक एक उपाय सूझा। दूसरे दिन उसने अपने पति से कहा कि आज से मैं तुम्हें शराब की बोतल दूँगी। उसका पति यह सुन कर अत्यन्त प्रसन्न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुआ और उसने रूपा की यह बात स्वीकार कर ली। शाम को जब रूपा का पति घर आया तो रूपा ने शराब की बोतल से कुछ शराब निकाल कर गिरा दी और उसे पानी से भर दिया। उसके पति को यह बात मालूम नहीं थी। रूपा ने प्रसन्न होकर शराब की बोतल अपने पति को दे दी। इस प्रकार रूपा प्रतिदिन शराब में पानी की मात्रा बढ़ाती जाती थी और शराब कम करती जाती थी। धीरे-धीरे एक दिन ऐसा आया कि रूपा ने पूरी बोतल पानी से भर कर अपने पति को दे दी। पर अब पति की शराब पीने की आदत धीरे-धीरे छूट गई थी। अतः उसने पानी की बोतल दूर रख दी और रूपा की बुद्धिमानी की अत्यन्त प्रशंसा की। फिर धीरे-धीरे रूपा के घर में सम्पति बढ़ने लगी और रूपा अपने पति के साथ सुखपूर्वक रहने लगी।

घर की सम्पति सब नष्ट हो गई थी। यद्यपि रूपा के पति ने शराब छोड़ दी थी पर काम नहीं कर सकता था क्योंकि शराब से उसकी बुद्धि प्रायः नष्ट-सी हो गई थी। उसके घर में केवल एक पानी का घड़ा, एक मुर्गी, एक बिल्ली और एक सूप था। किसी तरह रूपा ने कुछ दिन तक घर का काम चलाया। पर जब प्रतिदिन भूखे रहने की नौबत पहुँच गई तो एक दिन रूपा ने क्रोध में आकर अपने पति से कहा कि अब या तो तुम नौकरी करो और कमा कर लाओ, या घर से निकल जाओ। बुढ़ापे में मुझसे भूख नहीं सही जाती। बेचारा बुड्ढा पति घर से निकल कर बगीचे में बैठ गया। अचानक दो चूहे आकर उसके सामने लड़ने लगे। उसने एक पत्थर उठाया और एक ही पत्थर से दोनों चूहों को मार डाला। अब अपनी बहादुरी पर बुड्ढा अत्यन्त प्रसन्न हुआ। उसने घर जाकर रूपा से कहा कि अब तो मैं बहुत बहादुर हो गया हूँ। मैंने आज एक ही बार में दो को मार डाला। रूपा ने सोचा कि सचमुच पति ने आज एक ही बार में दो बड़े जानवरों को मार डाला होगा, अतः उसने अपने पति से कहा कि अब तुम विदेश में जा कर नौकरी करो, और उसने जल्दी-जल्दी अपने पति की यात्रा की तैयारी की। सब्जी के लिए घर में कुछ सामान नहीं था। इसलिए वह एक विषैली घास ले आई। उसकी सब्जी बनाकर और कुछ रोटियाँ सेक कर रूपा ने अपने पति को विदेश के लिए रवाना किया।

जाते-जाते रूपा का पति एक गाँव की पगडंडी पर पहुँचा और एक पेड़ की छाया में बैठ कर आराम करने लगा। पास ही दूसरे पेड़ पर एक दूसरा यात्री भी आ गया। उसके पास एक हाथी था। उसने हाथी को पेड़ से बाँध दिया और स्वयं दूर तालाब में पानी पीने चला गया। रूपा के पति ने रूपा की बनाई हुई सब्जी हाथी को खिला दी और रोटियाँ स्वयं खा लीं। सब्जी खाते ही हाथी के शरीर में जहर फैल गया और वह मर गया। थोड़ी देर बाद जब हाथी का मालिक आया तो वह हाथी को मरा देखकर बुड्ढे को मारने के लिया दौड़ा। बुड्ढे ने कहा कि तू मुझे क्यों मारता है? भगवान् ने कृपा करके तुझे बचा लिया, इसके लिए ईश्वर को धन्यवाद दे। मैं तो एक ही बार में दो को मारता हूँ। उसकी निडरता देखकर हाथी के मालिक ने उसकी बात पर विश्वास कर लिया और जान लेकर वहाँ से भागा।

रूपा का पति भी फिर आगे के लिए रवाना हुआ। जाते-जाते वह एक छोटे से राज्य में पहुँचा। वहाँ जाकर उसे मालूम हुआ कि उस राज्य में एक बड़ा अजगर था जो प्रतिदिन बहुत से आदमियों को खा डालता था। वहाँ के राजा ने यह प्रण किया था कि जो कोई उस अजगर को मारेगा उसे मैं अपना वजीर बना दूँगा। रूपा के पति को इसका एक उपाय सूझा। उसने अपने एक साथी की सहायता से एक बड़ी सींग वाली बकरी को मारा। बकरी का माँस दोनों ने भूनकर खा लिया और सींग लेकर रात को दोनों उस पेड़ के पास पहुँचे जहाँ अजगर नियमानुसार आता था। प्रतिदिन की भाँति अजगर उस दिन भी निकला और दोनों आदमियों को खाने के लिए मुँह खोल कर आगे बढ़ा। मुँह खोलते ही रूपा के पति ने उसके मुँह में बकरी के बड़े-बड़े सींग डाल दिए। इससे अजगर का मुँह खुला ही रह गया। तब उन्होंने अजगर को काट डाला। दूसरे दिन यह खबर सारे राज्य में फैल गई। राजा अपने कर्मचारियों सहित वहाँ पहुँचा, जहाँ अजगर मरा पड़ा था। उसने रूपा के पति की अत्यन्त प्रशंसा की और उसे अपना वजीर बना लिया। अपनी शान-शौकत में वह रूपा को और अपने घर को एकदम ही भूल गया। रूपा को कहीं से यह मालूम हो गया कि उसका पति वजीर बन गया है। उसे अत्यन्त प्रसन्नता हुई। उसने एक आदमी के मार्फत यह लिख कर भिजवाया कि—ड्योढ़ी का दीवान ड्योढ़ी पर मारा गया, बिलौदखाँ मरदखाँ खा गए और सुप्पाखाँ कभी आगे खड़े रहे कभी पीछे लड़ रहे हैं।

आदमी रूपा का पत्र लेकर राजा के पास पहुँचा। राजा ने वजीर से इन वाक्यों का अर्थ पूछा। वजीर ने कहा कि "हमारे घर में मेरे जाते समय केवल चार चीजें बची थीं। एक पानी का घड़ा, एक मुर्गी, एक बिल्ली, एक सूप। उनके विषय में मेरी पत्नी रूपा ने लिखा है कि ड्योढ़ी पर रहने वाला घड़ा ड्योढ़ी पर ही फूट गया, बिल्ली ने मुर्गी को खा लिया और सूप भी टूट गया है। और जितना बचा है उसे कभी दरवाजे पर लगाती हूँ कभी छत पर।" वजीर के घर की हीन दशा सुनकर राजा को बहुत दुःख हुआ और उसने उसी समय कुछ अशर्फियाँ थैली में भर कर रूपा के पास भेज दीं और रूपा को वहीं बुलवा लिया। फिर रूपा और उसका पति एक महल में सुखपूर्वक रहने लगे। पहाड़ों पर आज भी यह कहानी नानी अपनी पोती से और पोती अपनी पोती से कहती है और रूपा का उदाहरण देती है।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बौद्ध धर्म का प्रचार

प्रभा नागपाल

बौद्ध युग भारतवर्ष में अमर युग था। भारतवर्ष में दस अवतार माने जाते हैं उनमें से एक महात्मा बुद्ध हैं। मेरे विचार में तो कोई ऐसा व्यक्ति विश्व भर में न होगा जिसने इस पवित्र आत्मा महाप्रभु बुद्ध का नाम न सुना होगा। महात्मा बुद्ध पुरुषों की श्रेणी से उठकर देवों की श्रेणी में आ जाते हैं। यही कारण है कि बुद्ध को बुद्धदेव कहा जाता है।

ईसवी सदी के ६०० वर्ष पूर्व जब हमारे इस देश में धार्मिक आडम्बर और धार्मिक पाप अपनी सम्पूर्ण कलाओं पर थे और जिस समय धर्म के नाम पर असंख्य मूक पशुओं की बलि दी जाती थी और इन निरीह और मूक पशुओं की करुण हाय देश के कोने-कोने में भर रही थी उस समय भगवान् ने बुद्ध के रूप में इस पृथ्वी पर अवतार ग्रहण किया। शोक-सन्ताप से पीड़ित भारत की पृथ्वी पर उन्होंने सब से पहले दया और शान्ति की आवाज उठाई। दुःख और उसके कारणों का निरूपण किया और उत्कट त्याग तथा सन्यास के मार्गों का उद्घाटन किया। लोगों ने विशुद्धता, परोपकार भावना, निर्लोभ भाव और मुक्ति की भावना को ग्रहण किया। अग्नि की भाँति जाज्वल्यमान भगवान् बुद्ध द्वारा निर्मित धर्म पहले समस्त भारत में और फिर सारे भूमण्डल में फैल गया। जनता से पहले राजाओं और साहूकारों ने इस धर्म को ग्रहण किया। भारतवर्ष एकाएक ज्ञानोदय के आलोक से आलोकित हो उठा और यह आलोक जल्दी ही समस्त पृथ्वी पर फैल गया। तिब्बत, चीन और कोरिया के सम्राट् दूत भेज कर भारत से बौद्ध महापण्डितों को ज्ञान विस्तार के लिए अपने देशों में बुलाने लगे और दूर दूर के देशों के लोग ज्ञान वृद्धि के लिए भारतवर्ष आने लगे। यहाँ आकर वह बौद्ध विद्वानों से ज्ञान प्राप्त करते तथा बहुत से बौद्ध ग्रन्थों तथा बौद्ध मूर्त्तियों को अपने साथ अपने देश ले जाते।

हजारों बौद्ध भिक्षु अपनी मातृभूमि भारतवर्ष का त्याग करके चारों दिशाओं में अपने देश भारत का गौरव फैलाने के लिए फैलने लगे। उन भिक्षुओं ने मार्ग में भयानक कठिनाइयों का सामना किया, खूँखार जानवरों से भरे जंगलों को पार किया, पर्वत, समुद्र, सभी को लांघते हुये वह उत्तर की ओर काश्मीर, तिब्बत, बलख, बुखारा, मंगोलिया, चीन, कोरिया और जापान; पश्चिम में काबुल, सीरिया, पैलेस्टाइन, अफ्रीका, मिस्र आदि; पूर्व में ब्रह्मा, कोचीन, जावा, सुमात्रा और फारमोसा द्वीप पुंज और दक्षिण में लंका तक जाने लगे। आजीवन वहीं रहकर उन्होंने ज्ञान और धर्म का प्रचार किया। ईसा की चौथी शताब्दी में फाहियान, ने भारत आते समय साइबेरिया के दक्षिणी तातार प्रदेश में, कास्पियन समुद्र के पश्चिमी यूरोप खण्ड में, अफगानिस्तान में बौद्ध धर्म का बड़ा भारी जोर देखा था। यूरोप के उत्तर प्रान्त और लेपलैण्ड में अभी तक बौद्ध धर्म प्रचलित है। एक समय था जब विश्व भर की मानव जाति की एक तिहाई इस धर्म को अपना चुकी थी।

मसीह के जन्म से पहले भारत के सम्राट् अशोक ने पैलेस्टाइन में बौद्ध धर्म के प्रचारकों को भेजा था। मसीह के समय भी बौद्ध धर्म के कुछ प्रचारक वहाँ उपस्थित थे। मसीह के जीवन तथा उपदेशों पर बौद्ध धर्म की गहरी छाप का शायद यही मुख्य कारण था। एक रूसी ग्रन्थकार को तिब्बत में एक ग्रन्थ मिला था जिसको पढ़ने से पता चलता है कि मसीह ने स्वयं भारत और तिब्बत में रह कर बौद्ध धर्म का अध्ययन किया था।

यद्यपि भगवान् बुद्ध ने स्वयं ही धर्म प्रचार का कार्य आरम्भ किया था किन्तु वे अपने जीवन काल में केवल विहार और काशी के आसपास ही घूमते रहे।

विदेशों में बौद्ध धर्म का प्रचारक वास्तव में सम्राट् अशोक ही माना जाता है। उसने गान्धार, काश्मीर, मिस्र, राजपूताना, पंजाब, यूनान, बर्मा और लंका में बौद्ध धर्म के प्रचारकों तथा उपदेशकों को भेजा। सम्राट् अशोक की आज्ञाओं का पालन चोल, पांड्य, केरल, लंका और सीरिया के यूनानी राजा ऐण्टी-ओकस के राज्यों में भी किया गया। कई सूचना पत्रों से यह विदित होता है कि उसने अपने धर्म दूतों को सीरिया, मिस्र, मेसेडन, एपेरस में भी भेजा था।

सम्राट अशोक का नाम यूरोप की वालगा नदी से जापान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तक, और साइबेरिया से लंका तक फैला हुआ था। विदेशों में बौद्ध धर्म का विस्तार सब से पहले इसी सम्राट अशोक ने किया था। इसके समय में बौद्ध भिक्षुओं के जत्थे सीरिया, श्याम, मिस्र, मकदूनिया और ऐपिरस तक पहुँचे थे। यद्यपि उस समय इन देशों में यूनानी प्रभाव था किन्तु यह बौद्ध भिक्षु इतने प्रभावशाली सिद्ध हुये कि कुशान सम्राट् कनिष्क भी बौद्ध हो गया। कनिष्क कोई मामूली राजा नहीं था। वह तो राज-राजेश्वर की उच्च पदवी से विभूपित था। इन बौद्ध भिक्षुओं के साथ-साथ ही भारतीय चित्रकला, मूर्त्ति-निर्माण कला और संगीत आदि ललित कलाएँ एशिया से होती हुई चीन और जापान तक जा पहुँचीं।

सम्राट् अशोक ने नालन्दा के विहार का निर्माण कराया था। वहाँ की अट्टालिकाएँ गगनचुम्बी थीं। एक महल था जिसकी लम्बाई १,६०० फुट और चौड़ाई ४०० फुट थी। उस महल में १०,००० अध्यापक और छात्र रहते थे जो राज्य की ओर से भोजन, वस्त्र पाते और अपना समय विद्याओं के पठन-पाठन में व्यतीत करते। चीनी यात्री हुएन-साँग ने इस यशस्वी नालन्दा विहार को देखा था जिसके बारे में वह लिखता है, "नालन्दा के बौद्ध तपस्वी महा पण्डित हैं। समस्त भारतवर्ष उनका आदर करता है।" विहारों को बना कर इस बड़े सम्राट् ने केवल मनुष्यों को ही ज्ञान वितरण नहीं किया था प्रत्युत अनेक चिकित्सालय भी मनुष्य और पशुओं के लिए बनवाये थे जहाँ बिना मूल्य औषधि वितरण की जाती था। हजारों मील की सड़कें बनवा कर उन पर वृक्ष लगवाये थे। कूएँ और सराएँ बनवाई थीं। उस अमर सम्राट् के धर्म-स्तम्भ आज भी मस्तक ऊँचा किये खड़े हैं। उन पर लिखा है—"अविराम न्यायपूर्वक विचार करने से बढ़ कर सर्व साधारण के मंगल का मूल कुछ नहीं है। उसी विचार को प्रजा पुंज में वितरण करना मेरा लक्ष्य है।" एक अन्य स्तम्भ पर लिखा है, "मेरी एकान्त कामना है कि मनुष्य चाहे किसी मत का अनुयायी हो चरित्र की उन्नति का साधन करना चाहिए, सभी को एक-दूसरे पर श्रद्धा करनी चाहिए। मत-पार्थक्य से हिंसा द्वेष न होना चाहिए।"

सम्राट् अशोक के समय लंका पर तिष्य नामक राजा राज्य करता था। उसने अशोक की बौद्ध धर्म कीर्ति सुन कर मित्रता का सन्देश भेजा। अशोक ने इस सन्देश को पाकर अपने पुत्र महेन्द्र तथा पुत्री संघमित्रा को लंका भेजा। राजकुमार महेन्द्र ने लंका जाकर पहले राजा को तथा फिर समस्त लंकावासियों को बौद्ध धर्म की दीक्षा दी। लंका में अभी तक राजकुमार महेन्द्र के स्मृति चिन्ह हैं। राजा ने उसके लिए एक मठ बनवाया था। वह मठ यद्यपि नाश को प्राप्त हो चुका है फिर भी उसके ध्वंसावशेष अभी भी हैं। वे गुफाएँ और चट्टानें जहाँ वह त्यागी राजकुमार वास करता था और अपने धर्म के प्रचार में लगा रहता था, अब तीर्थ स्थान बन चुकी हैं जहाँ लोग जाकर बड़ी श्रद्धा और प्रेम से अपने शीश झुकाते हैं।

श्याम और जावा में लगभग ६३८ ई० में बौद्ध धम का प्रचार हुआ। चीन, जापान, बाली, मैक्सिको, तिब्बत, कोरिया, जावा, सुमात्रा के प्रदेशों में बौद्ध धर्म बहुत शीघ्रता से फैला।

मसीह की तीसरी शताब्दी में बुद्ध का एक दाँत भारतवर्ष से लंका ले जाया गया और इसकी राजधानी केण्डो में बड़े समारोह के साथ इसकी स्थापना हुई। भिन्न-भिन्न स्थानों से आकर लोग उस समारोह में शामिल हुए। आज भी सहस्रों लोग वहाँ दर्शन के लिए जाते हैं। यद्यपि लंका में बौद्ध धमे का काफी ह्रास हो चुका है फिर भी वहाँ बौद्ध धर्म की काफी चर्चा है। लोगों के मन में बौद्ध धर्म के प्रति काफी मान है।

बर्मा में बुद्धघोष ने बौद्ध धम का प्रचार किया था। आज भी समस्त बर्मा बौद्ध धर्म का अनुयायी है। श्याम, कम्बोडिया आदि देशों में भी बौद्ध धर्म का काफी प्रचार है। प्राचीन काल में इन प्रदेशों के लोग जंगली थे लेकिन जब भारतवर्ष के लोग व्यापार आदि के सिलसिले में वहाँ जाने लगे तो उनमें भी सभ्यता आने लगी। इसी समय इन राज्यों में बर्मा के बौद्धों ने बौद्ध धमे का प्रचार किया। कम्बोडिया में जो शिलालेख मिले हैं उनसे यह पता चलता है कि वह आठवीं और नवीं शताब्दी के बाद के हैं। श्याम में बौद्ध धर्म अभी भी उन्नति के शिखर पर है। वहाँ के राजा ने भी बौद्ध धर्म की दीक्षा ली हुई है।

ईसा के पूर्व दूसरी शताब्दी में कनिष्क ने दो बौद्ध ग्रन्थ काश्मीर से चीन भेजे। इसके बाद चीन के सम्राट् ने बहुत से बौद्ध ग्रन्थ भारत से मँगाये और इस प्रकार वहाँ भी बौद्ध धर्म पूरी तरह फैल गया और चौथी शताब्दी तक वह चीन का प्रधान धर्म माना जाने लगा।

चीन से बौद्ध धर्म कोरिया में गया और वहाँ से जापान। कोनान, फारमूसा और मंगोलिया तथा अन्य स्थानों में चौथी

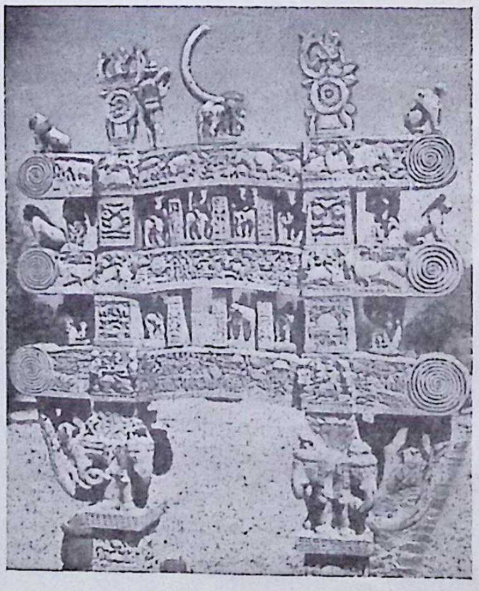

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और पाँचवी शताब्दी में चीन से बौद्ध धर्म यारकन्द, बलख, बुखारा और अन्य कई स्थानों पर पहुँचा।

चीन के सम्राट् ने सन्दो नामक एक चीनी को ३७२ ई० में कुछ बौद्ध धर्म ग्रन्थ तथा मूर्त्तियाँ देकर कोरिया भेजा। उसकी बातों का कोरिया के राजा पर बहुत जल्दी प्रभाव पड़ा। अतः उसने बौद्ध धर्म स्वीकार किया और अपनी राजधानी में दो बौद्ध विहार बनवाये। चीन से उसने बौद्ध धर्म के उपदेशकों और विद्वानों को बुलवाया। इस प्रकार पचास ही वर्षों में कोरिया में बौद्ध धर्म की जड़ें दूर-दूर तक फैल गईं। कोरिया में बौद्ध धर्म के प्रचार के साथ-साथ सदाचार, कला-कौशल और विद्या का भी खूब प्रचार हुआ।

कोरिया से होता हुआ बौद्ध धर्म जापान पहुँचा। जापान का पुराना धर्म सिन्टो धर्म था। छठी शताब्दी में कोरिया के राजा ने जापान के राजा के पास अपना एक दूत भेजा जिसके द्वारा बौद्ध धर्म की काफी प्रशंसा कराई। उसी दूत के साथ कुछ बौद्ध मूर्त्तियाँ और ग्रन्थ भेजे। इस समय तक जापान बौद्ध धर्म के बारे में बिलकुल अनभिज्ञ था। बौद्ध धर्म के प्रचार की बहुत चेष्टा की गई किन्तु, सिन्टो धर्म के माननेवाले बड़े कट्टर थे। अतः उन्होंने इस धर्म का विरोध करने का भरसक प्रयत्न किया।

जापान के राजा शोटो कुदेशी ने बौद्ध धर्म के प्रचार में बड़ी भारी सहायता की। यहाँ तक कि उसकी अपनी गणना भी बौद्ध भिक्षुओं में होने लगी। इस समय बौद्ध भिक्षुओं ने एक और चालाकी से काम लिया। सिन्टो के देवताओं को भी बौद्ध धर्म में मिला लिया और उनकी पूजा करने लगे। इससे सिन्टो धर्मानुयायी सन्तुष्ट हो गए और उन्होंने विरोध करना छोड़ दिया। इस प्रकार जापान के रिवाज और सभ्यता पर बौद्ध धर्म का प्रभाव स्थायी हो गया।

केवल चीन, जापान, कोरिया, लंका, श्याम, तिब्बत आदि देशों में ही बौद्ध धर्म का प्रचार नहीं हुआ बल्कि भारतवर्ष से दूर देशों में, जो भारत से सहस्रों कोस दूर हैं जैसे अमेरिका, जावा आदि देशों में भी बौद्ध धर्म के भिक्षुओं ने अपने धर्म का प्रचार किया।

जावा में बौद्ध धर्म का प्रचार कब और कैसे हुआ यह तो निश्चय से नहीं कहा जा सकता किन्तु वहाँ बौद्धों की मूर्तियों से मिलती-जुलती मूर्त्तियाँ पाई गई हैं जिससे यह निश्चित हो जाता है कि वहाँ बौद्ध धर्म अवश्य फैला था। इसी प्रकार बाली में भी बौद्ध धर्म के बहुत से चिन्ह मिले हैं जिनसे यह अनुमान किया जाता है कि वहाँ भी यह धर्म पहुँचा था।

अमेरिका में भी बौद्ध धर्म का प्रवेश हुआ था। प्राचीन इतिहास को देखने से यह ज्ञात होता है कि पाँच बौद्ध भिक्षु रूस की उत्तरी सीमा पर कामश्चारका प्रायद्वीप से प्रशान्त महासागर को पार करके एलास्का की ओर से अमेरिका में पहुँचे थे और दक्षिण की ओर से मेक्सिको को गए थे। मेक्सिको के मूल निवासियों का इतिहास, आचार-विचार, धर्म आदि बौद्ध धर्म से सम्बन्ध रखते हैं। पालेस्के नामक स्थान पर एक प्राचीन बुद्ध मूर्त्ति भी है जिसको वहाँ के वासी शाकामोल कहते हैं जिसका अर्थ है शाक्य मुनि। ध्यानस्थ बुद्ध की मूर्त्तियाँ भी अमेरिका में पाई गई हैं। इन पाँच बौद्ध भिक्षुओं पर कई किंवदन्तियाँ भी प्रचलित हैं। इन सब प्रमाणों के आधार पर यह निश्चय हो जाता है कि बौद्ध धर्म अमेरिका पहुँचा था और भिक्षुओं द्वारा इसका प्रचार भी हुआ था। यूरोप के कई विद्वानों ने यह प्रमाणित कर दिया है कि अब से चौदह सौ वर्ष पूर्व बौद्ध भिक्षु अमेरिका में पहुँचे थे।

अठाहरवीं शताब्दी में अफगानिस्तान में भी बौद्धों का पूर्ण प्रभाव था। वहाँ की जनता आर्य थी। बलख, चमन, गान्धार और काबुल में हिन्दू साम्राज्य था। कनिष्क के वंशधर वहाँ राज्य करते थे। उनकी राजधानी काबुल में थी। सम्राट् कनिष्क गर्मी की ऋतु में काबुल रहते थे। जिस नगर में दीपंकर बुद्ध ने अनेक चमत्कार दिखलाए थे वह अब जलालाबाद के नाम से विख्यात है। हिद्दा वह स्थान है जहाँ भगवान् बुद्ध की मृत्यु के पश्चात उनके शरीर की कुछ अस्थियाँ रखी गई थीं। उसके दर्शन करने के लिए सहस्रों यात्री दूर-दूर से आते थे। वहाँ अब भी उस समाधि के ध्वंसावशेष मौजूद हैं।

जलालाबाद, हिद्दा और काबुल में बौद्ध कालीन मूर्त्तियाँ, मूर्त्ति खण्ड और बहुत से चिन्ह मिले हैं जो बौद्ध युग के शिल्प और कला के सच्चे नमूने हैं।

हमारे भारतवर्ष के धार्मिक इतिहासों में यह सबसे पहली और अभी तक आखिरी घटना है कि एक हिन्दोस्तानी आदमी, हिन्दुओं से सम्बन्धित धर्म को हिन्दोस्तान में ही नहीं वरन् हिन्दोस्तान के बाहर के देशों में भी जनता की रग-रग में भर दे। यद्यपि बुद्ध के समय में अनेकों संन्यासी साधु और धार्मिक संघ थे, किन्तु भारत के बाहर भारतीय सभ्यता का प्रचार करना और अभारतीयों को भारतीय संस्कारों की शिक्षा देना बुद्ध जैसी महान आत्मा का ही काम था जो कि हिन्दुस्तान के इतिहास में सबसे निराली और स्मरणीय घटना है।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

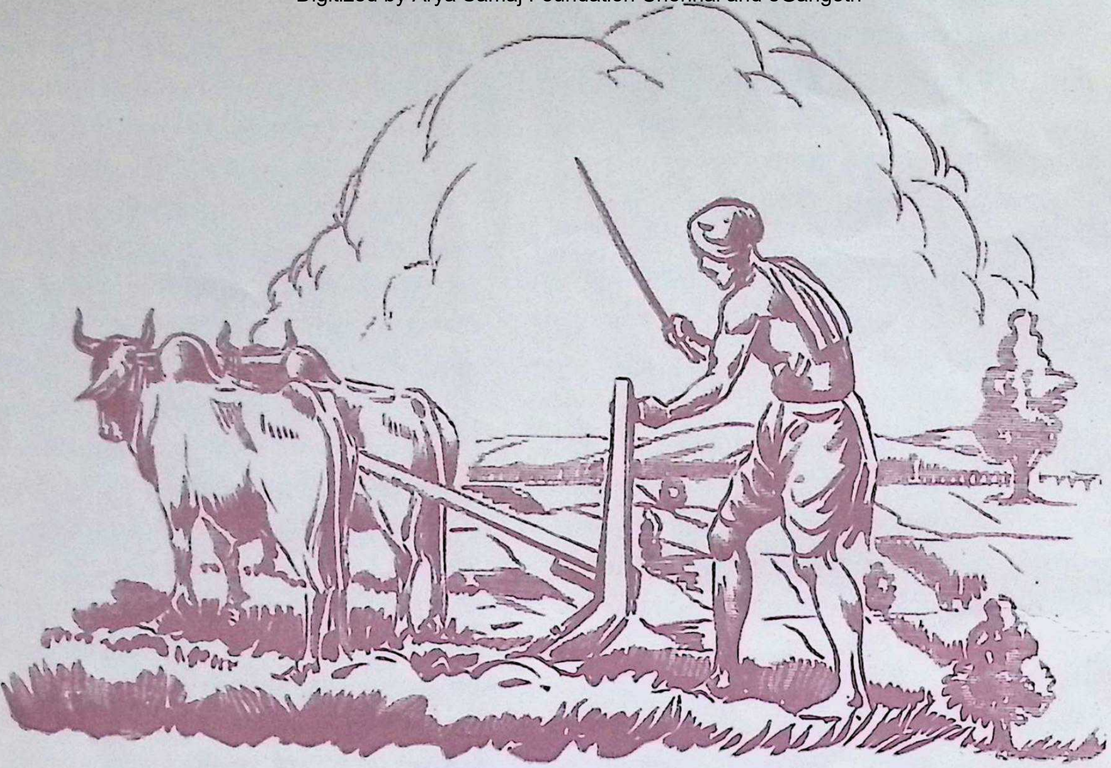

संगीत-रूपक

वर्षा के बादल

लक्ष्मी प्रसाद द्विवेदी 'चन्द्र'

बालक—आई-आई श्याम बदलियाँ, बही अहा ! पुरवाई ।
धरती पर वर्षा की बजती, मधुर-मधुर शहनाई ।
बालिका—मचल-मचल कर नयन खोलतीं, अलसाई-सी कलियाँ !
मन्द-मन्द मादक सुगन्ध से, गमकीं गलियाँ-गलियाँ !

[सह-गीत]

काले-काले मेघ गगन में छाये !
नाचे मोहक मोर, पपीहा गाये !
डाल-डाल पर 'कुहू' कोयलिया बोले !
लता-लता हिल-मिल कर बाँहें खोले !
वन-देवी का नव अञ्चल लहराये !
काले-काले मेघ गगन में छाये !
हरी दूब पर निखरी नव-रंगीनी !
सोंधी मिट्टी महकी भीनी-भीनी !
छम-छम करती पुरवैया इठलाये !
नाचे मोहक मोर, पपीहा गाये !
सिहर-सिहर इठलाती चम्पा रानी !
नभ-गंगा में देख तरंगित पानी !
बूँदों ने रिमझिम के गीत सुनाये !
काले-काले मेघ गगन में छाये !

बालक—सर-सरिताओं ने लहरों में, ली कैसी अँगड़ाई ।
कजरारे फूलों से सुरभित, नगर-डगर मुसकाई ।
बालिका—परदेशी बादल आये हैं, रस-गागर ढुलकाने ।
मन-मानस के तार-तार में, नव-झंकार जगाने ।

[गीत]

गगन में घिर रहे बादल
कगारों पर, कछारों पर,
नदी, निर्झर, किनारों पर,
उमड़ते आ रहे बादल,
घुमड़ते छा रहे बादल;
पवन के मस्त झोंको से,
गगन में तिर रहे बादल !
गगन में घिर रहे बादल !!
उमंगों से उछाहों पर,
धुएँ की तरल बाँहों पर,
गरजते झूमते बादल,
बरसते चूमते बादल,
धरा की प्यास हरने को,
गगन से झिर रहे बादल !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गगन में घिर रहे बादल !!

बालक—सतरंगी साड़ी को पहने, सज-धज कर अलबेली।
मेघ कुमारी खेत-खेत में, करती नव अठखेली।

बालिका—चम-चम करते नन्हें मोती, शतदल पर इतराते।
फूलों की सीढ़ी पर चढ़ कर, इन्द्रलोक को जाते।

[गीत]

दूर देश से बादल आए, दूर देश से बादल आए;
बरसाते रस-धार !
आशा के मधु-गीत सुनाते,
कितना पावन प्यार लुटाते;
रिमझिम के भूले गीतों में,
भरते नव-झंकार !
बरसाते रस-धार !
हरियाली हिलकोरें खातीं,
नदियाँ इठलातीं मदमातीं;
झिर-झिर झिर-झिर करती बहती,
शीतल मधुर बयार !
बरसाते रस-धार !
झूम रही जग-उपवन डाली,
छलक रही खुशियों की प्याली;
जल-परियाँ पावस में करतीं,
धरती का शृंगार !
बरसाते रस-धार !

बालक—श्यामल बादल चले जा रहे गीले-गीले !
विदा-समय छलकाते आँसू सुघर-सजीले !

बालिका—चम्पा रानी, शीश झुका कर आकुल रोई !
सुख-सपनों को सलज सँभाले खोई-खोई !

[सह-गान]

ओ, पावस के काले बादल,
उमड़-घुमड़ कर आओ !
ओ, परदेशी सखा-सलोने,
रिमझिम रस बरसाओ !
तुम्हें देख हरियाली हँसती,
कलियाँ भी मुसकातीं !
नदियाँ, नाले, ताल, तलैयाँ,
लहर-लहर लहरातीं !
चढ़े हवा-रथ धीरे-धीरे,
पावस-गीत सुनाओ !
ओ, पावस के काले बादल,
उमड़-घुमड़ कर आओ !
नाचे मोर, पपीहा बोले;
दादुर शोर मचाए !
पेड़-पात को मस्त हिलाती,
पुरवैया इठलाये।
दूर देश के श्याम सलोने,
बंशी मधुर बजाओ !
ओ, पावस के काले बादल,
उमड़-घुमड़ कर आओ !
हरी घास पर झिरीं फुहारें,
चम-चम चमके पानी।
मोती से अञ्चल भरती है,
चञ्चल चम्पा रानी !
ओ, नवजीवन देने वाले,
आओ, आओ, आओ !
ओ, पावस के काले बादल,
उमड़-घुमड़ कर आओ !!

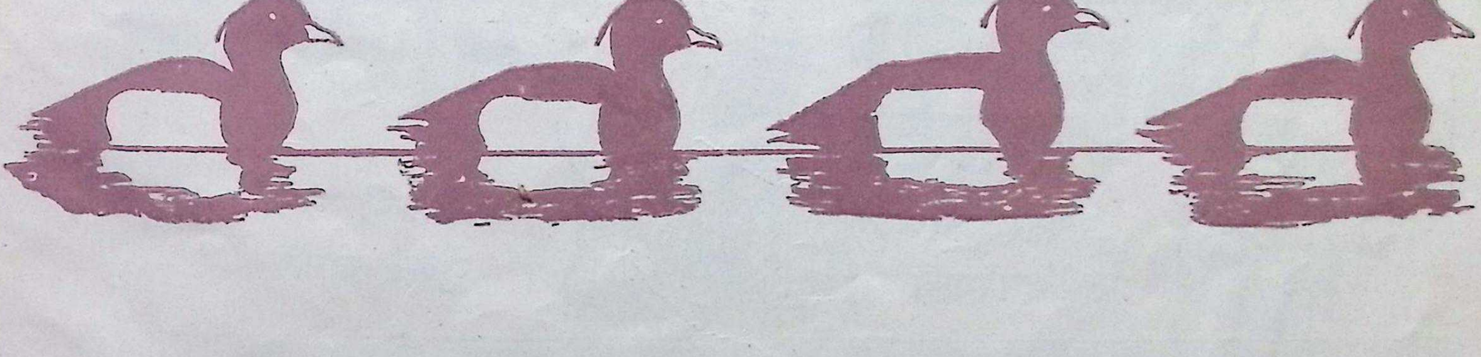

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोई रोक नहीं सकता !

आशाकान्त बी॰ आचार्य

तुम अच्छे बनना चाहो,
कोई रोक नहीं सकता !
तुम अपनी लगन निबाहो,
कोई टोक नहीं सकता !

जिसको अपने बल चलना
क्या वह गैरों को तकता !
दृढ़ होकर चलने वाला
तुम को देख नहीं थकता ।

तुम चलना चाहो, मत सोचो
जग साथ नहीं आता ।
मानव को खुद के श्रम के बिन,
सुख हाथ नहीं आता ।

तुम सच्चे रहना चाहो,
कोई रोक नहीं सकता ।
मन को शुभ सीख सिखाओ,
कोई रोक नहीं सकता ।

दुनिया कहती है बुरा
जिसे वह समझ नहीं सकती ।
उसको न तुम्हारी चिन्ता
बकने दो वह जो बकती ।

फबती वे कसते जिन्हें
दूसरा काम नहीं होता ।
बढ़ने वाला झंझाओं में
विश्वास नहीं खोता ।

तुम शूल और विघ्नों में
धीरज को न कभी खोना
तुम सब कुछ कर सकते हो,
इतना क्यों निराश होना ?

जो ताकत मन के भीतर
कोई छीन नहीं सकता ।
तुम गाओ, कोई तोड़
तुम्हारी बीन नहीं सकता !

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत की एकता का निर्माण

(सरदार वल्लभ भाई पटेल)

भारत की एकता के निर्माता सरदार पटेल के २७ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भाषणों का यह संग्रह हाल ही में प्रकाशित हुआ है।

१५ अगस्त १९४७ को जब भारत स्वाधीन हुआ, तब भारत में ९ प्रान्तों के अतिरिक्त ५८४ रियासतें थीं। इन ५८४ रियासतों में केवल हैदराबाद, काश्मीर और मैसूर यही ३ रियासतें ऐसी थीं, जो आकार और आबादी के लिहाज़ से पृथक् राज्यों का रूप धारण कर सकती थीं। अधिकांश रियासतें बहुत छोटी थीं और २०२ रियासतें तो ऐसी थीं, जिनका क्षेत्रफल १० वर्गमील से अधिक नहीं था। उस पर भी ये सब की सब रियासतें शासन की पृथक् इकाइयाँ बनी हुई थीं।

भारत के प्रथम उपप्रधान मन्त्री सरदार वल्लभ भाई पटेल ने दो वर्षों के भीतर ही सम्पूर्ण भारत को एक बना दिया। उक्त ५८४ रियासतों का ५,८८,००० वर्ग मील क्षेत्रफल और १० करोड़ के लगभग आबादी इस अल्प-काल ही में भारत के आन्तरिक भाग बन गए। उसी तरह, जिस तरह भारत के अन्य राज्य हैं। हैदराबाद, मैसूर और काश्मीर को पृथक्-पृथक् और अन्य कितनी ही रियासतों के संघ बनाकर उन्हें 'बी' श्रेणी के राज्य बना दिया गया। सैंकड़ों छोटी-छोटी रियासतें आसपास के बड़े राज्यों में मिला दी गईं। परिणाम यह हुआ कि भारत भर में पूर्ण प्रजातन्त्र स्थापित हो गया और सन् १९५२ का निर्वाचन समूचे देश में बालिग़ मताधिकार के आधार पर समान रूप में हुआ।

इस नवीन भारत की एकता के निर्माण में सरदार पटेल के इन २७ भाषणों का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। स्वाधीनता के पहले २½ वर्षों की भारतीय समस्याओं पर इन भाषणों में जो प्रकाश डाला गया है, उसका महत्त्व ऐतिहासिक है। ये भाषण देश के लिए चिरकाल तक प्रकाश-स्तम्भ का काम देते रहेंगे।

इस अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और ऐतिहासिक ग्रन्थ का मूल्य प्रचार के उद्देश्य से बहुत कम रक्खा गया है। पुस्तक में ३५० बड़े आकार के पृष्ठों के अतिरिक्त १६ पृष्ठ सरदार पटेल के सुन्दर चित्र और नवीन भारत का एक मानचित्र भी दिया गया है।

मूल्य : सजिल्द ५) रुपया

प्रकाशक :

पब्लिकेशन्स डिवीज़न,

ओल्ड सेक्रेटेरियट,

दिल्ली-८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्कृष्ट प्रकाशन

महात्मा गान्धी

महात्मा गान्धी की कहानी—चित्रों में

यह चित्रमय कहानी काल क्रम अनुसार है और महात्मा गान्धी के अलौकिक जीवन के महत्त्वपूर्ण अध्यायों में बँटी हुई है। यह आशा की जाती है कि इस समय तक उनके जीवन तथा कार्य-कलाप के सम्बन्ध में जो प्रचुर सामग्री एकत्र हुई है यह प्रकाशन उसका उपयुक्त चित्रमय पूरक प्रमाणित होगा।

सादा जिल्द १०) रु०
सिल्क जिल्द १५) रु०

स्वाधीनता और उसके बाद—
जवाहरलाल नेहरू के भाषण

प्रधान मंत्री नेहरू के १६४६ से १६४६ तक विशेष अवसरों पर दिए गए ६० महत्त्वपूर्ण भाषण। स्वाधीनता, महात्मा गान्धी, साम्प्रदायिकता, काश्मीर, हैदराबाद, शिक्षा, उद्योग, भारत की वैदेशिक नीति, भारत और राष्ट्र मण्डल, भारत और विश्व, आदि विषयों पर। सभी दृष्टियों से संग्रहणीय और पठनीय ग्रन्थ। रु० ५)

भारत दर्शन

(चित्रों में)

भारत की [illegible]नी दिग्दर्शित करने वाले विविध चित्रों [illegible]नमोल संग्रह है। देश के निवासी, पशु, वनस्पति, प्राकृतिक रचना, आदि का विहंगावलोकन। भारतीय जीवन विचारधारा, परिस्थिति, प्राकृतिक दृश्य इत्यादि, विभिन्न पहलुओं का स्थलानुरूप समावेश। रु० ७॥)

भारतीय कला का सिंहावलोकन

मोहिन्जोदरो के समय से लेकर भारत के प्राचीन मध्ययुगीन तथा आधुनिक कला के ३७ रंगीन और १०० एक रंगी चित्रों का संग्रह। रु० ६॥)

भारत की एकता का निर्माण

अगस्त, १६४७ से दिसम्बर १६५० तक भारत के इतिहास के तेजस्वी काल में दिए गए सरदार वल्लभ भाई पटेल के २७ महत्त्वपूर्ण भाषण जो स्वतन्त्र भारत के निर्माण का यथार्थ प्रमाण हैं कई दुर्लभ चित्रों सहित। रु० ५)

पब्लिकेशन्स डिवीज़न,

ओल्ड सेक्रेटेरिएट, दिल्ली-८

Published by the Director, Publications Division, and printed by the Production Officer, United Press, Government of India, Old Secretariat, Delhi

Regd. No. D—508

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाल भारती

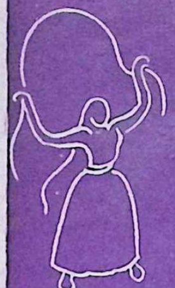

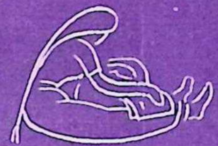

अप्रैल १९५६

मूल्य ।=) आने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कथा-माला

हमारे देश में स्वस्थ और मनोरंजक बाल-साहित्य का अभाव है। इस कमी को पूरा करने के लिये भारत सरकार भरसक कोशिश कर रही है। इसी सिलसिले में कथा-माला के तीन भाग निकाले गये हैं। देश-विदेश की लोक-कथाएँ—इसमें भिन्न-भिन्न देशों की १६ चुनी हुई लोक-कथाएँ हैं। पुस्तक में पचास से ऊपर चित्र और ७४ पृष्ठ हैं। भारत की लोक-कथाएँ—इस पुस्तक में एक से एक बढ़िया २२ सचित्र लोक-कथाएँ हैं। पुस्तक में ६० से ऊपर चित्र और ६४ पृष्ठ हैं। इस कथा-माला का तीसरा पुष्प है मनोरंजक कहानियाँ—इस संग्रह में एक से एक अनूठी और हास्य रस की कहानियाँ हैं। अनेक चित्रों ने इसमें चार चाँद लगा दिये हैं। प्रत्येक पुस्तक का दाम केवल एक रुपया है।

इन लोक-कथाओं के संग्रह पर महानुभावों की बहुमूल्य सम्मतियों के कुछ अंश नीचे उद्धृत किये जाते हैं—

कथाएँ इतनी रोचक और मनोरंजक हैं कि बच्चे इसे समाप्त किए बिना उठना ही नहीं चाहते। कथाओं के आकर्षण में चित्रों ने भी वृद्धि की है। इस बालोपयोगी रोचक कथा-संग्रह के लिए प्रकाशक और सम्पादिका को हम बधाई देते हैं।

—हिन्दुस्तान टाइम्स

प्रस्तुत पुस्तक के प्रकाशन से केवल मनोरंजन ही नहीं बल्कि हिन्दी साहित्य की एक कमी पूर्ण हो गई। आज ऐसे प्रकाशनों की अत्यन्त आवश्यकता है। इस दृष्टि से पुस्तक का मूल्य और भी बढ़ जाता है।

—दक्षिण भारती

संग्रह करते समय सम्पादिका ने इसके साथ श्रम किया है, फलस्वरूप कहानियाँ सुन्दर और आकर्षक बन गई हैं। भाषा सरल, सुबोध और मँजी हुई है। कहानियाँ मनोरंजक हैं। पुस्तक की छपाई और गेटअप आदि सुन्दर है। ऐसी बालोपयोगी पुस्तकों का प्रकाशन कर सरकार ने स्तुत्य कार्य किया है।

—आज

मिलने का पता :

पब्लिकेशन्स डिवीज़न

ओल्ड सेक्रेटेरियट, दिल्ली—८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

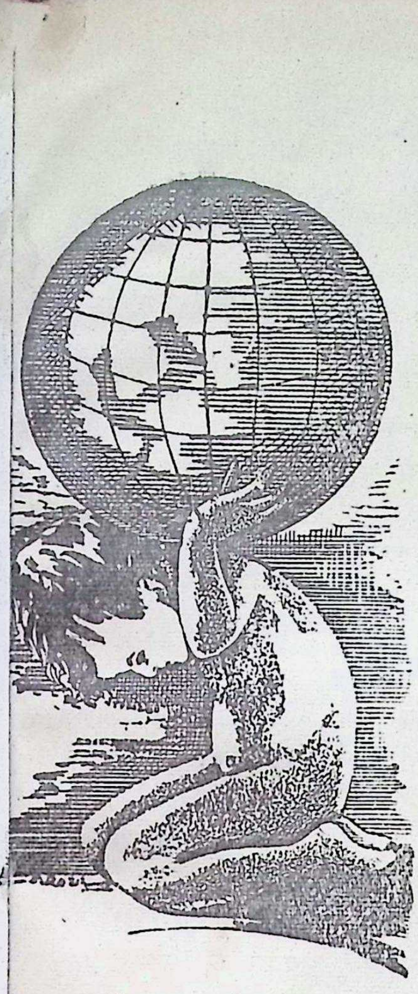

जिन बालकों को

बड़े हो कर इस पृथ्वी का बोझ उठाना है

उनका पालन 'नौनिहाल' पर होना चाहिए

नौनिहाल

छोटे बच्चों को हृष्टपुष्ट बनाने

तथा उनका मन भाता टानिक

हमदर्द दवाखाना वक्फ

देहली

Hamdard

बाल भारती

संख्या ११ अप्रैल १९५६ वर्ष ८

सम्पादक

प्रयागनारायण त्रिपाठी

सहकारी सम्पादक हिन्दी विभाग

विषय-सूची

सत्यवादी गोखले	सर्वेश्वर दयाल सक्सेना	...	२
हरसिंगार के फूल (कविता)	वीरेन्द्रकुमार जैन	...	४
नेकी का पुरस्कार	श्रीकृष्ण	...	५
सुधार	नन्दलाल चत्ता	...	८
लोरी (कविता)	राजेन्द्र किशोर	...	११
बोतल का भूत	सावित्री देवी वर्मा	...	१२
हमारे प्राण रक्षक 'फायर ब्रिगेड'	शान्ता रंजन	...	१४
वैज्ञानिकों के जीवन से	उदय कुमार यादव	...	१६
किसान बच गया	वेणीप्रसाद शर्मा	...	२०
नया युग (कविता)	घनश्याम काश्यप	...	२१
जैसी करनी वैसी भरनी	अनिल कुमार	...	२२
एक मूर्ख और दो ठग	घनश्याम सेठी	...	२४
वायुयान	कुमारी कृष्णा	...	२५
शेर, मछली और आदमी	विजय चौहान	...	२७
चोर मैना	इन्दु लेखा	...	२८
बाल-समाचार	...	...	२९
बुद्ध-शिक्षा	अतुलानन्द चक्रवर्ती	...	३०
हम बाल-भारती पढ़ते हैं (कविता)	नीलम पारीक	...	३२
बाल-भारती (कविता)	अमरेन्द्र कुमार सिन्हा	...	३२

वार्षिक मूल्य—चार रुपये, १ डालर या ७ शिलिंग

एक प्रति—छः आने, १० सेंट या ८ पेंस

पब्लिकेशन्स डिवीज़न, ओल्ड सेक्रेटेरियट, दिल्ली-८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सत्यवादी गोखले

सर्वेश्वर दयाल सक्सेना

[टन-टन टन-टन घंटे की आवाज, लड़कों के भागने-दौड़ने की आवाज। बीच में एक स्वर—"अरे ओ मेरी कापी तो देता जा, घंटा बजा नहीं कि सर पर पैर रख कर भागने लगा।" लड़कों की घुस-पुस, शोर, सीटी, एक रुआसी आवाज—"देख के नहीं चलता मेरी दवात तोड़ दी।" थोड़ी स्टूल और बेंच के हटाये जाने तथा गिरने की खटपट और बाद में पूर्ण शान्ति। घंटे की आवाज भी समाप्त हो जाती है।]

पहला स्वर—तुम अभी नये-नये इस स्कूल में आये हो?

दूसरा स्वर—हाँ!

प० स्वर—तुम्हारा नाम क्या है?

दू० स्वर—गोपालकृष्ण गोखले।

प० स्वर—अच्छा हुआ, गोपाल. जो हमारी तुम्हारी सीट पास-पास है। तुम यहीं बैठना। मैंने बहुत सोच-समझ के यह जगह तलाश की है। एक तो सबसे पीछे है और दूसरे दरवाजे के पास। मास्टर की निगाह बचा कर खिसकना बड़ा आसान है। क्यों यार? क्या मैं गलत कह रहा हूँ?

गोपाल—ठीक है, लेकिन…

प० स्वर—लेकिन क्या?

गो०—यही कि दर्जे से भागना क्या बहुत जरूरी है? मैं तो समझता हूँ इसमें मेरा ही नुकसान है। जब पढ़ने आये हैं तब फिर भागें क्यों?

प० स्वर—अबे यार, तुम निरे बौड़म ही निकले। नुकसान-वुकसान क्या? मुझे देखो। परीक्षा में सबसे ज्यादा नम्बर मारता हूँ। लोग हैरान रहते हैं कि हमेशा दर्जे से गायब रहता है। दिन-रात खेलता रहता है फिर भी नम्बर सबसे ज्यादा मारता है।

गो०—सो कैसे भाई?

प० स्वर—(थोड़ा हँस कर) अरे बुद्धू! नकल मारता हूँ, नकल! इतनी सफाई से, कि क्या मजाल है कि कोई भाँप भी सके।

गो०—लेकिन यह तो अच्छा नहीं है।

प० स्वर—क्यूँ, क्या दर्जे में बैठकर मक्खी मारना अच्छा है? तुम नहीं जानते हो इस मास्टर को आता-जाता खाक नहीं। आएगा, बोर्ड पर सवाल लिख देगा। फिर चश्मा माथे पर चढ़ा कर ऊँघेगा। चलते समय सबकी कापियाँ देखेगा। जिसका सवाल गलत होगा उसकी खूब ठुकमार करेगा। मैं तो उसके आते ही खिसक जाता हूँ। मैं औरों की तरह गधा नहीं हूँ कि यहाँ बेंत खाने के लिए बैठा रहूँ।

गो०—सच, क्या बहुत मारता है?

प० स्वर—और क्या? एक लड़के को तो इतना मारा था कि वह एक महीने तक बीमार रहा।

गो०—तुम क्या कभी पकड़े नहीं जाते?

प० स्वर—पकड़ा क्यूँ नहीं जाता, जिस दिन पकड़ा जाता हूँ कोई बहाना कर देता हूँ। और फिर जिस किताब से यह सवाल देता है उसका हल मेरे पास है। आरम्भ से नकल करके रख देता हूँ। मार खाने की नौबत तो दूर रही ऊपर से शाबाशी मिलती है। दर्जे के सामने मेरी खूब तारीफ होती है।

गो०—लेकिन इससे योग्यता तो नहीं बढ़ती?

प० स्वर—ओफ़ ओ! मुझे दया आती है तुम्हारी अकल पर। अभी से आप योग्यता के पीछे लाठी लेकर पड़ गये। बचपन खेलने-कूदने के लिए होता है, योग्यता के लिए नहीं। योग्यता के लिए तो सारी जिन्दगी पड़ी है, जब बड़े होना तब इसकी बात करना।

गो०—लेकिन भाई, बचपन में बिना मेहनत किये कोई बड़ा होने पर योग्य थोड़े ही होता है। बचपन की मेहनत ही आगे चलकर योग्य बनाती है। मैंने तो भाई अब तक यही सुना है।

प० स्वर—श्रीयुत महात्मा गोपालकृष्ण जी गोखले! आप बड़े योग्य आदमी हैं। अब शान्ति मिली आपको? तुमसे तो देखता हूँ बहस करना भी मुश्किल है। बाज आया मैं तुमसे। देखने में तो इतने सीधे और भोले लगते हो, लेकिन हो बड़े रंग उस्ताद। अभी से योग्यता, सचाई, ईमानदारी की रट लगानी शुरू कर दी आपने। मैंने तो सोचा था चलो हम तुम पास-पास हैं, खूब मजा लेंगे, एक साथी मिला। लेकिन अब तो देखते हैं हमारी-तुम्हारी पटेगी नहीं!

गो०—नहीं भाई! मेरी मजाक मत उड़ाओ। मैं क्या करूँ? मुझे तो घर पर अब तक यही सब सिखाया गया है।

प० स्वर—अरे, घर वाले तो यह सब सिखाते ही हैं। उनकी बात को गोली मारो और करो वह जो अपने मन में आये।

गो०—फिर उनकी सीख सुनने से लाभ!

प० स्वर—लाभ-वाभ तो आप ऐसे महात्मा समझें। यहाँ लाभ की जरूरत नहीं, यहाँ तो मौज की बात है मौज की।

गो०—वाह रे आपकी मौज! मौज के लिए आप गलत काम भी कर सकते हैं?

प० स्वर—हाँ भाई, हम तो कर सकते हैं। आप बचे रहिये। अभी जब कड़े-कड़े सवाल मास्टर दे देगा और गलत हो जाने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर खूब मरम्मत करेगा तब आपको सही और गलत की तमीज़ आवेगी।

गो०—सचमुच क्या वह बहुत मारता है ?

प० स्वर—और तो क्या झूठ ? देर ही कितनी है ? अभी थोड़ी देर में सब सामने आयेगा ही। अरे, वह देखो, मिचमिचाता हुआ आ रहा है। मैं तो मौका देखकर खिसक जाऊँगा। तुम्हें चलना हो तो तुम भी चलो। नहीं तो महात्मा बने बैठे रहो। (दूर से फर्श पर जूतों की आवाज, लड़कों के खड़े होने के कारण कुर्सी और मेज की खटखट और फिर शान्ति।)

प० स्व०—देखा ! आते ही चुपचाप उसने बोर्ड पर लिखना शुरू कर दिया और बस अभी थोड़ी देर बाद कुर्सी पर बैठकर ऊँघेगा।···अरे यार यह तो बड़ा मुश्किल सवाल लगता है—सुनो भाई गोपाल, मैं तो अब खिसकूँगा, तुम्हें चलना हो तो तुम भी चलो।

गो०—नहीं भाई, मैं नहीं जाऊँगा।

प० स्व०—तुम्हें क्या यह सवाल आसान लगता है ?

गो०—नहीं, मैंने तो इस किस्म का सवाल अभी तक नहीं किया।

प० स्व०—तब फिर तुम यहाँ मार खाने के लिए बैठे रहो। मैं तो जाता हूँ, और देखो बहुत ईमानदार न बनो तो यह रहा हल। चुपचाप नकल मार देना। नहीं तो वह बेभाव की पड़ेगी कि जिन्दगी भर याद करोगे। अच्छा लो मैं खिसका, इस घंटे के बाद फिर मिलूँगा।

[हल्की-सी जूते की आवाज]

मास्टर—तुम लोग जल्दी से इस सवाल को पूरा कर के दिखाओ। घंटा अब खतम होने वाला है। उस तरफ़ अब क्या देखते हो ? अपनी कापी की तरफ़ देखो···खबरदार! जो दूसरे की नकल की, नहीं तो मारते-मारते भुरकुस निकाल दूँगा। क्यों बे क्या पूछ रहा है ? देखता हूँ मोहन तुम्हारी शरारत बहुत बढ़ रही है। अब तुम्हारी शामत आने ही वाली है। (मेज पर हाथ पटकते हुए) बिल्कुल आवाज न हो। चुपचाप अपना काम करो।

[कुर्सी खिसकाने की आवाज, फिर थोड़ी देर की शांति।]

तीसरा स्व०—जल्दी करो, चलो पीछे से तुम। (पैर की आवाज़, कागज की खड़खड़ाहट।) और गधे यह क्या किया ? जरा-सा हिसाब तक नहीं आता ? दिमाग तो कहीं और रहता है। हाथ खोलो ! (हाथ पर बेंत मारने की सटाक-सटाक आवाज, कापी फेंकने की आवाज़) तुम्हारी अभी वही हालत है, भाग यहाँ से, चलो दूसरे···। (फिर कागज खड़खड़ाने की आवाज, कुर्सी की खटपट और जूतों की आवाज) तुम्हारी भी वही हालत है, हाथ खोलो ! (बेंत की सटाक-सटाक की आवाज़) चलो तुम। (फिर वही जूते, कागज और कुर्सी की आवाज।) हाँ ठीक है। शाबाश। तुम्हारा नाम क्या है ?

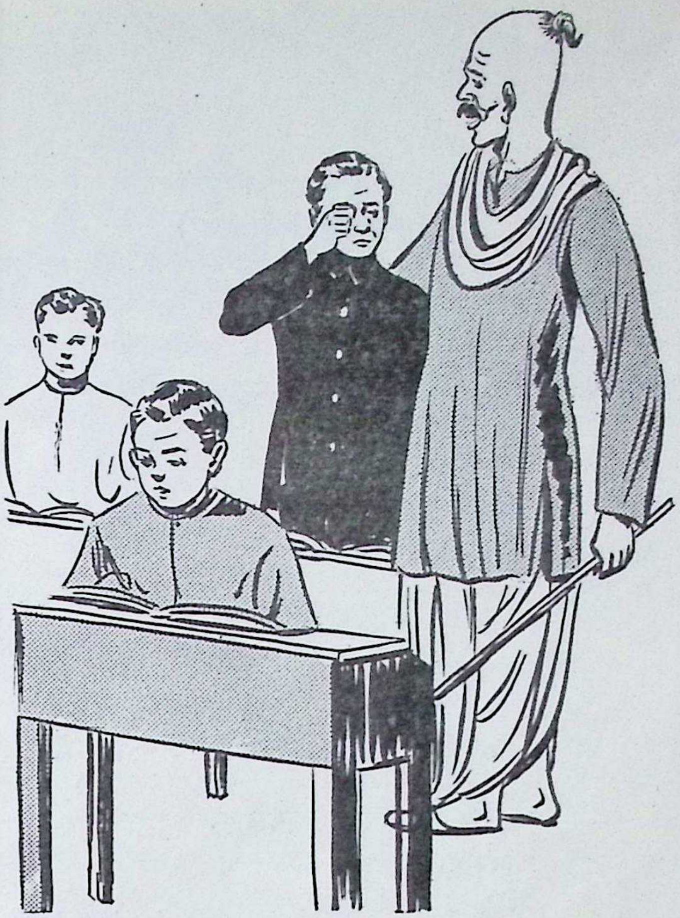

गोपाल—गोपालकृष्ण गोखले।

तीसरा स्व०—तुम तो अभी नये आये हो न ?

गोपाल—जी हाँ !

तीसरा स्व०—यह जवाब ठीक है। मैं बोर्ड पर लिखे देता हूँ। जिन लोगों का जवाब मिलता है वह हाथ उठायें। (बोर्ड पर लिखने की आवाज) ऐं किसकी आवाज ! किसी की भी नहीं ? तुम सब गधे हो ! यह देखो तुम्हारे दर्जे का सबसे छोटा और सबसे नया लड़का है, गोपालकृष्ण गोखले। इसका सवाल ठीक है और तुम लोगों का नहीं। शर्म आनी चाहिए तुम लोगों को। पढ़ने में अगर तबीयत न लगती हो तो तुम लोग सब जाकर घर बैठो। एक मामूली-सा सवाल तक नहीं निकाल सकते ! शाबाश गोखले ! शाबाश ! तुम इसी तरह मन लगाकर पढ़ो, तुम एक दिन दुनियाँ के बड़े आदमी बनोगे, और ये सब गधे के गधे रह जायेंगे। मैं तुम से बहुत खुश हूँ। (अचानक सिसकियों की आवाज, जो बढ़ती ही जाती है) यह क्या गोखले, तुम रो क्यों रहे हो ?

गोपाल—(रोनी आवाज में सिसकियाँ भरता हुआ) मैं···मैं इस···प्रशंसा···के योग्य नहीं······।

तीसरा स्व०—क्यूँ, तुम प्रशंसा के योग्य क्यों नहीं हो ? तुम्हारा सवाल ठीक है। और तुम्हें तो इस बात की और खुशी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होनी चाहिये, कि दर्जे में एकमात्र तुम्हारा ही सवाल सही है।

गोपाल—(और बढ़ी हुई सिसकियों के बीच) मैंने नकल की है।

तीसरा स्व०—क्यूँ ?

गोपाल—लोग···कहते थे सवाल···न सही होने पर आप··· बहुत मारते हैं। (सिसकियाँ भरता हुआ)

तीसरा स्व०—मेरी आदत खराब है लेकिन अब मैं नहीं मारूँगा। मैं तुम्हारी सचाई से खुश हुआ। देखो लड़को, तुम इसकी सचाई से सबक लो। दुनिया में सच्चे और ईमानदार आदमी ही महान् होते हैं। तुम महात्मा बनोगे।

(घंटा फिर टनटन करता है। मास्टर के जाने से फर्श पर जूतों की आवाज, फिर अचानक लड़कों के भड़भड़ा कर उठने की आवाज। शोर, मेज और कुर्सियों की खटपट, सीटी और इसी बीच में···)

पहला स्व०—वाह! तुम तो महात्मा हो गये! मैं तो तुम्हें महात्मा गोखले अभी से कहूँगा! देखो भाई, महात्मा हमें भी बना दो, अब तुम जैसा कहोगे वैसा करूँगा, तुम्हारी कसम। मैं कहीं गया थोड़े ही था। बाहर दरवाजे पर खड़ा सब सुन रहा था। (हल्की-हल्की सिसकियाँ चलती ही रहती हैं) अच्छा भाई अब चुपो तो।

★

हरसिंगार के फूल

वीरेन्द्रकुमार जैन

हरसिंगार के फूल
मीठे हरसिंगार के फूल!

इनके डंठल हैं केसरिया,
उजली नाजुक हैं पाँखड़ियाँ,
जैसे परियों की आँखड़ियाँ,
हरसिंगार के फूल,
कोमल हरसिंगार के फूल!

साँझ-सवेरे झर-झर जायें,
झाड़-तले ये सेज बिछायें,
मीठी-शीतल परिमल छाये,
हरसिंगार के फूल,
नन्हें हरसिंगार के फूल!

सौरभ इनकी बड़ी सुहानी,
बिन बोले कह रही कहानी,
यह लो मेरे मन की बानी,
हरसिंगार के फूल,
मीठे हरसिंगार के फूल!

प्रात पवन में जब ये झरते,
मानों प्रभु के चरणों चढ़ते,
पूजा से जीवन को भरते,
हरसिंगार के फूल,
पावन हरसिंगार के फूल!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नेकी का पुरस्कार

श्रीकृष्ण

बहुत समय पहले कंचनपुर में एक राजा राज्य करता था, नाम था यशोवर्मन। राजा के दो रानियाँ थीं। बड़ी का नाम था सुमति और छोटी का कुमति। दोनों अपने-अपने नामों को चरितार्थ करती थीं। बड़ी रानी सुमति बहुत ही सीधी-सादी, दयालु और नेक थी। उसके दिल में सम्बन्धियों के लिए प्रेम और गरीबों के लिए दया थी। सारी प्रजा उसे चाहती थी। किन्तु छोटी रानी गुणों में बड़ी रानी से बिलकुल उल्टी थी। वह बड़ी ही क्रूर, दुष्ट और ईर्ष्यालु थी। सब उसकी निन्दा करते थे, पर राजा के डर से कुछ कहते नहीं थे।

यही कारण था जो बड़ी रानी की घर में एक दासी से अधिक कदर नहीं थी। छोटी रानी को तो वह फूटी आँखों भी नहीं सुहाती थी। रूखा-सूखा उसे खाने को मिलता था। झाड़ू लगाने से लेकर बर्तन मांजने तक के सब काम वही करती थी। इतने पर भी उसे चैन न मिलता था, हर वक्त उसी की जान के पीछे किल-किल लगी रहती थी। बस, किसी तरह वह अपने दिन काट रही थी।

दोनों रानियों के एक-एक पुत्र था। बड़ी रानी के पुत्र का नाम था—विजयसेन और छोटी रानी के पुत्र का नाम था—चन्द्रसेन। गुणों में दोनों अपनी-अपनी माँओं पर गए थे। विजयसेन जितना नेक, सच्चरित्र और बहादुर था, चन्द्रसेन उतना ही बेरहम, कपटी, मूर्ख और कायर था। राजा बड़ी रानी से प्रेम नहीं करता था। वह तो छोटी रानी और उसके पुत्र को चाहता था।

विजयसेन अपनी माँ की यह दशा देखकर मन-ही-मन दुखी होता, किन्तु क्या करता!

एक दिन जब वह अपने बाग में उदास बैठा हुआ था, एक बौना उसके पास आया और उसकी उदासी का कारण पूछने लगा। विजयसेन रो पड़ा।

"मेरी माँ यहाँ बहुत दुखी है। कहने को तो वह रानी है, पर वास्तव में उसकी दशा एक दासी से भी बदतर है। दासी को पेट भर भोजन तो मिल जाता है, पर उसे तो वह भी नसीब नहीं होता। बस, यही मेरी उदासी का कारण है।"

बौने ने कहा, "दिल छोटा न करो, राजकुमार! सदा किसी के दिन एक से नहीं रहते। भगवान् पर भरोसा रखो, उसके यहाँ देर है अन्धेर नहीं!"

कह कर बौना गायब हो गया।

कुछ दिन और बीत गये। एक दिन छोटे राजकुमार चन्द्रसेन ने राजा से कहा, "पिता जी, हम तो सैर को जाएँगे।"

राजा ने आज्ञा तो दे ही दी, साथ ही राह-खर्च के लिए पाँच सौ रुपये भी दिये।

अब बड़े राजकुमार विजयसेन ने कहा, "पिता जी, हम भी सैर को जाएंगे।"

राजा ने उसे आज्ञा दे दी, किन्तु राह-खर्च के लिए उन्होंने उसे केवल पचास रुपये देकर ही टाल दिया।

विजयसेन ने रुपये माथे से लगाये, माता के चरण छुये, फिर चन्द्रसेन से बोला, "भइया, सैर को मुझे भी अपने साथ ले चलो।"

चन्द्रसेन पहले तो इस बात पर राजी ही न हुआ लेकिन फिर सोच-विचार कर बोला, "अच्छा, एक शर्त पर अपने साथ ले चल सकता हूँ, तुम्हें मेरा सारा काम करना होगा।"

विजयसेन ने उसकी शर्त मंजूर कर ली। बस फिर क्या था। उसी समय दोनों भाइयों ने कूच कर दिया। चलते गये, चलते गये, कूच-दर-कूच, मंजिल-दर-मंजिल, वह एक जंगल में पहुँचे। दिन ढल चुका था और जंगल में आगे खतरा-ही-खतरा था। दोनों वहीं एक खण्डहर में पड़े रहे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोई आधी रात का समय होगा। दोनों भाइयों के कानों में दूर कहीं किसी के कराहने की आवाज सुनाई पड़ी। कराहट बहुत ही हृदय-विदारक थी। चन्द्रसेन तो उसे सुनकर भी अनसुनी कर गया और आँखें मूँदकर लेट रहा।

किन्तु विजयसेन का दिल न माना। उसने तुरन्त उठकर कपड़े पहने और आवाज वाली दिशा में चल पड़ा। आवाज किसी झोपड़ी से आ रही थी। विजयसेन ने झोपड़ी में जाकर देखा, कि टूटी-फूटी-सी खाट पर एक बहुत ही दुबला-पतला बूढ़ा लेटा हुआ था। उसके कपड़े जगह-जगह से फटे हुए थे। सारे शरीर पर बड़े-बड़े घाव हो रहे थे। उन पर बुरी तरह मक्खियाँ भिनभिना रही थीं। उसे देखते ही विजयसेन का दिल भर आया। वह बूढ़े के नजदीक बैठ गया और पास ही रक्खे हुये पानी से उसने बूढ़े के सारे घावों को धोया, फिर अपना दुपट्टा फाड़ कर उन पर पट्टी बाँधी। बूढ़े को इससे बड़ा सुख मिला। उसने आँखें खोलकर विजयसेन की ओर देखा, फिर वह बोला, "जीता रह, बेटा, तू बहुत दयालु है। तूने आज मेरे सारे दुखों को दूर कर दिया है। भगवान चाहेंगे तो तुझे इसका पुरस्कार अवश्य मिलेगा। ले, मेरे पास और कुछ तो है नहीं, केवल यह एक सोने की अँगूठी है। यही मैं तुझे देता हूँ। इसमें करामात यह है कि इसे रगड़ने से मनुष्य की सभी इच्छायें पूरी हो सकती हैं।"

विजयसेन अँगूठी पाकर बड़ा प्रसन्न हुआ।

अगले दिन फिर कूच बोल दिया गया। दोनों भाई कौशाम्बी में पहुँचे और एक सराय में ठहर गये।

कौशाम्बी में उन दिनों राजा रहूगण का राज्य था। वह बड़ा ही वीर, न्यायी और साहसी राजा था। राजा के एक लड़की थी, सुन्दर, सलोनी, गोरी-गोरी। नाम था इन्दु। इन्दु उस समय पन्द्रहवें को पार कर सोलहवें में कदम रख रही थी। राजा को उसके विवाह की चिन्ता हुई। उसने नगर में एक डौंडी पिटवा दी जिसका आशय करीब-करीब इस प्रकार था—

"जो कोई भी आज शाम को ठीक पाँच बजे सातवीं मंजिल पर बैठी हुई राजकुमारी के हरे रंग के घोड़े पर सवार हो, हरी रंग की पोशाक पहन, हरी ही गेंद मारेगा, उसी के साथ राजकुमारी का विवाह कर दिया जाएगा।"

सारे नगर में हलचल मच गई। सभी नवयुवक हरे घोड़े, हरी पोशाक और हरी गेंद की तलाश में निकल पड़े किन्तु शाम तक टक्कर मारने के पश्चात् भी कोई फल नहीं निकला। किसी को हरी पोशाक मिल गई तो उसे हरी गेंद नहीं मिली, किसी के पास हरी गेंद थी तो हरी पोशाक नहीं थी। हरे घोड़े के मिलने का तो कोई प्रश्न ही नहीं था।

राजकुमार चन्द्रसेन को जब इस घोषणा का पता लगा तो उसने उन तीनों चीजों की तलाश में अपनी ऐड़ी तक का जोर लगा दिया किन्तु बेचारे को मुँह की खानी पड़ी।

पाँच बजने में अभी आध घण्टे की देर थी। राजमहल के सामने वाले मैदान में लोगों के ठट्ठ के ठट्ठ जमा होने लगे। सभी यह देखने को उत्सुक थे कि आखिर वह कौन भाग्यशाली है जिसके सिर विजय का सेहरा बँधता है।

थोड़ा समय और बीता। पौने पाँच बजते-बजते चन्द्रसेन भी विजयसेन को खाना बनाने का आदेश दे वहाँ जा शामिल हुआ।

बस फिर क्या था। चन्द्रसेन के जाते ही विजयसेन ने जेब से वही करामाती सोने की अँगूठी निकाली और उसे पत्थर पर रगड़ा। सहसा एक बड़े जोर का धमाका हुआ और अगले ही क्षण विजयसेन के सामने एक हरे रंग का घोड़ा खड़ा था जिसकी पीठ पर हरी पोशाक रखी थी। पोशाक की जेब में एक हरी गेंद भी रखी थी।

विजयसेन ने झटपट पोशाक बदली। फिर घोड़े पर सवार हो आसमान की ओर उड़ चला। घोड़ा उड़ता गया, उड़ता गया, ऊँचा, खूब ऊँचा और जैसे ही वह राजमहल की सातवीं मंजिल पर बैठी राजकुमारी के नजदीक से गुजरा विजयसेन ने तुरन्त ही जेब से गेंद निकाल कर उसकी ओर फेंक कर मारी। गेंद राजकुमारी को जाकर लगी। नीचे लोगों ने यह देखा तो शोर मचा दिया।

राजकुमार विजयसेन यहाँ से सीधा सराय में आया, फिर अपने पुराने कपड़े पहन खाना बनाने में जुट गया।

राजा ने उसे सब जगह ढुंढ़वाया किन्तु किसी ने उसकी सूरत तो देखी नहीं थी, पता भी क्या लगता।

दूसरे दिन राजा ने फिर ढिंढोरा पिटवाया :

"यदि वह वीर आज फिर पीली पोशाक पहन, पीले घोड़े पर सवार हो, पीली ही गेंद राजकुमारी के मार कर दिखाए तब उसकी तारीफ है।"

आज भी जब चन्द्रसेन चला गया तो विजयसेन ने अंगूठी को पत्थर पर रगड़ा। अँगूठी रगड़ते ही पीला घोड़ा, पीली पोशाक और पीली ही गेंद लेकर वहाँ आ उपस्थित हुआ।

विजयसेन ने तुरन्त पोशाक बदली और पहले दिन की तरह आज भी घोड़े पर सवार हो राजकुमारी के गेंद मार आया।

रात को चन्द्रसेन ने विजयसेन के मन की थाह लेने के लिए उससे पूछा, "क्यों बे, कहीं तू तो राजकुमारी के गेंद नहीं मार आता ?"

विजयसेन ने ऐसा भोला मुख बनाकर कहा जैसे उसे कुछ भी न मालूम हो, "कैसी गेंद, भइया, मैं कुछ समझा नहीं। राजकुमारी के गेंद मारने से आपका क्या मतलब है ?"

चन्द्रसेन ने अपने मन में सोचा—'अरे मैं भी कैसा मूर्ख हूँ। इस बौड़म को तो अभी कुछ भी मालूम नहीं है। फिर गेंद मारने का तो कोई सवाल ही नहीं उठता। कहा, "कुछ नहीं, कुछ नहीं, तेरे मतलब की बात नहीं है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब दूसरे दिन भी राजा उसे ढूँढ़कर थक गया और उसका कोई पता नहीं लगा तो उसने तीसरे दिन यह डौंडी पिटवाई :

"यदि वह वीर आज तीसरी और अन्तिम बार और बैंगनी रंग की पोशाक पहन, बैंगनी रंग के घोड़े पर चढ़, बैंगनी रंग की ही गेंद राजकुमारी के मार जाए तब उसकी बहादुरी समझी जाएगी।"

इसके बाद राजा राजकुमारी के पास पहुँचा और उसे एक चाकू देकर कहा, "बेटी, इस तरह तो यदि वह लाख जन्म तक भी गेंद मारता रहे तो उसका पता नहीं चलेगा। इसलिए आज वह जैसे ही गेंद मारकर तुम्हारे पास से गुजरे तुम उसकी जाँघ में चाकू से घाव कर देना, तब उसे ढूँढ़ने में आसानी रहेगी।"

ऐसा ही हुआ। जैसे ही विजयसेन आकाश में तरह-तरह की कला-बाजियाँ दिखाता हुआ गेंद मारकर वहाँ से चला, राजकुमारी ने उसकी जाँघ में चाकू घुसा दिया।

अब तो विजयसेन बड़े चक्कर में फँसा। सराय में पहुँच कर उसने जल्दी-जल्दी घाव को धोया, फिर उस पर पट्टी बाँध कर मैले कपड़े पहन खाना बनाने में जुट गया।

उधर राजा ने अपने कर्मचारियों को आज्ञा दी, "देखो, शीघ्र जाकर उस वीर की तलाश करो और जिसकी भी जाँघ में घाव देखो, उसे सम्मानसहित राजदरबार में लिवा लाओ। घाव ताजा होना चाहिए। बस, जाओ।"

किसी तरह चन्द्रसेन के कानों में भी इसकी भनक पड़ गई। उसने सोचा, क्यों न मैं अपनी ही जाँघ में घाव कर लूँ। किसी को क्या मालूम पड़ेगा। ज्योंही यह विचार उसके मन में आया, वह तेज कदमों से सराय की ओर लपका।

लेकिन यदि मनुष्य का हर सोचा हुआ काम पूरा हो जाए तो दुनिया में आपाधापी न मच जाए। अभी चन्द्रसेन घाव करने वाला ही था, सहसा तभी राजा के कर्मचारियों ने वहाँ प्रवेश किया।

जब चन्द्रसेन के कोई घाव न मिला तो विजयसेन की बारी आई। उसने कहा, "आप अपने राजा से जाकर कह दें, मेरे घाव-आव कुछ नहीं है।"

किन्तु भला वे इतनी आसानी से मानने वाले कहाँ थे। उन्होंने अपने मन में सोचा—'हो-न-हो यही वह वीर है, जिसकी तलाश में हमने आकाश-पाताल एक कर दिया है।' बोले—"है कैसे नहीं? तुम्हें दिखलाना पड़ेगा।"

उन्होंने जबरन विजयसेन की जाँघ देखी तो वहाँ घाव मिल गया। घाव से अभी तक ताजा-ताजा खून बह रहा था। बस फिर क्या था? विजयसेन को बड़े सम्मानसहित राज-दरबार में ले जाया गया। राजा उसे देखकर बहुत खुश हुआ। उसने अपनी प्रतिज्ञानुसार राजकुमार की शादी बड़ी धूमधाम के साथ विजयसेन से कर दी।

चन्द्रसेन मन-ही-मन कुढ़ रहा था—'यह मेरा अपमान है', उसने सोचा—'किसी तरह विजयसेन का सफाया करना चाहिए। मगर किस तरह?'

रास्ते में चन्द्रसेन ने विजयसेन से कहा, "अब हमें चलते-चलते बहुत देर हो गई। गला भी सूख गया। चलो, पहले चल कर कुएँ पर पानी पी आएँ।"

विजयसेन को क्या इनकार था। उसने तो सदा ही उसकी आज्ञा का पालन किया था। मीठे स्वर से बोला, "चलो भइया।"

दोनों कुएँ के पास पहुँचे। आगे-आगे विजयसेन था और पीछे-पीछे चन्द्रसेन। जैसे ही गहराई देखने के लिए विजयसेन ने कुएँ में झाँका, चन्द्रसेन ने पीछे से उसे धक्का दे दिया।

इस प्रकार विजयसेन को मरा समझ कर चन्द्रसेन राजकुमारी को साथ ले राजधानी में पहुँचा और पिता से बोला, "पिता जी, यह कौशाम्बी की राजकुमारी है। मेरे साथ इसका विवाह हुआ है।"

छोटी रानी कुमति ने जो यह सुना तो दौड़ कर चन्द्रसेन को गले लगा लिया।

तभी राजकुमारी ने पालकी से निकल कर कहा, "यह झूठ है। यह मेरे पति नहीं हैं। इनके साथ मेरा विवाह नहीं हुआ है। मेरे पति तो पीछे आ रहे हैं।"

राजकुमारी के इतना कहते ही एक बड़े जोरों का धमाका हुआ। सब लोग चौंक पड़े। तभी आसमान से एक सफेद घोड़ा उतरा जिस पर विजयसेन और बौना बैठे थे। विजयसेन ने घोड़े से उतर कर राजा और दोनों रानियों के चरण छुए। बौने ने राजा को शुरू से आखिर तक सारा किस्सा सुना दिया।

राजा विजयसेन की बहादुरी की बात सुन कर बहुत प्रसन्न हुआ। उसने छोटी रानी और उसके पुत्र को तो देश-निकाला दे दिया और विजयसेन को पूरा राज्य सौंप कर बड़ी रानी के साथ जंगल में तपस्या करने चला गया।

कहते हैं विजयसेन बहुत दिनों तक राज्य करता रहा।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

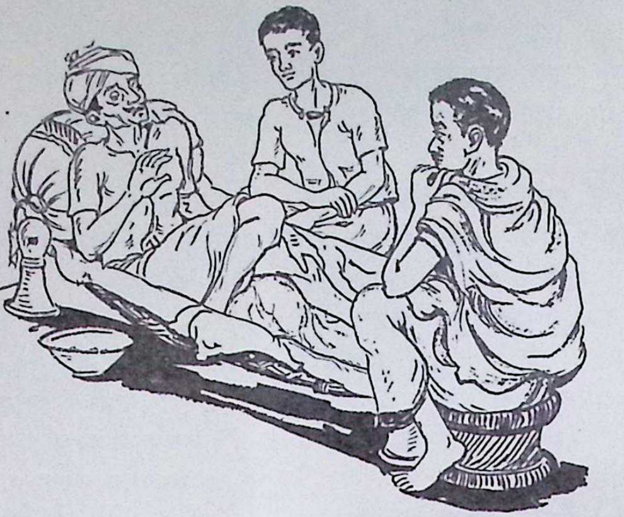

सुधार

नन्दलाल चत्ता

पात्र

१. एक बूढ़ा किसान
२. उद्यमराम
३. आलस्यदास } बूढ़े किसान के पुत्र
४. चौपट राम—गाँव का एक बेरोजगार युवक
५. मनू जी—एक ग्राम कार्यकर्त्ता

एक दृश्य

[गाँव का एक अच्छा घर । एक कमरा जिसमें खेती-बाड़ी के औज़ारों के चित्र लटकाये हुए हैं । उद्यमराम और आलस्यदास अपने वृद्ध बाप के पास, जोकि चारपाई पर लेटा हुआ है, खड़े हैं ।]

बूढ़ा किसान—(खाँसता हुआ, पहलू बदल कर) मेरी दशा अब बहुत ही खराब हो रही है । अब स्वस्थ होने की कोई संभावना है नहीं । अब तो परम पिना परमेश्वर के पास जाने की तैयारी······

उद्यमराम—(बात काट कर) पिता जी, पिता जी, ऐसा न कहिये । आप की छत्र छाया हम पर सदा के लिए बनी रहे ।

बूढ़ा किसान—बेटा यह तुम्हारी इच्छा है, परन्तु 'उसके काम वह ही जाने', और जब हरेक को यह संसार एक न एक दिन त्यागना है तो इसमें खेद की क्या बात है । परन्तु मुझे एक ही चिन्ता है और वह है आलस्य की । इसने न पढ़ने-लिखने में मन लगाया और न कोई काम धंधा ही सीखा । बहुत यत्न किया कि यह कुछ सीख जाये पर कुछ न हुआ । मेरे बाद इसको दुःख न देना ।

उद्यमराम—पिता जी यह आप क्या कह रहे हैं ? यह तो मेरा छोटा भाई है । मेरा सहारा है । आप इस चिन्ता को छोड़ दीजिये । मैं इसको किसी तरह भी कष्ट न पहुँचाऊँगा । मैं वचन देता हूँ ।

बूढ़ा किसान—(आलस्य को पास बुला कर) इधर आओ बेटा (उसका हाथ उद्यम के हाथ में देकर) यह तुम्हारा बड़ा भाई है । इसका हाथ सदा पकड़ना । किसी दूसरे से हित की आशा मत रखना । भाई से बढ़ कर और कोई शुभचिन्तक तथा मित्र नहीं । इसकी आज्ञा का पालन करते रहना ।

आलस्यदास—पिता जी, आप विश्वास रखिये, मैं आपकी कही बातों पर सदा चलूँगा ।

बूढ़ा किसान—ईश्वर तुमको ऐसा करने में सहायता दे । अच्छा अब देर हो रही है, जाओ खाना खाओ और विश्राम करो ।

[प्रस्थान]

[स्थान—वही कमरा । बूढ़ा किसान अब नहीं है । दोनों भाई बात-चीत करते दिखाई देते हैं ।]

उद्यमराम—(हँसमुख चेहरे से) मेरे अच्छे भैया । अब ज़मीन जोतने का मौसम है । चलो खेतों में जायें और बुआई की तैयारी करें ।

आलस्यदास—भैया, अभी जाने की क्या ज़रूरत । अभी तो बहुत समय पड़ा है । आप चले जायें, मैं भी स्वयं आ जाऊँगा । जरा-सा आराम कर लूँ ।

उद्यमराम—अच्छा, कोई बात नहीं थोड़ा-सा आराम करने के बाद ही आना । मैं हल जोतना आरम्भ करता हूँ । आकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हाथ बंटाना। अच्छा (जाता है) [आलस्य चारपाई पर बैठ कर आराम करने लगता है। गाँव का एक दुष्टबुद्धि व्यक्ति, जिसका नाम चौपट राम है, आता है।]

चौपट राम—राम, राम भाई आलस्य।

आलस्यदास—राम, राम, कहो चौपट, ठीक तो हो?

चौपट राम—ठीक तो हूँ ही। पर भाई अब तुम्हारे दर्शन ही नहीं होते, जैसे ईद के चाँद हो गये हो।

आलस्यदास—भैया, जब से पिता जी का देहान्त हुआ तब से अवकाश कहाँ रहा। अब हर काम स्वयं करना पड़ता है। अगर काम न करें तो खायेंगे क्या?

चौपट राम—वाह भाई काम की एक ही कही। क्या और कोई काम नहीं करता, और फिर तुम अकेले बंदे हो?

आलस्यदास—क्या कहते हो, मैं अकेला किस तरह हूँ? देखो चौपट, हम बाल-बच्चों वाले हैं। भैया भी तो काम करता ही है।

चौपट राम—अरे मूर्खानन्द! बाल-बच्चे वाला तो वह होता है जिसकी बीवी हो। भला तुम्हारा तो अभी विवाह भी नहीं हुआ है। यह सब गृहस्थी तो उद्यम की है। वाह री दुनिया। भाई भाई को अब एक समय का खाना तक नहीं खिला सकता जब तक वह भी अपनी चमड़ी रगड़ कर पैदा न करे।

आलस्यदास—देखो चौपट, तुम्हारा यह कहना ठीक नहीं। गृहस्थी मेरी भी है, या हो जायगी, तो क्या मेरा भाई उस दिन मुझे घर से निकाल देगा?

चौपट राम—सीधे मियाँ, इस स्वप्न में न रहना। भला आज तक किन दो स्त्रियों में एका रहा है? तुम्हारी बहू आएगी तो तुम्हारी भाभी के तेवर बदलने के साथ ही तुम्हारे भैया भी बदल जायेंगे।

आलस्यदास—ऐसा कभी न होगा।

चौपट राम—अजी साहब, इस भूल में न रहना। सँभलना हो तो आज से ही सँभलना। नहीं तो एक दिन रोओगे।

आलस्यदास—क्यों? रोऊँगा क्यों? यह मेरी समझ में नहीं आता।

चौपट राम—(रंग चढ़ता देख कर) तुम्हारी अकल कितनी मोटी है? इस भ्रम में न रहो कि तुम्हारा भाई सीधा-साधा है। यह दिखाने के दाँत हैं, खाने के और हैं। देखता हूँ यह तुम्हारा भाई तुम्हारी शादी भी कभी करेगा क्या? खैर एक मित्र के नाते मेरा यह धर्म था कि तुम्हें समझा दूँ। तू जान और तेरा काम जाने, मैं जाता हूँ (जाने का अभिनय करता है।)

आलस्यदास—(रोकता है) नाराज क्यों होते हो? मैंने कब कहा कि तुम मेरे मित्र नहीं हो? कहो और क्या कहना है। तुम भी तो मेरे लाभ की ही सोचोगे।

चौपट राम—(अपना वार ठीक समझते हुए) देखो—मेरा काम ठीक सलाह देना है। उस पर अमल करना तुम्हारा काम है। पहले तो मुझे यह आशा नहीं कि तुम मेरी बात मान लो। खैर कहता हूँ।

आलस्यदास—कुछ कहोगे भी कि यों ही बातें बनाते जाओगे? उपाय तो बताओ।

चौपट राम—क्या उपाय है? यही कि आज से ही सँभल कर रह। अपनी ज़मीन जायदाद का आधा भाग सँभाल ले। फिर तो कोई खतरा नहीं रहेगा।

आलस्यदास—अच्छा तो समझा अब। ठीक है। भैया तो इसी लोभ से मेरे साथ इतनी चिकनी-चुपड़ी बातें करता रहता है।

चौपट राम—तो क्या मैं गलत कहता हूँ?

आलस्यदास—नहीं तो। कौन कहता है। तुम ने तो मेरी आँखें खोली हैं। मैं इस बात का फैसला करता हूँ।

चौपट राम—हाँ, जितना जल्दी हो उतना, परन्तु क्रोध के बिना। अच्छा चलो अब चौपाल पर जावें। (दोनों का जाना)

(३)

[ज़मीन जायदाद का बँटवारा हो चुका है। उद्यम अपने खेतों में काम करता है और आलस्य चौपाल पर जुआ खेलने में व्यस्त है कि इतने में एक समाज सुधारक ग्राम कार्यकर्त्ता मनू जी वहाँ आते हैं।]

उद्यमराम—(बैलों को हाँकता हुआ) चलो बेटा, चलो। अब बस थोड़ा-सा काम शेष रह गया है। वाह रे मेरे वीरों। आज तुम्हें अच्छी से अच्छी चीजें खिलाऊँगा। ओ हा ओ हा। [हल जोतता जाता है]

मनू जी—(पास आकर मेंड़ पर खड़े होकर) उद्यमदास जी नमस्ते। कहो ठीक हो?

उद्यमराम—(बैलों को रोक कर) नमस्ते मनू जी। आप बड़े दिनों के बाद आये। कहिये सब कुछ ठीक तो है? कहिये कोई नई बात कही है हमारे प्यारे पंडित जी ने?

मनू जी—हाँ, हाँ, हमारे प्रधान मंत्री, पुजनीय जवाहरलाल जी ने आज बहुत कुछ कहा है। वही तो आपको बताने आया हूँ।

उद्यमराम—तो फिर सुनाइये न मुझे।

मनू जी—हाँ सुनाऊँगा पर वहीं, अपने स्थान पर। चलो तुम भी वहीं चलो। अब तो विश्राम का समय है। हाँ मैं आपकी वहीं पर प्रतीक्षा करता रहूँगा। (जाता है)

[मनू जी चौपाल में आते हैं]

[चौपाल पर कुछ व्यक्ति जुआ खेलते दिखाई देते हैं। उनमें आलस्यदास तथा चौपट राम भी हैं]

मनू जी—अच्छा तो यह ताश आदि व्यसनों का अड्डा कब से बना? ओह, आलस्यदास जी भी यहीं हैं। तो आप भी इस रोग के शिकार हो गये हैं? कब से? और चौपट भैया आपने यह बुरी आदत अभी भी नहीं त्यागी क्या?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चौपट राम—क्षमा करो मनू जी। आज फिर इस लत ने आन दबाया। अब कभी न खेलूँगा।

आलस्यदास—(लजाते हुए सिर नीचा किए हुए) क्षमा कीजिये। आज तक मैंने कभी जुआ नहीं खेला था। इन लोगों ने ही सिखाया।

मनू जी—(ताश के टुकड़े करके फेंकते हुए) भाई आलस्यदास, जाओ अपने भैया को आने के लिये कह दो। उनको अपने साथ ले आओ।

चौपट राम—मनू जी महाराज, ये लोग तो आपस में बोलते भी नहीं। इन्होंने तो अपनी जायदाद का बँटवारा कर दिया है।

मनू जी—क्या कहा?

आलस्यदास—हाँ मनू जी यह सत्य है।

मनू जी—(सब खिलाड़ियों पर नज़र दौड़ा कर) ठीक, वहुत ठीक। समझा तुम्हारे यहाँ आने का कारण। अच्छा तो बैठ जाओ। अभी और लोग भी यहीं आते होंगे।

[गाँव के लोगों का एक-एक करके जमा होना। उद्यमराम भी आता है।]

सब लोग—नमस्ते मनू जी! कहिए क्या समाचार है। कोई नया सन्देश है?

मनू जी—नमस्ते भाइयो! आज मैं तुम्हें अपने प्यारे नेता श्री जवाहरलाल जी का नया सन्देश सुनाने आया हूँ।

सब लोग—क्या कहा है उन्होंने? आप हमें जल्दी बता दीजिये।

मनू जी—वह तो मैं अभी सुना दूँगा। परन्तु इससे पहले आपको एक खास बात का फ़ैसला करना होगा।

सब लोग—किस बात का मनू जी!

मनू जी—हमारे नेताजी ने देश के नाम यह सन्देश दिया है कि देश को उन्नत करने के लिए हमें "आराम हराम है" का नारा अपनाना चाहिये। केवल नारा, नारामात्र ही नहीं हो बल्कि हमें सचमुच अपने आराम को त्याग कर अपने प्यारे भारत को हर प्रकार से एक उन्नत देश बनाने के लिये दिन-रात एक करना चाहिये। हाँ इसके लिए पहली महत्त्व की बात यह है कि सबसे पहले हम अपनी आपस की फूट दूर करें। मैं देखता हूँ कि हमारे इस सुन्दर से स्थान में आज दो भाई आपस में बात तक नहीं करते। क्या इसी से हमारा देश उन्नत होगा कि भाई, भाई का शत्रु बने? क्या इसी से हमारे देश की उपज बढ़ेगी कि दो भाई अपने खेतों का बँटवारा करें? क्या इसी से हमारी उन्नति होगी कि हमारे कुछ लोग बेरोजगार रह कर अपने अन्य भाइयों को भड़काने का कारण बनें? क्या इसी से हम अपना आराम हराम करेंगे? बड़े दुःख की बात है।

सब लोग—नहीं मनू जी नहीं। हमें इन बातों को दूर करना ही होगा—

मनू जी—जबानी जमा खर्च से कि कार्य रूप से? मैं देखता हूँ कि कार्य रूप में और कुछ किया जाता है, यहाँ आपके गाँव में।

लोग—क्या किया जाता है मनू जी?

मनू जी—क्या उद्यमराम और उसके भाई के झगड़े का तुम लोगों को पता नहीं? क्या तुम्हें इसके बीज का भी पता नहीं? बताओ आप लोगों ने इसको ठीक करने का क्या उपाय किया था—चुप क्यों हो गए आप—कुछ नहीं किया था न आपने—आपने इसकी परवाह भी न की—आप यह न समझ सके कि बीमारी के कीटाणु की तरह यह भी किसी दिन भयंकर रूप धारण करेगा।

लोग—मनू जी! आप ही इसका इलाज बताइये। हम कुछ समझ न सके और हमको समय भी न मिला अपने काम-धन्धे से, खेती का मौसम जो था।

मनू जी—अच्छा तो मैं ही इसका इलाज करता हूँ। आलस्यदास जी और उद्यमराम जी, आप मेरी ओर आइये और आप भी चौपट जी।

[तीनों का आना]

मनू जी—आलस्यदास भैया बताओ तुम्हारे मन में यह बुरे भाव कैसे उत्पन्न हुए? इसमें तुम्हारा ही बुरा नहीं होगा बल्कि गाँव भर का अहित होगा। यह बुरी बात आपके मन में किस तरह घुस आई?

आलस्यदास—(हाथ जोड़ कर) मनू जी, मुझे चौपट ने यह सब कुछ करने को कहा और मैंने किया। मैं मन ही मन बड़ा पछता रहा हूँ कि मैंने यह क्या किया, परन्तु अहंभाव के कारण अब झुक नहीं सकता। आपने सच-सच कहलवा दिया। (अपने भाई की ओर) भैया! मेरा यह अपराध माफ़ कर दो। मैं आगे कभी ऐसा काम न करूँगा।

मनू जी—चौपटराम जी, कहिये आपने यह क्यों किया? आपने तो तोबा की थी।

चौपट राम—कोई काम-धन्धा होता तो मेरा ध्यान ही इस ओर न जाता। बेकार अपना पेट पालने के लिये क्या नहीं करता?

मनू जी—अच्छा तो भाई उद्यमराम, मेरी यह राय है कि आप चौपट राम को भी अपने खेतों में काम करने के लिये साथ ले जाया करें। बँटवारा-शँटवारा सब कुछ भी नहीं। इसको भी अपने खेतों का तीसरा भाग दिया करें।

उद्यमराम—मुझे यह मंजूर है मनू भाई! जैसा मेरा आलस्यदास भाई है वैसा ही मैं आज से इसको भी मानूँगा। ईश्वर का दिया बहुत है, और यह भी तो मनुष्य ही है, इसका भूखा रहना तो बुरा है।

मनू जी—कहो चौपट राम जी, क्या राय है आपकी?

चौपट राम—मनू जी महाराज, मैंने तो इनकी बात सुनते ही मन में निश्चय किया है कि हर प्रकार की बुरी बात को त्याग कर उद्यम भाई का साथी बन कर इनके घर को स्वर्ग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समाज बनाऊँगा, और अपना जीवन भी सुधारूँगा।

मनू जी—भाई उद्यम, आपके विशाल हृदय को देख कर मैं बहुत प्रसन्न हुआ हूँ। सब लोगों की ओर से मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। हाँ, साथ में एक बात और कहना चाहता हूँ।

उद्यम—कहिये क्या आज्ञा है?

मनू जी—सरकार ने यह तय किया है कि अब ट्रैक्टरों द्वारा अधिक से अधिक काम लिया जाए। अतः उन्होंने एक आयोजन किया है जिससे कि आप लोग भी किस्तों पर ट्रैक्टर ले सकें और साथ में उसका चलाना भी सीख सकें।

सब लोग—सच? तो हम भी इससे लाभ उठायेंगे। हमारे लिए भी प्रबन्ध कीजिये।

मनू जी—हाँ भाई, आप लोगों के लिए भी प्रबन्ध कर दूँगा। परन्तु मैं सबसे पहले इस काम में भाई आलस्य और चौपट को जोतना चाहता हूँ। कहिए उद्यम जी, क्या मैं इन दोनों को अपने साथ ले जाऊँ?

उद्यम—आप से बढ़ कर इसको और कौन सोच सकता है? आप जो चाहें कर सकते हैं। आप अवश्य इनको अपने साथ ले जाइये।

मनू जी—अच्छा तो आप दोनों जाइये और अपना बोरिया बिस्तर तैयार कीजिये। हम लोग अभी जायेंगे। (चौपट और आलस्य का जाते दिखाई देना और बिस्तर इत्यादि साथ लेते आना।)

मनू जी—अच्छा तो भाइयो! अब मैं इनको ले जाता हूँ। फिर जल्दी ही आप की सेवा में उपस्थित हो जाऊँगा। हाँ एक बार मेरे साथ जोर से नारा लगाइये "जय हिन्द, जय हिन्द, जय हिन्द"

सब लोग—'जय हिन्द—जय हिन्द—जय हिन्द'

[सब लोगों का चौपाल से जाते दिखाई देना]

★

लोरी

राजेन्द्र किशोर

नीले गगन का नन्हाँ-सा चन्दा
होने लगा है विभोर,
कसने लगी है निंदिया की रानी
सपनों के रेशम की डोर,
सो जाओ, सो जाओ, नीले गगन को लोरी सुनाती है रात!

पलकें झपकते ही आएगा उड़कर
सपनों का नन्हाँ कुमार,
आएगी सँग में परियों की टोली
तितली की लम्बी कतार
सो जाओ, सो जाओ, सजने लगी है तारों की लम्बी बारात!

भूलेगा पल भर में भैया का मुखड़ा
बहना का पागल दुलार,
पाकर के नूतन साथी-सँघाती
सपनों का नन्हाँ कुमार,
देखो, न लड़ना साथी-सँघाती से, करना न झगड़े की बात!
सो जाओ, सो जाओ, नीले गगन को लोरी सुनाती है रात!

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बोतल का भूत

सावित्री देवी वर्मा

मानपुरा में एक बुढ़िया नाइन रहती थी। बुढ़ापे के कारण उसके गाल बैठ गए थे, बाल सफेद हो गए थे। मुँह में दाँत न होने के कारण ठोढी आगे को निकल आई थी। इससे उसकी लम्बी नाक कुछ और भी अधिक लम्बी दीखने लगी थी।

इस बुढ़िया के एक नातिन थी। इस नातिन के माँ-बाप छुटपन में ही मर गए थे। सो बुढ़िया ने ही उसे पाला-पोसा था। नातिन का नाम था लक्ष्मी। पर उसकी माँ उसे लछमिनिया कह कर बुलाती थी। बुढ़िया ने अपनी सहूलियत के लिए उसका नाम मनिया कर लिया था। मनिया एक बहुत चंचल और खिलाड़ी लड़की थी। अपनी इस आदत के कारण वह किसी भी काम को पूरा न कर पाती थी। एक दिन बुढ़िया ने मनिया से कहा—"बिटिया, मैं जरा जाकर रानी के हाथ-पाँवों में उबटन मल आऊँ, तब तक तू खिचड़ी पका कर तैयार रखना।"

रनिवास का काम ठहरा। बुढ़िया को वहाँ उबटन मलते रानी को नहलाते-धुलाते दोपहर हो गई। वहाँ से छुट्टी पाते ही वह जल्दी-जल्दी घर की तरफ चल दी। उसे बड़ी भूख लगी हुई थी। सोच रही थी जल्दी घर पहुँचूँ और खिचड़ी खाऊँ। घर आई तो उसने देखा कि मनिया का तो कहीं पता नहीं है। शायद पड़ोस में खेलने चली गई थी और खिचड़ी पतीली में जल कर कोयला हो गई थी। बुढ़िया को बहुत गुस्सा चढ़ा। वह पड़ोस से मनिया को कान पकड़ कर घर ले आई और दरवाजा बन्द करके दो-चार थप्पड़ उसे जड़े और बोली—"कलमुँही, तुझ से कुछ काम भी होता है कि दिन भर खेलने की ही धुन सवार रहती है? लड़की की जात है, कुछ शऊर नहीं सीखेगी तो पराए घर जाकर निर्वाह कैसे होगा? मैं तो तुझसे परेशान हो गई हूँ। तेरी जैसी लड़की से तो मुर्दघाट का कोई भूत भी व्याह नहीं करेगा।"

बुढ़िया के मुँह से मुश्किल से यह शब्द निकले कि किसी ने बुढ़िया का दरवाजा खटखटाया। बुढ़िया ने पूछा—"कौन है?"

उत्तर मिला—"मैं हूँ मुर्दघाट का भूत।"

बुढ़िया पहले तो डर गई। फिर उसने सोचा कि हो सकता है गली मोहल्ले का कोई शैतान लड़का मसखरी कर रहा हो और यदि सचमुच में यह भूत है तो कुछ ऐसा उपाय करना चाहिए कि यह काबू में आ जाए। इसलिए उसने हिम्मत करके पूछा—"तू किस लिए यहाँ आया है?"

भूत—"तुम्हारी नतनी से व्याह करने।"

यह जवाब सुनकर बुढ़िया बहुत घबड़ाई, पर थी वह बड़ी चतुर। बोली—'यदि तू भूत है तो दरवाजे के छेद में से मक्खी बनकर अन्दर आ।"

भूत के लिए यह बात कौन मुश्किल थी। वह बोला "अच्छा आता हूँ।"

इधर बुढ़िया ने अन्दर से छेद में एक बोतल का मुँह सटा दिया और जैसे ही भूत मक्खी बनकर बोतल में घुसा उसने बोतल में डाँट लगा कर कस कर उसे बन्द कर दिया। अब भूत महाशय अन्दर ही कैद हो गए। भूत ने बाहर निकलने के लिए काफी खुशामदें कीं पर बुढ़िया ने उसकी एक बात नहीं सुनी और इस बोतल को वह अपने शहर के बाहर एक पहाड़ी पर नीम के एक कोटर में रख आई।

बोतल को वहीं पड़े एक-दो साल बीत गए। एक दिन दूसरे गाँव का एक नाई उसी नीम के रास्ते होकर जा रहा था कि उसे सुनाई दिया कि जैसे उसे कोई पुकार रहा है। वह चौंक कर इधर-उधर देखने लगा। उसे पास के नीम के पेड़ से आवाज आती मालूम हुई। वह पेड़ के पास गया तो उसने उसके नीचे एक बोतल को उछलते-कूदते देखा। गौर से देखने पर उसमें नाई को एक बड़ी मक्खी दिखाई पड़ी। नाई सोचने लगा कि क्या इसी बोतल से आवाज आ रही थी? वह अभी इसी दुविधा में था कि बोतल में से भूत बोला "भय्या नाऊ, इस बोतल में मैं मरघट का भूत बन्द पड़ा हूँ। मेहरबानी करके तुम बोतल का डाट खोल दो। मैं तुम्हारा बड़ा उपकार मानूँगा।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूत का नाम सुनकर पहले तो नाऊ चौंका फिर कुछ हिम्मत करके बोला—"न बाबा ! तू ठहरा भूत। बोतल में से निकल कर कहीं मुझे ही चिपट जाए तो क्या करूँगा ? जिसने तुझे इसमें बन्द किया होगा, वह हिम्मत वाला कोई तेरा बाप ही होगा।"

भूत ने काँपते हुए कहा—"बाप न कहो बाबा, होने वाली सास कहो।"

नाई—"क्या भूतों के भी सास होती है ? क्या किस्सा है, बताओ तो सही।"

भूत ने कहना शुरू किया—"यह जो पहाड़ी के नीचे तुम बस्ती देखते हो न, उसी शहर में एक बुढ़िया नाइन रहती है। उसकी सूरत यदि तुम रात में देख लो तो बस डर के मारे काँपने ही लगो। उसी के एक सुन्दर-सी, प्यारी-सी नतनी है। वह बुढ़िया एक दिन खिचड़ी जल जाने पर नतनी को डांट रही थी—कि तुझे तो कोई भूत भी न ब्याहेगा। मैंने यह बात सुनली और नतनी को ब्याह कर ले जाने के इरादे से मैंने उसके घर का दरवाजा खटखटाया। पर बुढ़िया मुझ से भी चालाक निकली। उसने मुझे एक छेद में से मक्खी बन कर घर के अन्दर आने को कहा। मुझे क्या मालूम था कि उसने छेद के मुँह पर बोतल सटाई हुई है। बस, मैं जैसे ही छेद में से मक्खी बन कर घुसा कि उसने मुझे बोतल में बन्द कर दिया और यहाँ छोड़ गई।"

नाई को भूत की बात सुन कर बड़ी हँसी आई। वह बहुत दिनों से अपने बेटे के लिए एक सुन्दर बहू की तलाश में था। बुढ़िया की नतनी की बात सुन कर उसने बुढ़िया के घर जाने का तय किया। नाई को जाते देखकर भूत फिर खुशामद करके बोला—"भय्या, तुम्हारे हाथ जोड़ता हूँ, मुझे मुक्त करते जाओ। तुम डरो मत, मैं तुम्हारी इस नेकी का बदला जरूर चुका दूँगा। मैं इस देश के राजा के लड़के को जाकर धर दबाऊँगा जब तुम उस राजकुमार पर पानी छिड़कोगे तभी छूटूँगा। बस, राजा खुश होकर तुम्हें बहुत बड़ा इनाम देंगे।"

नाई को यह बात पसन्द आ गई और उसने बोतल का डाट खोल कर भूत को मुक्त कर दिया।

नाई पहाड़ी से उतर सीधा बुढ़िया के घर पहुँचा और अपना अता-पता बता कर उसने बुढ़िया की नतनी मनिया से अपने बेटे की शादी की बात पक्की कर दी। एक दिन वह कुछ खरीदने बाजार गया, तो उसने ढिंढौरा पिटता सुना कि 'राजा का बेटा बहुत बीमार है, वह रह रहकर चिल्लाता है और उसे दर्द के मारे गश आ जाता है। राजवैद्य उसका इलाज करके हार गए हैं। जो उसे अच्छा कर देगा राजा उसे दस गाँव की जागीर इनाम देगा।' नाई समझ गया कि बोतल का भूत राजकुमार को चिपटा हुआ है। वह राजदरबार में पहुँचा और उसने राजकुमार को चंगा करने का जिम्मा लिया। उसने झूठ-मूठ भूत उतारने का ढोंग रचा और कुछ मंत्र पढ़कर राजकुमार पर पानी छिड़क दिया।

अपने वायदे के अनुसार भूत राजकुमार को छोड़कर चला गया। अब तो राजा बहुत खुश हुए और उन्होंने नाई को जागीर में एक गाँव देकर अपने ही राज्य में बसा लिया। इधर नाई ने अपने बेटे से मनिया की शादी कर दी और बड़े सुख से रहने लगा।

मनिया की शादी नाई के लड़के से हो गई तो भूत को बड़ी चिढ़ लगी। वह नाई के बेटे को सताने लगा। अब तो नाई बड़ा परेशान हुआ। उसने भूत को कहा—"देख, तू मेरे लड़के को छोड़ कर चला जा नहीं तो तेरा बुरा होगा। मैंने तेरे साथ नेकी की है और अब तू मेरे बेटे को ही सता रहा है। यह ठीक नहीं है।"

पर भूत नहीं माना। आखिर नाई को एक तरकीब सूझी। उसने दस बारह ढोलक और नगाड़े वालों को इकट्ठा किया और उन्हें कहा कि गाँव की सीमा से उसके घर तक खूब जोर-जोर से ढोलक और नगाड़े पीटते हुए वे उसके घर की ओर आयें। इधर भूत नाई के बेटे की जब-जब गर्दन दबाता वह रह रह कर चिल्लाता। ढोलक व नगाड़ों की तेज आवाज सुनकर भूत ने नाई से पूछा—"यह हल्ला-गुल्ला काहे का है ?"

नाई—"मैं क्या जानूँ, कुछ होगा ?"

भूत—"जरा देख कर तो आओ कि क्या मामला है ?"

नाई ने कुछ सोचकर कहा—"अच्छा, तू कहता है तो देख आता हूँ।"

लौट कर नाई ने बताया कि वह बुढ़िया नाइन एक फौज लेकर भूत को पकड़ने आ रही है और साथ ही उसके पास एक बड़ी बोतल है, जिसमें वह भूत को कैद करेगी।

यह बात सुनकर भूत के तो होश गुम हो गए। वह सिर पर पाँव रखकर वहाँ से खिड़की के रास्ते भाग गया और फिर उसने लौट कर कभी उस राज्य की ओर मुँह भी नहीं किया।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारे प्राण-रक्षक 'फायर ब्रिगेड'

शान्ता रंजन

देश की रक्षा करने के लिए जिस प्रकार जल, थल और नभ सेनाएँ आवश्यक हैं ठीक उसी तरह देश की आन्तरिक आर्थिक हानि को कम करने के लिए 'फायर ब्रिगेड' अत्यन्त आवश्यक है। 'फायर ब्रिगेड' की कहानी जितनी मनोरंजक और वीरता से भरी है उतनी ही खतरनाक और कठिन है।

'जीवन देने के लिए है लेने के लिए नहीं,' इसी उद्देश्य को सामने रखते हुए फायर ब्रिगेड के सदस्य अपने प्राणों को खतरे में डाल कर धधकती आग को ललकारते हैं। एक तरफ सब कुछ खा जाने को तैयार आग होती है, और दूसरी ओर वीरता का पुजारी मानव, जो अपने प्राणों को दूसरों के लिए न्योछावर करने आता है।

दुर्भाग्यवश हमारे देश में प्रतिदिन कितने ही घर, दूकानें और मिलें आदि आग की भेंट हो जाती हैं। आग के लगते ही फायर ब्रिगेड के सदस्य चाहे कितना ही आवश्यक कार्य कर रहे हों, भोजन कर रहे हों, नहा रहे हों, सब को छोड़ कर भाग पड़ते हैं। समाचार मिलते ही इनके हाथ मशीन की तरह काम करने लगते हैं। 'टननटन' की घण्टी को बजाता हुआ फायर ब्रिगेड का इंजन शहरों और गलियों के पेट चीरता हुआ कुछ ही सेकेण्ड में आग लगने के स्थल पर पहुँच जाता है। खतरे की घण्टी की परिचित आवाज सुनकर जनता भी उसको जाने के लिए मार्ग दे देती है। घटनास्थल पर पहुँचते ही आग पर हमला बोल दिया जाता है। केवल अग्नि को ही काबू में करना नहीं बल्कि संकट में पड़े हुए पुरुष, स्त्री और बालकों को भी बचाना उनका काम होता है।

आग की लपटें जब ऊपर तक जा चुकी होती हैं तो ऐसे समय ऊपर के मनुष्यों को सीढ़ियों द्वारा आना कठिन ही नहीं असंभव होता है। ऐसे समय फायर ब्रिगेड के सदस्य सेफ्टी लाइन, जिसके द्वारा मनुष्य बगैर किसी खतरे के फिसल कर नीचे आ सकते हैं, प्रयोग में लाते हैं। कभी-कभी वह भी असम्भव हो जाता है तो 'फायर-जम्पिंग शीट' उपयोग में लाया जाता है। इसमें ऊपर से मनुष्य कूद जाता है। उसे किसी प्रकार की चोट भी नहीं आती और वह अपने प्राणों की रक्षा भी कर सकता है। आग में फायर ब्रिगेड के सदस्य 'स्मोक हेल्मेट' पहन कर आग में कूद पड़ते हैं और इस प्रकार घिरे हुए लोगों को बाहर लाने में सफल होते हैं।

एक ओर तो यह सदस्य प्राणों की रक्षा और मूल्यवान वस्तुओं को निकालने में लगे रहते हैं और दूसरी ओर उमड़ती हुई आग को वश में लाने के लिए 'ट्रेलर पम्प' की सहायता लेते हैं जिससे वह 'हाईड्रण्ट' या वाटर पोस्ट से पानी निकाल कर बड़े दबाव से प्रचण्ड अग्नि का कलेजा शीतल करते हैं। ऊँची-ऊँची मंजिल तक पानी को पहुँचाने के लिए मजबूत और लम्बी से लम्बी सीढ़ियों का प्रयोग होता है। यह सीढ़ियाँ हमेशा फायर इंजन के साथ होती हैं।

यदि हम किसी घटना-स्थल पर सदस्यों को काम करते देखें तो दाँतों तले उँगली दबाए बिना नहीं रह सकते। यह किसी भी युद्ध से कम नहीं होता। परन्तु आखिरकार विजय इन बहादुरों की ही होती है जो अपने प्राणों को भगवान् के भरोसे छोड़ आग से खेलने जाते हैं। यह सेवा का कार्य करते हुए कई सदस्य शहीद भी हो जाते हैं। कितना प्यारा, कितना महान् आदर्श है! स्वार्थ के लिए नहीं परमार्थ के लिए। अपने लिए नहीं दूसरों के लिए। वे काम करते-करते मर मिटते हैं। इनके हर कार्य में शिक्षा होती है। हर शिक्षित और अशिक्षित के लिए। देश सेवा के लिए हमें भी प्राणों की आहुति देनी है। तभी देश की उन्नति सम्भव है।

देश के इन रक्षकों को कुछ सुविधाएँ भी दी गई हैं। फायर मैनों को अन्य सरकारी नौकरी की अपेक्षा कम वर्षों के लिए कार्य करना पड़ता है। रिटायर हो जाने पर पेन्शन भी दी जाती है। उनके रहने के लिए मकान और वीरता दिखाने पर पदक और नकद इनाम भी दिया जाता है। सेवा काल में यदि किसी की मृत्यु हो जाए तो उसके आश्रितों को काफी आर्थिक सहायता दी जाती है।

आजकल तो इसकी उन्नति के लिए शिक्षा देने के केन्द्र और सलाहकार मण्डल भी बन गए हैं। इनकी सहायता से अच्छे से अच्छे और योग्य से योग्य कार्यकर्त्ता निकलते हैं। ये अधिक से अधिक हानि को कम करते हैं। इन 'फायर ब्रिगेड' की सहायता से पहले की अपेक्षा लगभग ६० प्रतिशत हानि कम हो गई है।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फरवरी, १९५६ में शहीद नगर (अमृतसर) में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का ६१वाँ अधिवेशन हुआ। बाईं ओर चित्र में शहोद नगर का प्रवेश द्वार है और नीचे कांग्रेस के सभापति श्री उछंगराय नवलशंकर ढेवर के स्वागत में जुलूस निकाला जा रहा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजघाट में

राष्ट्रपति के साथ

हवाई अड्डे पर शहंशाह और मल्का को बालिकाएँ पुष्प-गुच्छ दे रही हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

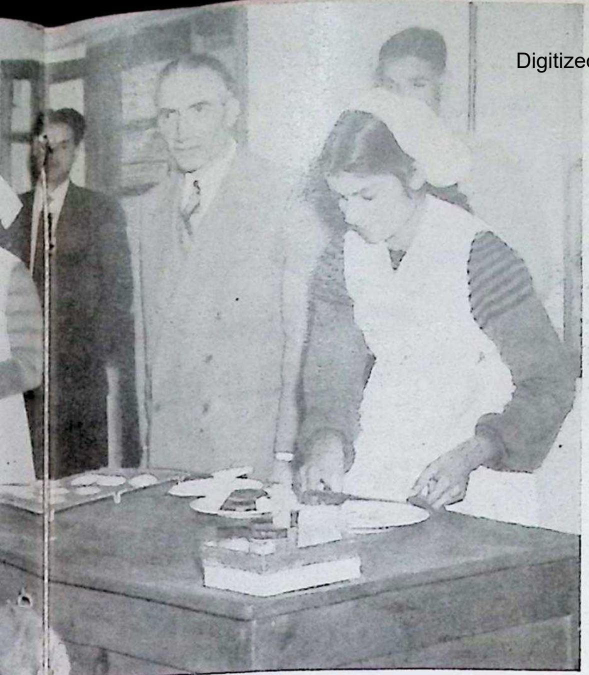

इर्विन कालेज, दिल्ली में

लाल क़िले में

ईरान के शहंशाह और मलका की भारत-यात्रा

नीचे दायें—जामिया मिलिया इस्लामिया, दिल्ली में

नीचे—प्रधान मन्त्री श्री नेहरू के साथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

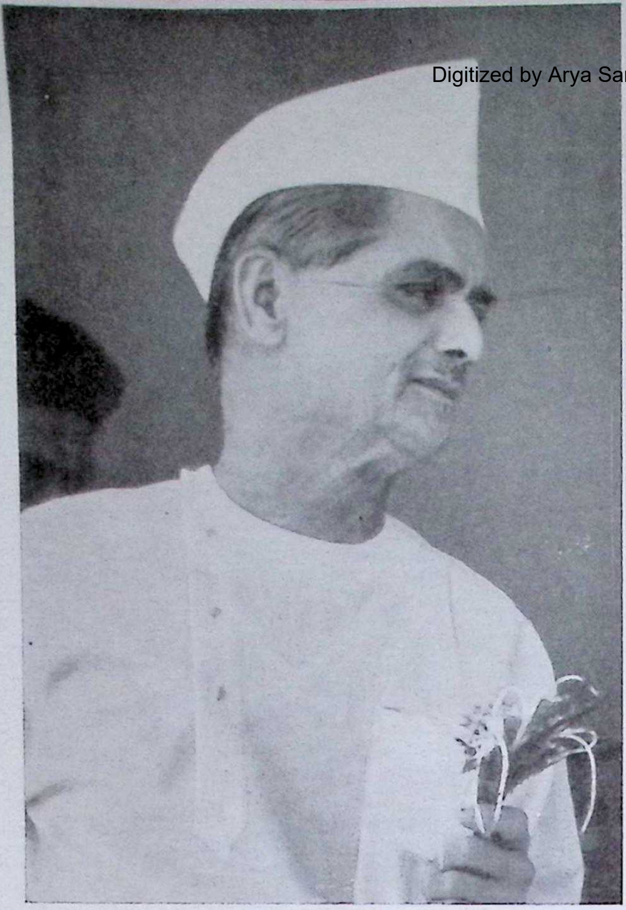

लोक-सभा के अध्यक्ष
गणेश वासुदेव मावलंकर

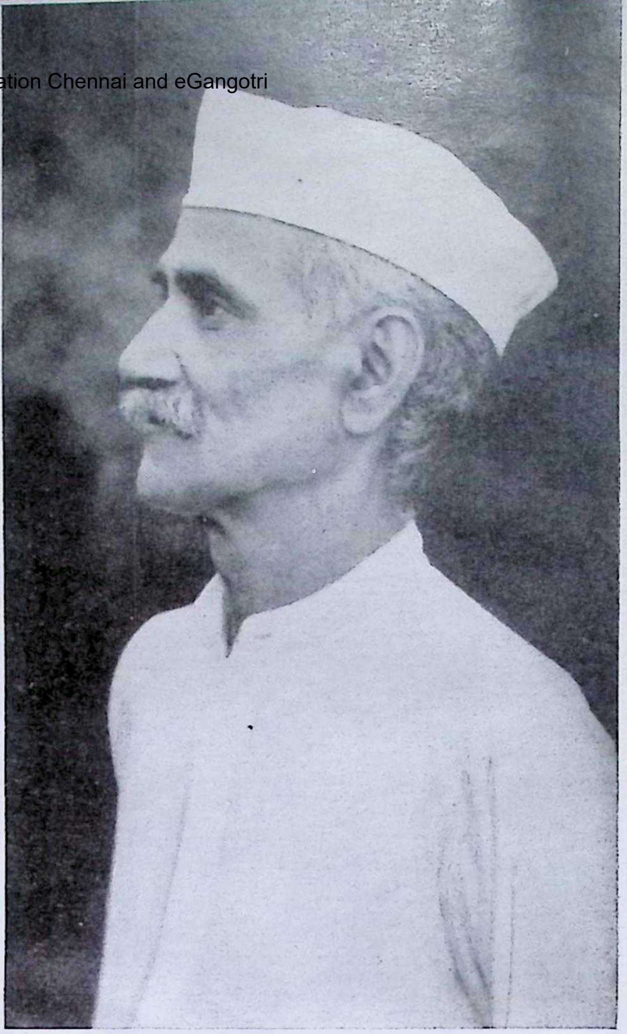

प्रकाण्ड विद्वान् एवं जन-
सेवक आचार्य नरेन्द्र देव

तीन महान् आत्माएँ जो अब नहीं रहीं
लेकिन जिनकी याद अमर रहेगी

विश्व-विख्यात वैज्ञानिक एवं
संसत्सदस्य डा० मेघनाद साहा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैज्ञानिकों के जीवन से

उदय कुमार यादव

सरल जीवन व्यतीत करने से और आनन्द में रहने से मनुष्य, मनुष्य नहीं बनता, कठिनाइयों और प्रयत्न से ही वह वास्तविक मनुष्य बनता है। एक कहावत है कि मनुष्य का दुर्भाग्य ही उसे स्वर्ग ले जानी वाली सीढ़ी है। आज विज्ञान का युग है इसलिए वैज्ञानिकों का सम्मान है। नीचे दी गई वैज्ञानिकों की जीवन घटना से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि संसार में हलचल उत्पन्न करने वाले व्यक्ति' योग्य पुरुष नहीं हुए हैं बल्कि ये वे लोग थे जिनमें दृढ़ता और अधिक परिश्रम करने की शक्ति थी।

गैलीलियो को भौतिक विज्ञान का जन्मदाता कहा जाता है। उसने दूरबीन और थर्मामीटर जैसे महत्त्वपूर्ण आविष्कार किए थे। उसके समकालीन वैज्ञानिक कोपरनीकस ने यह प्रचार किया कि पृथ्वी गोल है और वह अपनी धुरी पर घूमती हुई सूर्य की परिक्रमा करती है। कोपरनीकस के इस सिद्धान्त के समर्थनकर्त्ता होने के कारण गैलीलियो को रोमन धर्म द्वारा दो बार सजा भुगतनी पड़ी। सत्तर वर्ष के वृद्ध गैलीलियो को रोम में बुलाकर कैद कर लिया गया। यह तय किया गया कि उसे अपने कृत्य पर पश्चाताप करने के लिए विवश किया जाय। गैलीलियो को तीन दिन तक कोठरी में बन्द रखा गया और प्रत्येक प्रकार से कष्ट पहुँचाया गया। सत्तर वर्ष की वृद्धावस्था में गैलीलियो को धर्म के ठेकेदारों के सम्मुख घुटने टेक कर सर्व साधारण के समक्ष पृथ्वी के घूमने की बात को शपथ पूर्वक असत्य एवं घृणित कहने के लिए बाध्य होना पड़ा। जब वह उठा तो उसने एक धर्माचार्य के मंत्री को जिसे वह अपना मित्र समझता था, कान में कहा—"यह सब कुछ होते हुए भी पृथ्वी घूमती है।" गैलीलियो को उसके परिवार से अलग कर दिया गया और अन्धा होकर वह मर गया। सत्य की वेदी पर न्यौछावर हो जाने का कैसा श्रेष्ठ उदाहरण है!

कुछ वैज्ञानिकों का बाल्यकाल ऐसा भी व्यतीत हुआ है, जिससे उनके सुन्दरतम भावी जीवन के बारे में कुछ भी लक्षण दिखाई न देते थे। ऐसे वैज्ञानिकों में न्यूटन भी एक है। जब न्यूटन स्कूल में पढ़ता था, तब वह अपनी कक्षा का सब से मूर्ख और कमजोर विद्यार्थी था। जो लड़का न्यूटन से पढ़ाई में कुछ अच्छा था, उसने न्यूटन को पढ़ाई में पीछे धकेल दिया। इससे न्यूटन के हृदय में साहस उत्पन्न हो गया। उसने थोड़े परिश्रम के बाद उसे पढ़ाई में परास्त कर दिया। लगन और धैर्य के साथ कार्य करने से वह कुछ समय बाद अपनी कक्षा का सबसे अच्छा लड़का हो गया।

टेलीफोन, ग्रामोफोन और ट्रान्समीटर आदि महत्त्वपूर्ण आविष्कार करने वाले थामस अलवा एडीसन की गणना अमेरिका के प्रसिद्ध आविष्कारों में की जाती है। एडीसन गरीब माँ का एक गरीब बेटा था। वह अपने गाँव के रेल्वे स्टेशन पर और आस-पास अखबार तथा फल बेचकर अपना पेट पालता था। रेल्वे कर्मचारियों की कृपा से उसे स्टेशन के बीच बिना टिकट यात्रा करने की अनुमति मिल गई थी। वह कुछ पैसे बचाकर वैज्ञानिक खोजों के लिए सामान खरीद लेता था। जब गाड़ी रुक जाती थी तब वह अपना सामान बेचा करता था और जब गाड़ी चलती रहती थी तब वह गाड़ी में अपने प्रयोग किया करता था। एक दिन उसकी बोतल से फासफोरस का एक टुकड़ा रेल गाड़ी के फर्श पर गिर गया जिस से कि डिब्बे में आग लग गई। इस गलती के दण्डस्वरूप दूसरे स्टेशन पर एक गार्ड ने एडीसन के मुँह पर इतनी जोर से थप्पड़ मारा कि एडीसन सदैव के लिए बहरा हो गया। इस घटना से एडीसन को तनिक भी दुःख नहीं हुआ अपितु उसने चिल्लाकर कहा—"अब बाहर की दुनिया मेरे प्रयोगों में बिल्कुल बाधा न पहुँचायेगी।" कुछ समय पूर्व ही एडीसन का देहान्त हुआ है। अपने जीवन में वह करोड़पति हो गया था। इस बात से उसके आश्चर्यजनक मस्तिष्क का पता चलता है।

आर्कमीदिस सिरेक्यूज के राजा का मित्र था। वह एक धनाढ्य और विद्वान मनुष्य था। सिरेक्यूज के राजा ने मुकुट बनाने के लिए कुछ सोना एक सुनार को दिया। जब मुकुट बन कर आ गया तो एक व्यक्ति ने राजा से कहा कि सुनार ने मुकुट में सोने के साथ चाँदी मिला कर आपको धोखा दिया है। मुकुट में सोने-चाँदी का मिश्रण है अथवा नहीं, इस बात की परीक्षा करने का भारी कार्य सिरेक्यूज के राजा ने आर्कमीदिस को सौंपा। आर्कमीदिस को समस्या का हल सुलझाने का कोई भी तथ्य नहीं मिल रहा था। एक दिन आर्कमीदिस स्नान कर रहा था। वह अपने बराबर के एक बड़े भारी प्याले में पानी भर कर नहाया करता था। प्याला पानी से लबालब भरा हुआ था और जब आर्कमीदिस भीतर घुसने लगा तो पानी बाहर की ओर बहने लगा और जब वह पानी से बाहर निकला तो पानी प्याले में कुछ खाली हो गया। उसने अपने आयतन के बराबर पानी को निकाल दिया। यह देख आर्कमीदिस इतना प्रसन्न हुआ कि वह इस आवेश में बिना अपने शरीर को पोंछे और बिना कपड़े पहने यह चिल्लाता हुआ कि 'मैंने मालूम कर लिया', सिरेक्यूज की गलियों में दौड़ने लगा। आर्कमीदिस ने प्रमाणित कर दिया कि मुकुट में सोने-चाँदी का मिश्रण है। राजा ने आर्कमीदिस का आभार माना और सुनार को डाँट कर सोना प्राप्त कर लिया। इस वैज्ञानिक की इस घटना से यह पता लगता है कि वैज्ञानिक अपने कार्यों को इतने विश्वास, लगन और तन्मयता से करते हैं कि उन्हें अपने देह की भी सुध-बुध नहीं रहती।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसान बच गया

वेणीप्रसाद शर्मा

बहुत पुरानी बात है। एक किसान अनाज की गाड़ी भर कर शहर में गया। अनाज बेचने से उसे सौ रुपये मिले। उन सौ रुपयों को लेकर उसने बाजार में घूमना शुरू किया। उसने सुन रखा था कि इस शहर में ठग बहुत हैं। जब घूमते-घूमते उसे काफी देर हो गई और कोई ठग उसे न मिला तो चौक में खड़े होकर उसने कहना शुरू किया—देखो, मेरे पास ये सौ रुपये हैं। मैंने सुना था कि इस शहर में ठग बहुत हैं लेकिन मुझे अब तक कोई नहीं मिला।

यह बात एक स्त्री सुन रही थी। वह उसके पास आई और बोली—चौधरी साहब! आपके पास सौ रुपये तो हैं ही अगर मैं आपको सौ रुपये और दे दूँ तो कैसा रहे?

किसान बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने कहा—इससे अच्छी और क्या बात हो सकती है? लाओ सौ रुपये।

स्त्री—लेकिन चौधरी साहब, आपको एक बात करनी होगी।

किसान—क्या?

स्त्री—यहाँ के नाजिम के पास जाकर यह कहना होगा कि मैंने इस स्त्री को छोड़ दिया है। बस फिर मैं तुमको सौ रुपये दे दूँगी।

किसान—ओह! यह क्या बड़ी बात है। चलो मैं अभी जाकर कहे देता हूँ।

दोनों नाजिम की कचहरी में गये। किसान ने जैसा स्त्री ने समझाया था वैसा ही नाजिम के सामने जाकर कह दिया।

नाजिम ने पूछा—भई तुम इसे क्यों छोड़ रहे हो?

किसान—बस साहब! मेरी मर्जी, मैं छोड़ रहा हूँ।

नाजिम ने स्त्री से पूछा—तुम्हें कुछ कहना है?

स्त्री—जी सरकार! यह मुझे छोड़ तो रहा ही है, पर मेरे गुजारे के लिए तो कुछ दिलवा दीजिए। इसके पास सौ रुपये हैं। वही मुझे काफी हैं।

नाजिम ने हुक्म दिया कि जब तुम इस स्त्री को छोड़ रहे हो तो इसके गुजारे के लिए सौ रुपये दे दो।

किसान को लाचार सौ रुपये उस स्त्री को देने पड़े।

अब वह रोता हुआ कचहरी से बाहर आया। उसने सोचा, कहाँ तो सौ रुपये और मिलने वाले थे, कहाँ अपने सौ रुपये भी खो बैठा। उसको रोता हुआ देखकर एक दूसरी स्त्री ने उससे पूछा—क्यों क्या बात है? तुम क्यों रोते हो?

किसान ने अपना सारा किस्सा कह सुनाया।

उसकी रामकहानी सुन कर वह स्त्री बोली—देखो, नाजिम के पास जाकर कहो कि हुजूर, इसके तीन बेटे हैं। उनमें सबसे छोटा मुझे दिलवा दीजिए। यदि तुम ऐसा कहोगे तो यह तुम्हें अपना बेटा देने को कभी राजी न होगी बल्कि कुछ रुपये देकर तुम्हें प्रसन्न करना चाहेगी। यह इसी तरह लोगों को ठगती है।

किसान की समझ में यह बात आ गई। वह फौरन नाजिम के पास पहुँचा और उस ठगिनी को भी ले गया।

नाजिम के सामने जब उसने लड़के लेने की बात कही तो वह ठगिनी घबराई। उसने किसान से कहा—ऐसा मत कहो, रुपये वापस ले लो।

लेकिन किसान फिर भी न माना। इस पर ठगिनी ने उसे कहा—मैं दो सौ रुपये देने को तैयार हूँ।

किसान फिर भी न माना।

ठगिनी ने उसे बड़ी मुश्किल से पाँच सौ रुपये पर राजी किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसान पाँच सौ रुपये लेकर बड़ा प्रसन्न हुआ। अब तक शाम हो चुकी थी। वह सोचता हुआ जा रहा था कि रात को कहाँ ठहरे। इतने में ही एक मौलाना साहब ने उसे देखकर पुकारा—अरे भाई ! क्या देख रहे हो ? क्या चाहते हो ?

किसान बोला—मौलाना साहब, मैं रात भर ठहरना चाहता हूँ।

मौलाना—तुम्हारे पास कोई जोखिम की चीज तो नहीं है ?

किसान—मौलाना साहब, मेरे पास पाँच सौ रुपये हैं।

मौलाना—अच्छा तो, यह ताला और चाबी लो। इस अलमारी में रुपयों को सँभाल कर रख दो और अलमारी में ताला लगाकर ताली अपने पास होशियारी से रखो और मजे में इस सराय में सो जाओ।

किसान जब प्रातःकाल उठा तो उसने अलमारी खोली। लेकिन आश्चर्य से उसने देखा कि वहाँ रुपये न थे। वह चिल्लाया—हाय ! मेरे रुपये कौन ले गया ?

उसकी चिल्लाहट से और लोग भी आ गए। मौलाना साहब ने कहा—यह झूठ बोलता है। इसने अलमारी में रुपये रखे ही नहीं होंगे। अगर रुपये रखता तो कहाँ जाते। अलमारी में ताला लगा है और ताली उसके पास है।

बेचारा किसान रोता-धोता सराय से बाहर निकला। उसे फिर वही स्त्री मिली जिसने उसे पाँच सौ रुपये दिलवाये थे। किसान को उदास देखकर उस स्त्री ने फिर उससे पूछा—अब की बार क्या हुआ ?

किसान ने अपना सारा किस्सा कह सुनाया। स्त्री ने उसे कुछ समझाया और चली गई।

थोड़ी देर में वह बहुत से गहने पहन कर उसी मौलाना साहब के पास आई और कहने लगी—मौलाना साहब, मेरे पति कल सुबह की गाड़ी से आने वाले हैं। मैं आपकी सराय में रात भर ठहरना चाहती हूँ।

मौलाना साहब बोले—जरूर।

इतने में ही किसान वहाँ आया और उस स्त्री से कहने लगा—आप यहाँ न ठहरिए। यह मौलाना पक्का ठग है। मैं कल इसी सराय में ठहरा था और इसने मेरे पाँच सौ रुपये चुरा लिये।

मौलाना साहब ने सोचा यह किसान बड़े बेमौके आया। इस स्त्री के पास कई हजार के गहने हैं। अगर आज रात यह यहाँ ठहर जाए तो मुझे कई हजार के गहने हाथ लगेंगे। कोई ऐसी तरकीब करूँ जिससे इस स्त्री को मेरी ईमानदारी का विश्वास हो जाए। वह झट बोला—अरे भई किसान ! मैं तो तुम्हारे साथ मजाक कर रहा था, यह लो तुम्हारे पाँच सौ रुपये। हाँ बीबी जी, आप यहाँ ठहरिए, किसी किस्म का डर नहीं है।

जब किसान को पाँच सौ रुपये मिल गये तब उस स्त्री ने जरा बाहर की ओर झाँका और कहा—मौलाना साहब ! माफ कीजिए। मेरा पति आ गया है। मैं उसके साथ जा रही हूँ।

मौलाना साहब हाथ मलते रह गये।

★

नया युग

घनश्याम काश्यप

हमारा बदल रहा संसार !
बदल रही दुनिया के सँग-सँग खेतों की तस्वीर !
धरती की छाती, 'बुलडोजर' आज रहे हैं चीर !
अब न जुताई में बहती है सतत पसीना-धार,
खेत बनाने में अब लगते केवल दिन दो-चार !
करो फुरसत से ग्राम-सुधार !
हमारा बदल रहा संसार !

अब न चरर-चूँ रेंहट चलाओ, 'टिक टिक' हाँको बैल,
चक्कर खाओ, बढ़ो न आगे, चलो न ऐसी गैल !
अब तो पम्प फेंक सकता है पानी मूसल-धार,
एक खेत क्या चीज कि सींचों बीघे एक हजार !
बैठकर चरखा कातो यार !
हमारा बदल रहा संसार !

खेतों में बालें गदराईं, चले वसन्ती पौन !
फागुन आया; होली गाता-रंग न खेले कौन ?
हँसिए में क्या धार कि काटेगा गट्ठे दो-चार,
लो मशीन, अब काट लगाओ फसलों के अम्बार !
मनाओ मस्ती से त्यौहार !
हमारा बदल रहा संसार !

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जैसी करनी वैसी भरनी

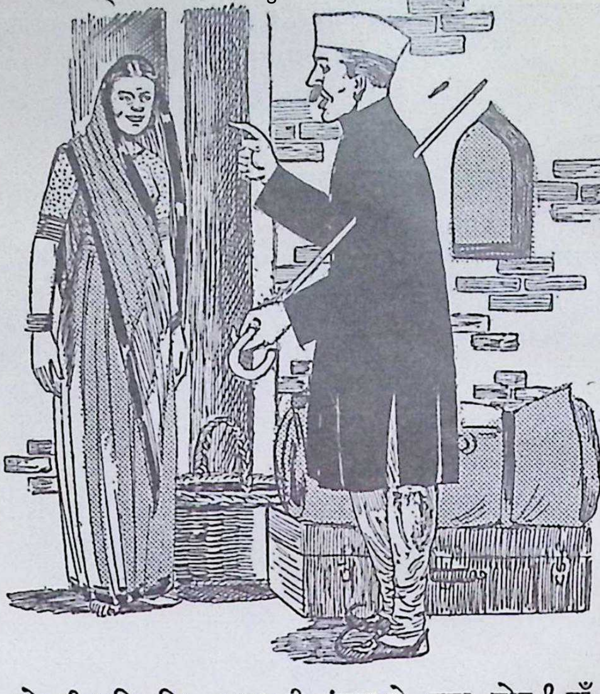

अनिल कुमार

बात कोई सौ वर्ष पुरानी है । सोनापुर नामक एक छोटी-सी नगरी के पासही एक गाँव था जहाँ कुल मिला कर पन्द्रह घर थे । वहाँ के निवासी खेती-बाड़ी करके अपना निर्वाह करते थे । परन्तु एक वर्ष ऐसा हुआ कि वहाँ वर्षा बिलकुल न हुई और उन लोगों का निर्वाह बहुत कठिन हो गया । लोग गाँव छोड़ कर शहर में जाने लगे । यदि शहरों में वह अपने बच्चों को साथ ले जाते तो कठिनाई होती । इसलिए उन्होंने अपने परिवारों को वहीं छोड़ दिया और स्वयं धन कमाने शहर की ओर चल पड़े ।

इन्हीं लोगों में एक रामलाल भी था । जब उसने देखा कि इस प्रकार तो भूखों मरना पड़ेगा, तो उसने भी सोनापुर नगरी में जाकर कुछ कमाने की सोची, और वह अपनी पत्नी के पास गया । उसने अपनी पत्नी से पूछा कि क्या वह बच्चों को लेकर वहाँ रह सकेगी ? पत्नी पहले ही बहुत से लोगों को बाहर जाते हुए देख चुकी थी । अतः उसने अपने पति की बात बिना आना-कानी किये मान ली और कहा, "मैं तो खुश हूँ कि तुम परदेश से कुछ कमा कर लाओगे । देखो तुम हमारी फिक्र मत करना, मैं बच्चों को अच्छी तरह देख-भाल लूँगी ।" रामलाल को असली बात कहने से कुछ डर-सा लग रहा था, परन्तु जब उसने अपनी पत्नी को प्रसन्नवदन देखा तो हिम्मत करके असली बात कह दी । वह बोला, "देखो यशोदा, अगर तुम मेरी माँ का भी अपने बच्चों की तरह ख्याल रखोगी तो परदेश में मुझे माँ की चिन्ता भी नहीं होगी । बोलो मेरी माँ को भी अपने पास अच्छी तरह रखोगी न ?"

यशोदा, जो उसकी माँ के नाम पर बहुत चिढ़ा करती थी, तुनक कर बोली, "तुम्हारी माँ से मुझे छुटकारा थोड़े ही मिल सकता है ? अस्सी वर्ष की बूढ़ी हो गई । अब भी पीछा नहीं छोड़ती । छिः-छिः इतना भी संसार से क्या मोह ? हाँ, अगर तुम्हें माँ से इतना ही प्रेम है तो मैं भी उसका पूरा-पूरा ध्यान रखूँगी । तुम किसी प्रकार की चिन्ता न करना ।"

रामलाल अपनी पत्नी यशोदा के स्वभाव से भली-भाँति परिचित था । वह माँ के साथ हमेशा कैसा व्यवहार करती आई है, यह वह खूब अच्छी तरह जानता था । परन्तु क्या करता ? मजबूरी थी । माँ को तो साथ नहीं ले जा सकता था । अतः दिल पर पत्थर रख कर उसे माँ को यशोदा के पास छोड़ना ही पड़ा । माँ को वह बहुत प्यार करता था और इस बुढ़ापे में अपनी माँ की बहुत सेवा करता था । रामलाल उसी दिन सोनापुर चला गया ।

अब यशोदा अकेली रह गई । उसे अपनी सास एक आँख न भाती थी । परन्तु पति का आदेश था कि उसे बच्चों की तरह रखना । उसका मन मलिन तो था ही, उसने मन ही मन एक तरकीब सोच निकाली और अपनी सास के साथ बच्चों जैसा व्यवहार करने लगी । जो खिलौने बच्चों को ले देती वही अपनी सास को भी । जब बच्चे गली में खेलने जाते तो सास को भी जबर-दस्ती भेज देती । गली में जो खाने-पीने की चीजें बिकने को आतीं, वह बच्चों के साथ सास को भी ले देती । सास बूढ़ी तो थी ही, उसकी सोचने-समझने की शक्ति भी बहुत कमजोर हो चुकी थी । इसीलिए उसे भी बच्चों की तरह रहने में कोई आपत्ति नहीं थी । बल्कि वह तो खुश थी । एक दिन एक नाई से उसने अपने बच्चों की हजामत बनवाई तो अपनी सास के भी बाल कटवा दिये ।

इसी प्रकार दिन बीतने लगे और उसका अपनी सास के साथ वैसा ही व्यवहार चलता रहा । एक दिन उसने अपने बच्चों को काठ के घोड़े खरीद कर दिये तो एक घोड़ा सास को भी ले दिया । फिर क्या था, सास खूब तालियाँ पीट-पीट कर नाचने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगी। जब शाम को बच्चे अपने-अपने घोड़ों पर चढ़ कर गली में खेलते तो वह भी अपने घोड़े पर चढ़ कर किलकारियाँ मारती हुई खेलती।

अड़ोस-पड़ोस के लोग यशोदा को ऐसा व्यवहार करते देखते तो उससे इसका कारण पूछते। यशोदा यही कह कर टाल देती कि बुढ़िया को एक बार फिर बच्चा बनने की धुन सवार हुई है। जब बच्चों को देख कर वैसा ही करने के लिये दिक करती है तो मैं क्या करूँ। बुढ़िया का लड़का तो यहाँ है नहीं जो इसे समझाए। यदि मैं इसे मना करूँ तो बेटे के आते ही मेरी शिकायत करेगी।

होते-करते इसी प्रकार छः महीने बीत गये और एक दिन रामलाल धन कमा कर नगर से घर लौटा। आते ही उसने यशोदा से बाल-बच्चों का हाल पूछा तो उसने कहा कि सब ठीक है और वे गली में खेल रहे हैं। फिर उसने अपनी माँ के बारे में पूछा। यशोदा ने कहा, "माँ बहुत प्रसन्न है। मैंने तो तुम्हारे पीछे उसका पूरा-पूरा ख्याल रखा है, जरा-सी भी कोई तकलीफ नहीं होने दी।" रामलाल पत्नी की बात सुन कर बहुत प्रसन्न हुआ। उसने यशोदा से पूछा, "माँ कहाँ है?" यशोदा ने कहा, "वह देखो बच्चों के साथ खेल रही है।" उसे पत्नी की बात सुन कर बहुत आश्चर्य हुआ और मकान से निकल कर आया तो क्या देखता है कि माँ का सिर मुँडा हुआ है और वह काठ के बने घोड़े पर सवार बच्चों के साथ खेल रही है और गली में खेलते हुए बच्चे उसकी माँ के पीछे-पीछे तालियाँ पीटते हुए हँस रहे हैं। जब उसने अपनी माँ को इस प्रकार की अवस्था में देखा तो क्रोध, दुख और शरम से उसकी आँखों में आँसू आ गए। अन्दर ही अन्दर उसने कुछ निश्चय किया और अपनी पत्नी से आकर कहा कि उसने तो वाकई माँ के साथ बड़ा अच्छा व्यवहार किया है।

यशोदा की इस दुष्टता का रामलाल इस प्रकार बदला चुकाना चाहता था जिससे जन्म भर वह अपनी दुष्टता पर पश्चाताप करे। वह हमेशा यही सोचने लगा कि किस प्रकार माँ के अपमान का बदला लूँ?

एकाएक उसने एक दिन एक तरकीब सोच निकाली और वह एक दिन बड़े सवेरे उठकर अपनी पत्नी को यह कह कर कि उसे कहीं काम से जाना है, घर से चल पड़ा।

रामलाल अपनी ससुराल, जो पास वाले गाँव में ही थी, गया और अपने सास, ससुर, साले, सालियों आदि को यह सन्देश दिया कि उनकी बेटी यशोदा के पेट में बहुत दर्द है और उसने अपने माँ-बाप और बहन भाइयों को आखिरी बार देखने की इच्छा प्रकट की है। सारे परिवार में रोना-धोना मच गया। यशोदा की माँ तो सिर धुन-धुन कर रोने लगी। रामलाल ने जब इतना रोना-धोना देखा तो मन में बड़ा प्रसन्न हुआ और अपनी सास के पास जाकर उसे धैर्य देने लगा। लेकिन उसकी सास तो और भी दहाड़ मार कर रोने लगी। रामलाल को अच्छा मौका मिला और उसने अपनी सास का हाथ पकड़ कर कहा, "मैंने एक ज्योतिषी से यशोदा के बचने का उपाय पूछा है। यशोदा बच तो सकती है परन्तु उपाय बहुत कठिन है। इसलिये मैं बता ही नहीं सकता।" माँ ने जब यह सुना तो एकदम चुप हो गई और अपने दामाद से कहने लगी, "उपाय कैसा भी कठिन क्यों न हो हम अपनी बेटी के लिये सब कुछ करने और सहने के लिये तैयार हैं।" रामलाल ने उपाय बताना शुरू किया—"माँ, ज्योतिषी ने बताया है कि अगर कन्या के माँ-बाप सिर मुँडवा कर अपनी बेटी के पास आयें तो बेटी अपने माँ-बाप के दर्शनों से ठीक हो जायेगी।"

सास ने यह सुन कर कहा, "बेटी के प्राण बचाने के लिये तो इससे भी बढ़ कर काम हम करने को तैयार हैं। यह कौन-सी बड़ी बात है? इसमें हमारा क्या बिगड़ेगा—बाल तो अपने सिर की खेती है। कटवा देंगे तो और आ जायेंगे।" उसने अपने जमाई से कहा, "तुम अपने गाँव चलो। हम अभी तुम्हारे पीछे-पीछे आते हैं। तुम जाकर हमारी बेटी की देख-भाल करना। बेचारी अकेली पड़ी छटपटा रही होगी।"

रामलाल ने जब अपनी बात को इतनी सुगमता से पूरी होते देखा तो मन ही मन बड़ा प्रसन्न हुआ और अपने गाँव लौट आया।

जब वह घर पहुँचा तो दोपहर हो चुकी थी। उसने खाना खाया और बड़ी व्यग्रता से अपने सास-ससुर का इन्तजार करने लगा। खिड़की पर खड़ा हुआ वह नीचे की ओर देख रहा था। ज्यों ही उसने दूर से अपने सास-ससुर को सिर मुँडाये आते देखा त्यों ही वह बोला "यशोदा, खिड़की में देखो तो कौन आ रहा है?" यशोदा ने खिड़की से झाँका तो उसके चेहरे पर हवाइयाँ उड़ने लगीं। उसे अपने माँ-बाप को इस अवस्था में देखकर कुछ आश्चर्य-सा हुआ और प्रश्न भरी दृष्टि से उसने अपने पति को देखा। पति के मुख पर उसने एक व्यंग भरी मुस्कान देखी और एका-एक उसे अपनी सास के साथ किये हुये व्यवहार की याद आ गई और उसका बदला इस तरह मिलते देख कर उसकी आँखों में पश्चाताप के आँसू भर आये। वह अपनी करनी पर बहुत दुःखी और शर्मिन्दा थी। इसलिये वह अपने पति के चरणों में गिर कर उससे अपने अपराध के लिये क्षमा माँगने लगी। रामलाल ने कहा, "जाकर मेरी माँ से भी माफी माँगो तभी मेरे हृदय को ठण्डक पहुँचेगी और मैं समझूँगा कि तुम्हें सच्चा पश्चाताप हुआ है।"

यशोदा भागी हुई अपनी सास के पास गई और उसके पाँवों पर गिर पड़ी। दोनों के दिल साफ़ हो गये और वे लोग परस्पर मिल कर प्यार से रहने लगे।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक मूर्ख और दो ठग

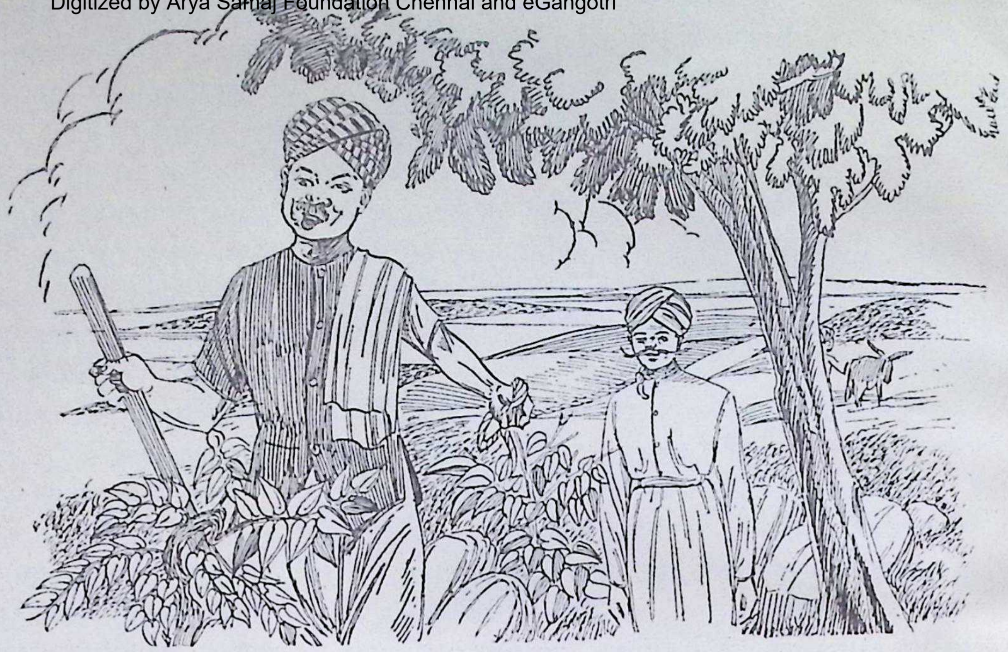

घनश्याम सेठी

एक मूर्ख अपने गधे की बाग पकड़े हुए जा रहा था कि दो ठगों ने उसे देख लिया। उनमें से एक अपने साथी से बोला, "मैं इस व्यक्ति से यह गधा हथिया लूँगा।"

"वह कैसे ?" उसके साथी ने पूछा।

"तुम मेरे पीछे-पीछे आओ।" यह कह कर वह गधे के पीछे-पीछे चलने लगा। थोड़ी दूर जाने के बाद जब ठग को यह विश्वास हो गया कि मूर्ख अपनी ही धुन में मस्त है तो आगे बढ़ कर उसने गधे की गर्दन से बाग खोल कर तुरन्त अपने गले में डाल ली और गधे को अपने साथी के हवाले कर के उसे भाग जाने का इशारा किया और स्वयं उस मूर्ख के पीछे-पीछे चलने लगा। जब उसने देखा कि उसका साथी गधे को लेकर काफी दूर निकल गया है तो वह खड़ा हो गया। मूर्ख ने बाग खैंची, पर वह जमकर खड़ा रहा। मूर्ख ने पीछे मुड़ कर देखा तो बाग को गधे के बदले एक मनुष्य के गले में पड़ा देखकर आश्चर्य चकित रह गया और बौखला कर बोला, "तुम कौन हो और मेरा गधा कहाँ गया ?"

ठग ने उत्तर दिया, "मैं ही तुम्हारा गधा हूँ।" और इसके पश्चात् कहने लगा, "एक रोज़ मैं भाँग के नशे में मदहोश जब घर पहुँचा तो मेरी माँ मुझ से कहने लगी—मेरे बच्चे ! बुरे कर्मों से तोबा कर और अच्छी राह पर चल—परन्तु मेरे मस्तिष्क पर तो भाँग का भूत चढ़ा हुआ था। मैंने लाठी लेकर उसे मारा। उसने मेरे लिए अमंगल कामना की और ईश्वर ने क्रुद्ध होकर मेरी सूरत बिगाड़ दी और मुझे गधा बनाकर तुम्हारे हाथों में डाल दिया। लगता है आज मेरी माँ ने मुझे याद किया है तभी ईश्वर ने मुझे क्षमा कर दिया है।

वह मूर्ख कहने लगा, "अरे भाई ! भूल से यदि मैंने तुम्हारे साथ कोई बुरा व्यवहार किया हो तो मुझे क्षमा करना। और फिर बाग खोल कर वह अपने रास्ते पर चला गया।

पश्चाताप में डूबा हुआ जब मूर्ख घर पहुँचा तो उसकी पत्नी ने पूछा, "तुम्हें किस चिन्ता ने परेशान कर दिया है, जो इतने दुःखी हो रहे हो ?"

मूर्ख ने सारी घटना अपनी पत्नी को भी सुना दी। सुनकर वह भी पश्चाताप करने लगी, "हाय ! हम पर ईश्वर की मार। इतनी देर तक हम एक मनुष्य से गधे का काम लेते रहे।"

मूर्ख ने काम पर जाना छोड़ दिया और पर्याप्त समय तक घर में ही पड़ा रहा। पत्नी ने कहा, "कब तक बेकार पड़े रहोगे ? बाजार जाओ और एक नया गधा खरीद कर अपना काम सम्भालो।"

वह बाजार गया और मंडी में खड़ा होकर गधों को देखने लगा। अपने गधे को भी वहाँ बँधा देख कर वह चौंका, पर कुछ सोचकर मुस्कराया और उसके निकट जाकर उसके कान में बोला, "हाय ! तेरा दुर्भाग्य ! लगता है तूने फिर भाँग पी और अपनी माता को पीटा। पर मैं तो तेरे जैसे दुराचारी को कभी अपने पास न रखूँगा।"

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वायुयान

कुमारी कृष्णा

भारत के प्राचीन इतिहास में विमान का नाम आता है। श्री रामचन्द्र जी रावण पर विजय प्राप्त करने के पश्चात् विमान में बैठ कर लंका से अयोध्या लौटे थे, ऐसी बात रामायण में पाई जाती है। इससे पता चलता है कि हमारे पूर्वजों ने वायुमण्डल पर विजय प्राप्त की थी और उस समय भी वायुयान बनते थे। इस बात का पता एक प्राचीन पुस्तक की पांडुलिपि से भी चलता है, ऐसी हाल ही में दक्षिण से घोषणा की गई है। ज़माना बदलता गया। भारत पर अनेकों आफतें आईं और अनेकों आक्रमण हुए जिनके साथ यहाँ के शास्त्रों तथा विद्या का भी बहुत हद तक लोप हुआ। विमान क्या था? किस प्रकार बनता था? इस बात का किसी को पता न रहा। परन्तु आधुनिक युग में पश्चिमी विद्वानों ने इस पहेली को हल कर दिया। वायुयान बनाने में जिन जिन कठिनाइयों का सामना किया गया उनकी कहानी यों है।

सबसे पहले पश्चिम में यह यत्न किया गया कि अगर पक्षियों के पंख लगा कर उड़ा जाय तो हो सकता है उसमें सफलता प्राप्त हो। बड़े-बड़े पंख एकत्र कर उनको जोड़ कर एक महान पंख बनाया गया। इस महान पंख को लगाकर ऊँची पहाड़ी पर चढ़ कर तथा उछल कर उड़ने का यत्न किया गया। इसका फल केवल नीचे गिरने और अपनी हड्डी पसली तुड़ाने के सिवाय और कुछ न हुआ।

इस पर भी मनुष्य ने हिम्मत न हारी। वह बराबर नित नई तरकीबें सोचता रहा। सन् १७८२ में फ्रांस के एक नगर में माउंट गाफर नामक दो भाइयों ने एक नई बात सोची। इन्होंने बादलों के ऊपर ही ऊपर जाने के सिद्धान्त को लेकर चमड़े का एक गुब्बारा बनाया और इसी से काम लिया। उन्होंने इस गुब्बारे को धुएँ से भर दिया और इसका मुँह दृढ़ता से बन्द कर दिया। तत्पश्चात् इसको हवा में छोड़ दिया। लो, यह तो वायु में ऊपर ही ऊपर जाने लगा। इस बात को देख माउंट गाफर बन्धुओं की खुशी की सीमा न रही और वह उसी स्थान पर झूम झूम कर नाचने लगे। उन्होंने इस तजरबे को कई बार दोहराया और आम जनता में इसका प्रदर्शन किया। जंगल की आग की तरह इस बात की खबर सारे यूरोप में फैल गई। वैज्ञानिकों की आशा इससे बढ़ गई और वे यह कहने लगे कि एक न एक दिन वायुमण्डल में मनुष्य का उड़ना अवश्य ही संभव हो जाएगा।

इसके बाद संसार के सबसे पहले वायु-यात्री बनने का श्रेय एक बत्तख, एक भेड़ तथा एक मुर्गी को प्राप्त हुआ। इन पहले यात्रियों की उड़ान को फ्रांस के सम्राट तथा सम्राज्ञी ने १६ सितम्बर १७८३ के दिन देखा। माउंट गाफर बन्धुओं ने इन तीनों विचित्र यात्रियों को एक पिंजड़े में बन्द करके एक गुब्बारे से बांध दिया। आठ मिनट तक उड़ने के बाद तीनों यात्री अच्छी तरह फिर से ज़मीन पर उतरे। माउंट गाफर बन्धुओं का प्रसन्न होना तो स्वाभाविक था ही पर लोगों की खुशी का भी वारापार न रहा।

इसके एक मास के अन्दर ही अन्दर पहले मनुष्य ने उड़ान करने का साहस किया। इनका नाम रोज़ियर (Rozier) था और यह फ्रांस का रहने वाला था। उसने गाफर बन्धुओं के गुब्बारे में एक विशेष परिवर्तन किया। गाफर बन्धुओं का गुब्बारा वायुमण्डल में शीत के कारण ठण्डा होकर आठ दस मिनट के बाद ही नीचे आ जाता था। रोज़ियर ने इस बात की रोकथाम के लिये आग साथ रखने का प्रबन्ध किया, जिससे साथ ही साथ नया धुआँ बन कर गुब्बारे में भरता जाता था और वह घंटों तक वायुमण्डल में उड़ता रहता था।

कुछ समय पश्चात् गुब्बारों में हाईड्रोजन गैस भरा जाने लगा। इस तरह के बने हुए गुब्बारे आजकल आम तौर पर बाज़ार में विकते हैं और आप दीवाली आदि अवसरों पर बच्चों को मोल लेकर देते हैं। फ्रांस के इस नये आविष्कार को देख कर इंग्लैण्ड में भी गुब्बारों द्वारा उड़ने का अभ्यास होने लगा। दो मनचले आदमियों ने इंग्लैण्ड की खाड़ी को, जो कैले (फ्रांस) से डोवर (इंग्लैण्ड) तक केवल २२ मील चौड़ी है, उड़ कर पार करने का निश्चय किया। जनवरी १७८५ ई० में ये दोनों व्यक्ति गुब्बारे में सवार होकर डोवर से चले। पहले तो गुब्बारा ऊपर ही ऊपर उड़ कर फ्रांस के तट की ओर बढ़ने लगा, परन्तु अभी आधी खाड़ी ही पार हो चुकी थी कि यह नीचे आने लगा। अतः इन उड़ाकुओं ने एक दम से अपना अनावश्यक सामान समुद्र में फेंक दिया। वे अब फिर ऊपर को जाने लगे। अभी तट से कुछ दूरी पर ही थे कि गुब्बारा फिर नीचे आने लगा। नीचे समुद्र को देख कर ये दोनों डर गए और उन्होंने अपनी सारी पोशाक यहाँ तक कि बूट भी उतार कर नीचे समुद्र में फेंक दिए। अन्त में वे सही सलामत तट पर उतर ही गए। ये दोनों जाड़े के मारे ठिठुर रहे थे। इन दोनों वीरों को फ्रांस तथा ब्रिटेन दोनों देशों की सरकारों ने सम्मान तथा पारितोषिक प्रदान किया।

कई एक प्रयत्नों के पश्चात गुब्बारे के साथ एक छोटा सा कमरा बाँध कर उसमें आठ या दस आदमी और कुछ सामान रख कर उड़ने में सफलता प्राप्त हुई। परन्तु इसमें एक त्रुटि यह थी कि वायु की दिशा और वायु की गति पर ही इसकी उड़ान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्भर थी। हवा जहाँ चाहती वहाँ उड़ा कर ले जाती। अब मनुष्य इस सोच में लगा रहा कि किस प्रकार इसे अपनी इच्छा के अधीन कर दिया जाए। इसके लिए एक कंट्रोल या अंकुश की आवश्यकता थी। सो अब इस बात का विचार होने लगा कि इसके साथ किसी तरह का पैडेल अथवा हैंडल जोड़ दिया जाए। इसके लिए अनथक प्रयत्न होने लगा। कई तरह के भाप से चलने वाले इंजनों का प्रयोग होने लगा। पर सब भारी होने के कारण लाभप्रद न हुए। अन्त में गैसोलीन मोटर (Gasoline motor) ने इस कठिनाई को हल कर दिया।

जर्मनी के कांउट जेपलिन ने एक लम्बा गुब्बारा तैयार किया। यह अलुम्यूनियम का बना हुआ था। इसमें गैसोलीन इंजन लगा हुआ था और यह दस मिनट में साढ़े तीन मील उड़ा। इसी गुब्बारे से एयरशिप की बनावट में उन्नति हुई। इसी ढांचे, गुब्बारे और इंजन में परिवर्तन होते गये और सुधार होता रहा। आधुनिक वायुयान का पूर्व रूप अमेरिका के राइट बन्धुओं ने निर्माण करके सबसे पहले १६०३ में उसे उड़ाया था। १६०६ ई० में ड्यूमां (Dumout) ने पतंग की आकृति का वायुयान बनाया। इसमें भी गैसोलीन इंजन लगा हुआ था। इसके पश्चात वायुयान बनाने के कार्य में दिन प्रति दिन उन्नति ही होती गई। नये-नये मॉडल तथा तेज़ से तेज़ इंजन तैयार होते गये। १६१० में ब्रिटेन के डाक विभाग ने यानचालकों का एक इनामी मुकाबला किया, और मांचेस्टर से लन्दन तक की हवाई दौड़ में प्रथम आने के लिए श्री पालहन (Paulhine) को ५ हज़ार शिलिंग का पारितोषिक मिला।

१६१४ का प्रथम महायुद्ध शुरू हुआ। इस युद्ध ने वायुयान को और भी महत्त्व दिया। युद्ध में आक्रमण की पहल, रसद ले जाने की सुविधा और प्रतिरक्षा के लिए इसका प्रयोग सिद्ध हो गया। अतः धीरे-धीरे हर एक देश में एक हवाई फौज की शुरुआत हो गई।

भारत में १६११ ई० में सब से पहला वायुयान उड़ा था। यह वायुयान विलायत की ब्रिस्टल हवाई कंपनी ने भारत की हवाई सेना के आफिसरों को उड़ने की शिक्षा देने के लिए तैयार किया था। इसी वायुयान को यह गौरव प्राप्त है कि इसने जगत में सर्वप्रथम डाक ले जाने का काम किया। इसने इलाहाबाद से नैनी तक सरकारी डाक पहुँचाई थी। इसके बाद विशेष उन्नति हुई जबकि १६१८ ई० में मिश्र देश से भारत तक की प्रथम उड़ान सफल रही। इसी के दो मास बाद लंदन से भारत तक की पहली हवाई यात्रा आरम्भ हुई। बाद में आस्ट्रेलिया तथा और देशों तक भी हवाई यात्राओं का श्री गणेश हुआ। १६२० तक हवाई डाक का भी प्रबन्ध हो गया और १६२७ में साधारण लोगों के लिए भी हवाई यात्रा का प्रबन्ध हो गया। सब से पहले ब्रिटेन से भारत तक की हवाई सेवा शुरू हुई। इसके पश्चात करांची (जो उस समय भारत का अंग था) से कोलम्बो (श्री लंका) तथा करांची से लाहौर तक की हवाई सेवा का सूत्रपात हुआ। इसके चार वर्ष पश्चात करांची, दिल्ली, इलाहाबाद और कलकत्ता में चार हवाई अड्डे बनाये गये।

दूसरे महायुद्ध में भारत में सैकड़ों छोटे बड़े बहुत से हवाई अड्डे तैयार हुए जिनमें से केवल ६५ को चालू रखा गया। अब भारत के स्वतंत्र होने के बाद २१ नये अड्डे बनाने की योजना है, जिनमें से कुछ तैयार भी हो गये हैं। कुछ समय पहले तक भारत में २३ हवाई कम्पनियां काम करती थीं, पर अब इनका राष्ट्रीयकरण करके इंडियन एयरवेज़ कारपोरेशन बनाया गया है। भारत के बड़े-बड़े शहरों के बीच आजकल हवाई सेवा का अच्छा प्रबन्ध है और हमारी अधिकतर डाक भी हवाई जहाज से एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाई जाती है। उस पर एक भी पैसा अधिक नहीं लगता।

युद्धकाल में अमेरिका, रूस, ब्रिटेन तथा जर्मनी ने नये-नये वायुयान बनाये। जर्मनी ने स्वचालित राकेट बना कर मनुष्य को अचम्भे में डाल दिया। ये स्वचालित राकेट बिना किसी चालक के जाकर ब्रिटेन के शहरों पर बम वर्षा करके जर्मनी लौटते थे। अमेरिका ने सुपर फोर्ट्रेस नामक चार इंजनों वाले विनाशकारी बम-मार वायुयान बनाए जो जहां बम फेंकते वहां आफत ले आते थे। इसके साथ ही ऐसे वायुयान भी बने जो समुद्र में भी उतर सकते हैं, इनको फ्लाइंग बोट्स यानी उड़न किश्तियों का नाम दिया गया है। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि द्वितीय महायुद्ध काल में वायुयान ने अत्यन्त उन्नति की।

अब युद्धोत्तर काल में इसकी गति को और भी तीव्र करने के यत्न किये जा रहे हैं और जेट नामक वायुयान तैयार किया जा चुका है। जेट वायुयान बहुत तेज है और तूफ़ानी गति से उड़ता है। इसके बनाने का सिद्धान्त प्राइमस चूल्हे से लिया गया है। हमारे भारत वर्ष में स्वतन्त्रता से पहले किसी तरह का वायुयान नहीं बनता था परन्तु अब सरकार ने बंगलौर में इसका कारखाना खोला है। यहां एच० टी० नामक वायुयान तैयार होकर बहुत अच्छा सिद्ध हुआ और इसके लिए बाहर के देशों से भी आर्डर आये हैं। आशा है कि हमारा देश जल्दी ही वायुयान बनाने के क्षेत्र में अपना योग्य स्थान प्राप्त करेगा।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शेर, मछली और आदमी

विजय चौहान

एक दिन एक नदी के किनारे एक शेर और एक मछली आपस में बातें कर रहे थे। कुछ दूर खड़ा एक आदमी उनकी बातें सुन रहा था।

ज्यों ही मछली ने आदमी को देखा, वह पानी में ग़ायब हो गई।

अगले दिन शेर ने मछली से पूछा, "तुम पानी में क्यों चलीं गईं थीं?"

"मुझे एक आदमी दिखाई दिया था।"

"फिर क्या हुआ?"

"आदमी बड़ा चालाक होता है।"

शेर ने कहा, "तुम व्यर्थ ही में आदमी से डरती हो। मैं देखना चाहता हूँ आदमी कैसा होता है। मैं उसे फौरन चट कर जाऊँगा।"

शेर आदमी की तलाश में घूमने लगा। एक दिन उसे एक बच्चा दिखाई दिया। शेर ने उससे पूछा, "क्या तुम आदमी हो?"

"नहीं, मुझे आदमी बनने में बहुत साल लगेंगे। मैं अभी बच्चा हूँ।"

यह सुनकर शेर आगे चला गया, जहाँ उसे एक बूढ़ा दिखाई दिया। शेर ने बूढ़े से पूछा, "क्या तुम आदमी हो?"

"शेर मियाँ, किसी जमाने में मैं आदमी जरूर था पर अब मैं आदमी कहाँ हूँ?"

यह सुन शेर मन मसोस कर रह गया। उसने मन ही मन कहा, 'कैसी विचित्र बात है! सारे संसार में मुझे एक भी आदमी नहीं दिखाई दिया।'

सामने से एक सिपाही आ रहा था। उसके कंधे पर एक बन्दूक और हाथ में एक तलवार थी।

शेर ने सिपाही से पूछा, "क्या तुम आदमी हो?"

"हाँ मैं आदमी हूँ।"

"तो मरने के लिए तैयार हो जाओ। मैं तुम्हें खाने के लिए आया हूँ।"

सिपाही ने कहा, "तनिक ठहरो, मैं स्वयं ही तुम्हारे मुँह में आने के लिए तैयार हूँ। तुम अपना मुँह खोलो।"

ज्योंही शेर ने अपना मुँह खोला त्योंही सिपाही ने उसके मुँह में गोली दाग़ दी और तलवार से उसके दोनों कान काट लिए। शेर वहाँ से भागा।

कुछ दिन बाद शेर फिर नदी के किनारे गया। मछली ने पानी में से सर निकाल कर पूछा, "क्या किसी आदमी से तुम्हारी भेंट हुई?"

"हाँ, आदमी सचमुच बड़ा चालाक जीव है। मुझे बड़ी मुश्किल से एक आदमी मिला, लेकिन उसने मेरे दोनों कान काट लिए और मेरी जीभ अब भी जल रही है।"

"क्या मैंने तुम्हें पहले से चेतावनी नहीं दी थी?" मछली ने मुस्करा कर कहा।

—अलेक्सी ताल्सताय की एक कहानी के आधार पर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

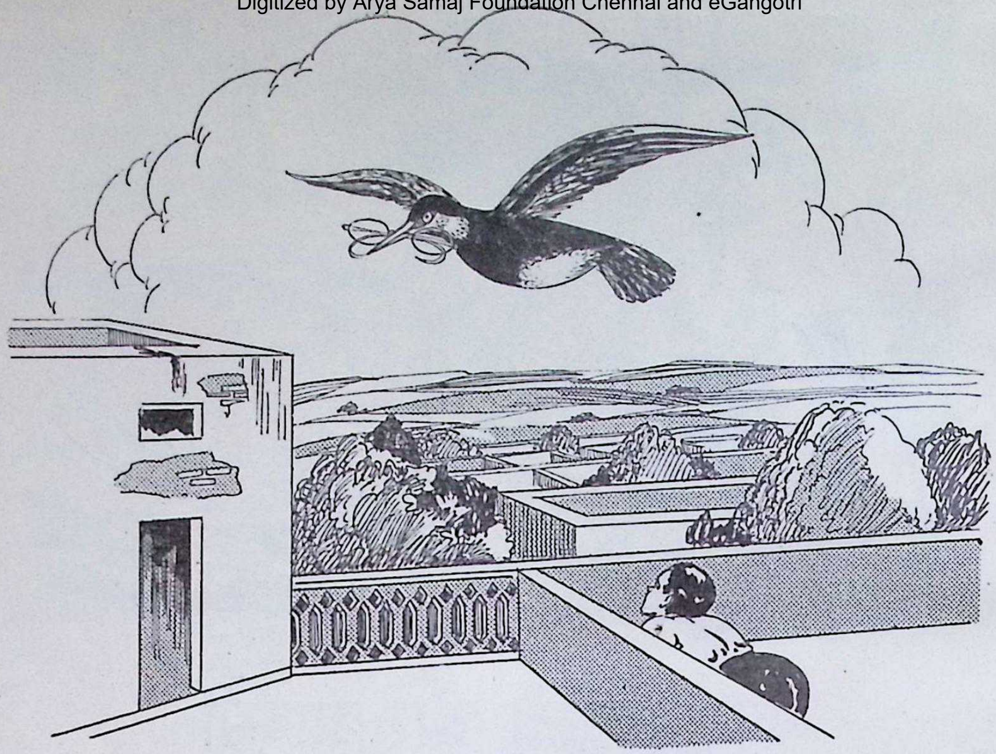

रूसी बाल-कथा

चोर मैना

इन्दुलेखा

किसी नगर में एक भाई-बहिन अपनी दादी के साथ रहते थे। उन्होंने एक मैना पाल रखी थी। दोनों ही उसको बहुत प्यार करते थे, हाथ पर बैठाकर उसको चुगा खिलाते और उसकी पीठ सहलाया करते। मैना थी भी बड़ी सलोनी! तरह-तरह के खेल दिखाया करती थी। कभी-कभी दूर आकाश में उड़ कर चली जाती और फिर वापिस लौट आती।

एक दिन की बात है कि बहिन नहाने बैठी। उसने हाथ से अँगूठी उतारकर तख्ते पर रख दी और साबुन से हाथ-मुँह धोने लगी। नहाने के बाद जब वह अँगूठी उठाने के लिए मुड़ी तो देखा अँगूठी नदारद! उसने सोचा शायद भाई ने चिढ़ाने के लिए चुपचाप अँगूठी वहाँ से उठा ली है। इसलिए वह उससे बोली—

"तूने मेरी अँगूठी किस लिए उठाई है? तंग मत कर। सीधी तरह वापिस दे दे!"

"कैसी अँगूठी! मैंने तो कुछ नहीं उठाया", भाई ने जवाब दिया। मगर बहिन को विश्वास नहीं हुआ। वह भाई के साथ झगड़ने लगी और रोने लगी। रोने की आवाज दादी के कानों में पहुँची। वह बोलीं—"रो मत, जरा मुझे मेरा चश्मा दे। आले पर रखा है। मैं अभी वह अँगूठी ढूँढ़ देती हूँ।"

दोनों भाई-बहिन ऐनक उठाने दौड़े मगर देखा तो आले पर से ऐनक भी गायब है। अब तो दादी बड़ी घबराई और रोकर कहने लगीं—"कहाँ गई मेरी ऐनक? मैंने तो इसको आले पर ही रखा था। हाय राम! अब मैं ऐनक के बिना सूई में धागा कैसे पिरोऊँगी?"

दादी ने भी यही समझा कि लड़के ने ऐनक उठाई है। वह बिगड़ कर उससे बोली—"यह तेरा काम है! शैतान लड़के! क्यों अपनी बूढ़ी दादी को तंग करता है?" बहिन और दादी की फटकार से लड़के को बड़ा दुःख हुआ। वह चुपचाप घर से निकल गया। अचानक क्या देखता है कि छत के ऊपर उनकी मैना उड़ रही है और उसकी चोंच में कोई चमकीली चीज दबी हुई है। "अरे! कहीं यह दादी की ऐनक तो नहीं!" लड़के ने सोचा। वह एक पेड़ पर छिप कर बैठ गया और देखने लगा। मैना धीरे से छत पर उतरी। चारों तरफ निगाह उठा कर देखा और जब कोई दिखाई नहीं पड़ा तो चुपके से ऐनक चोंच से निकालकर छत की एक दरार में छिपा कर रख दी।

लड़का पेड़ से उतर कर घर चला आया। दादी ने फिर पूछा—"बोल, कहाँ है मेरी ऐनक?" "छत पर," लड़के ने जवाब दिया। सुनकर दादी को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने समझा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लड़का हँसी कर रहा है । लेकिन वह देखते-देखते छत पर चढ़ गया और दरार में से दादी की ऐनक बाहर खींच ली। वहीं से अँगूठी भी मिल गई । इसके सिवाय कितने ही रुपये पैसे भी वहाँ से निकले ।

दादी अपनी ऐनक और बहिन अपनी अँगूठी पाकर बहुत खुश हुई । बहिन-भाई के पास जाकर बोली—"तुम मुझे माफ कर दो ! मैंने तो कभी सोचा भी नहीं था कि यह मैना चोर है ।"

भाई-बहिन का फिर मेल हो गया । तब उनकी दादी ने बताया—सभी मैना चोर होती हैं जो कोई चमकीली चीज देखती हैं, चुराकर ले जाती हैं ।

★

बाल-समाचार

बाल-चित्र प्रदर्शनी

२४ से २७ दिसम्बर तक दिल्ली म्युनिसिपल कमेटी के दरबार हाल में चित्र-कला-संगम की ओर से एक बालचित्र-कला प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। बाल कलाकारों की तस्वीरों में अधिकांश शहर से सम्बन्धित चित्र होते हुए भी ग्राम जीवन की ओर अधिक झुकाव था। पनघट, लहलहाते खेत, बाग, दूध पीते बछड़े, खेतों में उछल-कूद करते हुए हिरन और झोंपड़ियों के चित्र बच्चों ने अधिक बनाये। इसमें ५०० बाल कलाकारों की ६०० कृतियों का प्रदर्शन किया गया। संगम ने बच्चों को प्रोत्साहन देने के लिए बहुत से पुरस्कार और प्रमाणपत्र दिये।

बाल-संकीर्त्तन

भारत सरकार के सूचना और प्रसार मन्त्री डा० केसकर ने २१ जनवरी को इलाहाबाद में ६वीं बाल संकीर्त्तन प्रतियोगिता का उद्घाटन किया। यह कार्यक्रम ऑल इण्डिया रेडियो से भी प्रसारित किया गया।

बालचर-भवन

भारत बालचर और बालिकाचर संस्था के राष्ट्रीय आयुक्त डा० हृदयनाथ कुँजरू ने १३ फरवरी को उत्तर प्रदेशीय शाखा के प्रधान कार्यालय के भवन की आधारशिला रखी जिस पर लगभग ६०,००० रुपये खर्चे का अनुमान है।

बाल-पुस्तकालय

भारत में रूस के राजदूत श्री एम० मेन्शिकोव ने आगरे के जैन कालिज में एक बाल पुस्तकालय का उद्घाटन किया। राजदूत ने बताया कि रूस में बाल साहित्य के प्रकाशन की ओर बहुत ध्यान दिया जाता है। प्रति वर्ष बच्चों से सम्बन्धित साहित्य की १० करोड़ पुस्तकें छपती हैं। बहुत-सी भारतीय पुस्तकों का अनुवाद भी रूसी भाषा में हो रहा है। उन्होंने शुभकामनाएँ प्रकट कीं कि बच्चों का यह पुस्तकालय भी अपने उद्देश्य में सफल हो।

बाल-यात्रा

दिल्ली स्थित कस्तूरबा निकेतन और नवहिन्द हाई स्कूल के ५०० से ऊपर बच्चे बम्बई गए। इस दौरे के दो उद्देश्य थे। प्रथम यह कि बम्बई के बच्चे राष्ट्रीय अनुशासन की इस विशेष ट्रेनिंग से लाभ उठाएँ और दूसरे दिल्ली के बच्चे अपना दृष्टिकोण विशाल बना सकें। प्रदर्शनों को वहाँ बहुत पसन्द किया गया। २३ जनवरी को केन्द्रीय मैदान में राष्ट्रीय अनुशासन योजना का प्रदर्शन हुआ जिसका सभापतित्व पश्चिम बंगाल के राज्यपाल श्री एच० सी० मुखर्जी ने किया।

बाल-व्यायाम-प्रदर्शन

मेरठ नगरपालिका की समस्त पाठशालाओं के विद्यार्थियों के व्यायाम प्रदर्शन का एक आयोजन ६ जनवरी को मेरठ टाउन हॉल में हुआ। उत्तर प्रदेश स्वायट शासन विभाग के उपमन्त्री श्री कैलाश प्रकाश ने अपनी शुभकामनाएँ प्रकट कीं। विद्यार्थियों ने संगीत, नृत्य आदि का सांस्कृतिक कार्यक्रम भी प्रस्तुत किया।

बालक कर्मयोगी बनें

डा० काटजू ने ४ फरवरी को ग्वालियर विक्टोरिया कालेज में छात्र-छात्राओं की सभा मे भाषण दिया। उन्होंने कहा कि भारत के छात्र-छात्राओं को संस्कृत का अध्ययन अवश्य करना चाहिए। उन्होंने छात्रों से सेना में भरती होने की भी अपील की। उन्होंने कहा कि राष्ट्रपिता महात्मा गान्धी के समान उन्हें भी कर्मयोग से प्रेरणा ग्रहण करनी चाहिए।

बालक और भूदान

२४ जनवरी को श्री जयप्रकाश नारायण ने नई दिल्ली में विद्यार्थियों की एक सभा में भाषण देते हुए कहा कि विद्यार्थियों को भूदान कोष में अपने जेब खर्च में से रुपये में कम से कम एक पैसा देना चाहिए। उन्होंने ३ जनवरी को मदुराई के विद्यार्थियों से भी अपील की कि वे भूदान आन्दोलन में वही उत्साह दिखाएँ जो उन्होंने राजनीतिक स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए दिखाया था। उन्होंने यह भी कहा कि वह अपने में परीक्षा व प्रयोग की भावना पैदा करें जो समाज की प्रगति के लिए आवश्यक है, नहीं तो वह उद्देश्यहीन होकर लकड़ी के उस तख्ते के समान हो जाएँगे जिसे समुद्र की लहरों के थपेड़े इधर से उधर फेंकते रहते हैं।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बुद्ध-शिक्षा

अतुलानन्द चक्रवर्ती

अब तक तुमने आर्यों के जीवन के बारे में कुछ सुना। जब तुम और हम सभी उस जीवन को श्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं तो निश्चित है कि महात्मा बुद्ध उसे और भी अधिक महान समझते थे। परन्तु तब भी उन्होंने मनुष्य जाति के लिए एक नया रास्ता दिखाया। वह वेदों के विरोधी नहीं थे—किसी का बुरा भी नहीं सोचते थे। क्रोध और घृणा से बहुत दूर थे, और शान्ति के उपासक थे। वेदों का वह सम्मान करते थे। परन्तु शताब्दियों से चला आता हुआ वैदिक जीवन नयी परिस्थितियों के अनुकूल अपने को नहीं ढाल सका था। जीवन में जब आडम्बर बढ़ जाते हैं तब वह गलत मार्ग पर जाने लगता है। यही सनातन नियम है और बुद्ध इससे पूर्णतः परिचित थे।

जीवन के बारे में दो बातें ध्यान देने योग्य हैं। प्रथम, मनुष्य-निर्मित होने के कारण वह सदा अपूर्ण रहता है। दूसरे, समय के साथ उसमें दोष बढ़ते जाते हैं और अच्छाइयाँ लुप्त होती जाती हैं। तुमने 'यज्ञ' शब्द सुना होगा। यह शब्द तो इतना प्रचलित है कि घर में रहने वाली तुम्हारी छोटी बहनें भी इसके बारे में जानती होंगी। यज्ञ की बात करते ही जो चित्र तुम्हारे सामने आता है वह है कुछ मन्त्रों का उच्चारण, जलती हुई अग्नि और आहुति पर पड़ता हुआ घी। परन्तु यह साधारण गृहस्थों के यज्ञ हैं। बड़े-बड़े यज्ञों में पशु-बलि भी दी जाती है। गौतम बुद्ध के समय में विष्णु और शिव-पूजा प्रचलित नहीं हुई थी, केवल वैदिक देवता ही पूजे जाते थे। राजा और दूसरे अमीर बड़े-बड़े यज्ञ करके पशु-बलियाँ दिया करते थे। वैदिक यज्ञ का मूल तत्व पशु-बलि नहीं, बल्कि आत्म-बलिदान था। ऋग्वेद में स्पष्ट है कि पुरुष ने आत्म-बलिदान अर्थात् यज्ञ करके सृष्टि की रचना की।

बाद में यही यज्ञ पशु-बलिदान में परिवर्तित हो गये। परन्तु वास्तविकता तो यह था कि देवता स्वयं इस यज्ञ से उत्पन्न होते थे। संभवतः तुम्हें यह बात कुछ स्पष्ट हो सके यदि तुम कुछ क्रियात्मक कार्य जैसे वृक्ष रोपना, निबन्ध लिखना, आवश्यकता पड़ने पर दूसरों की सहायता करना, परीक्षा के लिए रात-दिन पढ़ना आदि पर विचार करो। यह सब करते हुए तुम एक प्रकार का बलिदान ही तो करते हो। यही तुम्हारा दैनिक यज्ञ है। अपने सुख की चिन्ता न कर यह परिश्रम तुम इसीलिए तो करते हो जिससे भविष्य में उसका लाभ मिले। अपने भविष्य का निर्माण कष्ट सह कर ही तो किया जाता है।

सगुण भगवान में आस्था होने से यज्ञ की यह भावना लुप्त हो गई। उपनिषदों के वनवासी ऋषियों को उसका आभास हुआ और उन्होंने यज्ञों की पूर्व भावना वापिस लाने का यत्न किया क्योंकि वे निराकार के उपासक थे। पशु-बलि की चमक-दमक में उनकी यह सद्भावनाएँ भी खो गई। गौतम बुद्ध ने वैदिक यज्ञों की तीव्र आलोचना की। पशु-हत्या से देवताओं को प्रसन्न कर यह सोचना कि वह राजा को विजयी बनाएँगे और प्रतिद्वन्द्वी का नाश करेंगे, बड़ा अनुचित कार्य था। यह यज्ञ का गलत अर्थ करना था और इस प्रकार अपने लोभ की वेदी पर दूसरों का बलिदान करना था। जो दूसरों को पीड़ित करे वह धर्म नहीं अधर्म है। धर्म का सच्चा अर्थ तो शान्ति प्रदान करना है। इसके लिए मनुष्य को अपने स्वार्थों की तिलांजलि देनी होगी। महात्मा बुद्ध इसी को निर्वाण-प्राप्ति कहते थे। मनुष्य का उद्देश्य दुखों को पराजित कर प्रसन्नता पाना है। यज्ञों के द्वारा यह सम्भव नहीं था, उसके लिए किसी नवीन राह की आवश्यकता थी। यही पंचशील-सद्व्यवहार-नैतिकता का मार्ग था। यह नवीन मार्ग इच्छाओं के दमन का है, इच्छाओं के लिए दमन का नहीं। फलस्वरूप उन्होंने एक अष्टांग-मार्ग बताया जिसके मूल मन्त्र थे—सत्य-विचार, सद्-व्यवहार, दूसरों की सेवा करना आदि।

महात्मा बुद्ध का कहना था कि आत्मा स्वतन्त्र है परन्तु मनुष्य सर्वत्र दुख के बन्धन में बँधा हुआ है। उस समय न तो राज-नीतिक स्वतन्त्रता और न धन का अनुचित बँटवारा लोगों की चिन्ता का विषय थे। परन्तु दुख से मुक्त होने की इच्छा तो अनन्त काल से चली आ रही है।

मैं अब वह घटना सुना रहा हूँ जिसने राजकुमार सिद्धार्थ का मन इस समस्या के प्रति जागृत कर दिया।

बुद्ध होने के पूर्व गौतम अन्य किसी भी राजकुमार के समान प्रसन्न-वदन रहा करते थे।

एक दिन प्रातःकाल जब वह घूमने जा रहे थे, उन्होंने चिन्ता और आयु से जर्जर एक वृद्ध को देखा। उन्होंने अपने सेवक छन्दक से इसका कारण पूछा। "यही जीवन का क्रम है। प्रत्येक मनुष्य इसी प्रकार एक दिन वृद्ध हो जाएगा," छन्दक ने कहा। उनके हँसमुख जीवन पर निराशा का एक बादल-सा छा गया। दूसरे दिन उन्होंने मार्ग में एक रोगी को देखा। छन्दक ने उत्तर दिया—"जीवन का यही नियम है। प्रत्येक प्राणी कभी न कभी रोग का शिकार बन सकता है।" बादल और भी घना हो गया। एक दिन सिद्धार्थ ने किसी मृत व्यक्ति की अर्थी जाते हुए देखी। यह पता लगने पर कि सबको एक दिन इसी प्रकार मरना होगा, उनका रहा-सहा सुख भी छिन गया। यदि जीवन में दुख और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कष्ट अवश्यम्भावी हैं तो मनुष्य को उनसे मुक्त करने का यत्न करना चाहिए। शारीरिक कष्टों के होते हुए भी मानसिक शान्ति किस प्रकार प्राप्त की जाए? एक दिन एक भिक्षु से भेंट होने पर उसने उन्हें गृह-त्याग कर एकान्त में शान्ति प्राप्त करने का परामर्श दिया।

क्षण-क्षण पर बढ़ती हुई चिन्ता के कारण राजकुमार ने संसार-त्याग का निश्चय किया। जैसे ही वह घर पहुँचे, उन्हें पुत्र-जन्म का शुभ संवाद मिला। "मुझे बाँध रखने का यह एक नया और कोमल बन्धन है," उन्होंने सोचा और गृह-त्याग के लिए शीघ्रता करने लगे। सारा नगर जन्मोत्सव मना रहा था, परन्तु राजकुमार उदासीन थे। उन्होंने रात को महल से भाग जाने का निश्चय किया। रात हुई और उन्होंने अपनी प्रिय पत्नी तथा पुत्र पर अन्तिम दृष्टि डाली। वे गम्भीर निद्रा में निमग्न थे। जाने से पहले एक बार नवजात शिशु को प्यार करने की इच्छा हुई, परन्तु इस डर से कि पत्नी जाग कर कहीं उन्हें रोक न ले, उन्होंने उस इच्छा को दबा दिया। एक निश्वास लेकर—इतनी धीरे कि वे स्वयं भी न सुन सकें—वह द्वार की ओर बढ़ गये जहाँ छन्दक अश्व सहित उनकी प्रतीक्षा कर रहा था।

वह इतनी तेजी से गये कि प्रातःकाल होने के पूर्व ही राज्य-सीमा को पार कर गये। यहाँ उन्होंने तलवार से अपने सुन्दर केश काट कर छन्दक को दे दिए। कुछ आगे बढ़ कर अपने बनारसी वस्त्र उतार कर भिक्षु वेश धारण कर भिखारी बन गये। उनके पाँचों अनुयायी साथ हो लिए। उन्होंने एक साथ तपस्या और व्रत आरम्भ कर दिए। बहुत दिन तक तपस्या करने पर भी कोई फल नहीं हुआ। सांसारिक दुखों को इस प्रकार जीतने के प्रति गौतम संदिग्ध हो उठे। अतः इस तपस्या को छोड़ कर सुजाता की दी हुई एक कटोरा खीर खाकर अपना व्रत तोड़ा। व्रत-भंग देख कर अनुयायियों ने उनको अयोग्य समझ कर त्याग दिया।

गौतम ने अब दूसरी दिशा में प्रयास किया। वह अकेले ही उस स्थान पर गये जहाँ प्राचीन बोधि-वृक्ष था। उन्होंने उसके नीचे बैठ कर गम्भीर चिन्तन किया। चिन्तन-शक्ति में उनका पूर्ण विश्वास था। अन्त में उन्हें स्पष्ट रूप से समझ में आ गया कि यदि मनुष्य को दुख से छुटकारा पाना है तो उसे अपने लिए जीवित न रह कर दूसरों के लिए जीवित रहना होगा। उनमें ज्ञान का प्रकाश जगमगा रहा था।

इस प्रकार ज्ञान के प्रकाश से आलोकित होकर वह बोधिसत्व हुए। इसके बाद उन्होंने सांसारिक प्राणियों को सुख का रहस्य बताने का निश्चय किया। बनारस जाकर उन्होंने अपने पाँचों साथियों को खोज निकाला। गौतम के मुख का तेज और गम्भीर वाणी को सुन कर वे पाँचों एक बार फिर उनके अनुयायी हो गये। इन पाँचों शिष्यों को पहले उपदेश में उन्होंने दुख से छुटकारा पाने का सन्देश दिया। उनका कहना था—जन्म लेना दुख है। मृत्यु दुख है। रोग दुख है और जो कुछ मनुष्य की कामना है वह भी दुख है।

प्राणिमात्र के दुख से बुद्ध दुखी थे। वह दुख-मुक्ति का उपाय बनाना चाहते थे। यहाँ तुमको एक बात और बता दूँ कि यह 'बुद्ध' शब्द भी क्राइस्ट की भाँति एक उपाधि है, नाम नहीं। परन्तु वह स्वयं अपने आपको 'बुद्ध' कभी नहीं कहते थे।

बुद्ध का कहना था कि मनुष्य को शान्ति के द्वारा क्रोध को जीतना चाहिए। क्रोध का न होना यथेष्ट नहीं है, बल्कि क्रोध पर जय पाना ही सब कुछ है। शत्रु को क्षमा करना सरल है परन्तु उससे प्रेम करना कठिन है। बुद्ध अपने उपदेश में दृढ़ थे। वह कहते थे कि जिस प्रकार माँ अपने इकलौते पुत्र को प्यार करती है उसी प्रकार तुमको अपने शत्रु से प्यार करना चाहिए। वह चाहते थे कि हम सम्पूर्ण मानव-जाति को प्यार करें। वह दिन भी शीघ्र आया जब विश्व के कोने-कोने से लोगों ने आकर 'बुद्धं शरणं गच्छामि' कह कर इस धर्म की शरण ली।

बुद्ध ने न किसी सिद्धान्त का प्रतिपादन किया और न किसी देवता का प्रतिष्ठा-स्थापन किया। उन्होंने तो केवल सत्-जीवन का मार्ग दिखाया। वह चाहते थे कि मनुष्य स्वयं उस मार्ग को खोजे न कि दूसरों के बताए ढंग पर आँख मूँद कर चले। वह कहा करते थे कि "अपने ऊपर विश्वास रखो। अच्छाई के लिए स्वयं प्रयत्न करो और मेरी बातों का अन्धानुकरण मत करो।"

महात्मा बुद्ध की शिक्षा थी कि "किसी भी बात को इसलिए मत मानों कि वह हमारी पुस्तकों में लिखी है, या इसलिये कि वह स्वीकार्य है और न इसलिए कि वह तुम्हारे गुरु का उपदेश है।" आप और हम भूल गये हैं कि स्वतन्त्र चिन्तन हमारा परम्परागत गुण है। हम सोचते हैं कि यह आधुनिक यूरोप का विशेषाधिकार है और हम उसका अनुकरण करते हैं। दुर्दिनों की चपेट में आकर हम परवश हो गये थे और आज हम यूरोप के ऋणी हैं कि उसने हमें हमारा खोया हुआ मार्ग सुझाकर विचार और तर्क करने की ओर प्रेरित किया।

बुद्ध अपने विचारों को कहानी के माध्यम से बताया करते थे। यहाँ मैं तुमको उनकी एक कहानी सुनाऊँगा। मैं तुम्हें बताना चाहता हूँ कि किस प्रकार उनके शिष्यों ने उन्हें चेतावनी दी। उनका लक्ष्य क्या था और उसको उन्होंने पूरा कैसे किया और इसीलिए इस कहानी को कुछ विस्तार से सुनाऊँगा। उनके योग्य शिष्य मालुंक्यपत को अनेक प्रकार के सन्देह थे। उसका विचार था कि तथागत उसके प्रश्नों को टाल देते हैं। इसलिए उसने दृढ़ निश्चय किया कि वह उनसे अपने प्रश्नों के साफ-साफ उत्तर मांगेगा, अन्यथा उनका साथ छोड़ देगा। उसके प्रश्न थे—विश्व का कभी अंत होगा अथवा वह सनातन है? ईश्वर वास्तव में है अथवा वह अस्तित्वहीन है? तथागत अमर हैं या मरण-शील हैं? इत्यादि।

अब मैं उससे आगे की कहानी सुनाऊँगा—

अनुवादिका—गार्गी गुप्ता

(शेषांश आगामी अंक में)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम बाल-भारती पढ़ते हैं

नीलम पारीक

हम जगती के नन्हें बालक
कहलायेंगे कल के पालक
हम बालक दिन-दिन बढ़ते हैं—
हम बाल-भारती पढ़ते हैं।
आशा का दीप जलायेंगे
नित नूतन ज्ञान बढ़ायेंगे
पढ़ विद्या जीवन गढ़ते हैं
हम बाल-भारती पढ़ते हैं।

★

बाल-भारती

अमरेन्द्र कुमार सिन्हा

हम नन्हें-मुन्नों की सुन्दर आई बाल-भारती।
इसमें कविता के फूलों की नई महक हम पाते,
इसमें रोचक कहानियों की नई झलक हम पाते।
नये कुतूहल भरे विश्व के समाचार हम पढ़ते,
देश-विदेशों के खम्भों पर नया भवन हम गढ़ते॥
माँ सरस्वती, वरदानों को लेकर हम पर वारती,
हम नन्हें-मुन्नों की सुन्दर आई बाल-भारती।

जैसे ही डाकिया इसे ला हमको देता घर पर,
मच जाती खलबली दौड़ते दीदी, भैया सत्वर।
छीना-झपटी, हल्ला-गुल्ला घर-भर में मच जाता,
सबसे पहले पढ़ने को मैं उतावला हो जाता॥
मेरे मन की लौ जगमग कर जल उठती बन आरती;
हम नन्हें-मुन्नों की सुन्दर आई बाल-भारती।

इस प्रकाश में निज भविष्य का मैं उज्ज्वल पथ पाऊँ,
दिव्य भारती की वीणा की झंकृति में खो जाऊँ।
मेरा मन-मस्तिष्क नहा कर फिर ताजा हो जाये,
और देश का दीपक बनकर जीवन-ज्योति जगाये॥
यही सन्देशा देने वीणा-पाणिनि हमें पुकारती,
हम नन्हें-मुन्नों की सुन्दर आई बाल-भारती।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्र सा रि का

अमेरिका में हर दूसरे आदमी के पास रेडियो होता है। यूरोप में हर छठे व्यक्ति के पास रेडियो है, जबकि एशिया में हर पचासीवाँ व्यक्ति ही रेडियो रखता है। परन्तु भारत में हर दो ऐसे व्यक्तियों पर जिनके पास रेडियो है, नौ सौ अट्ठानवे ऐसे हैं जिनके पास रेडियो नहीं है। अगर आपके पास रेडियो नहीं है और जब तक आप इस कमी को दूर नहीं कर सकते, रेडियो से हिन्दी में प्रसारित होने वाली स्थायी महत्त्व की चीज़ें आप 'प्रसारिका' से प्राप्त कीजिए।

'प्रसारिका' साहित्य, कला, इतिहास, यात्रा, दर्शन, धर्म, विज्ञान, मनोविज्ञान आदि विषयों पर देश भर के प्रख्यात व्यक्तियों के चुने हुए भाषणों का संग्रह है। उच्च कोटि की बौद्धिक सामग्री के अलावा इस संग्रह में कहानी, कविता, नाटक, हास्य-रस के लेख आदि भी होते हैं। ऐसी उत्कृष्ट सामग्री सभी को सुलभ करने के लिए इस सचित्र, लगभग सौ पृष्ठ की पत्रिका का मूल्य केवल आठ आने रखा गया है।

नोट—प्रसारिका के पहले दो अंक 'रेडियो संग्रह' नाम से प्रकाशित हुए हैं।

प ब्लि के श न्स डि वी ज़ न

ओल्ड सेक्रेटेरियट, दिल्ली–८

हिन्दी साहित्य की नवीन धारायें

हिन्दी के प्राचीन साहित्य पर बहुत सी पुस्तकें हैं। पर हिन्दी के नवीन साहित्य पर आलोचना ग्रन्थ नहीं के बराबर हैं। इस कमी को दूर करने के लिये हिन्दी के चार मूर्द्धन्य लेखकों के इससे सम्बन्धित चार वक्तव्य पुस्तकाकार में प्रकाशित किये गये हैं। सर्वश्री विष्णु प्रभाकर, डा० नगेन्द्र, पण्डित उदयशंकर भट्ट और श्री रामचन्द्र तिवारी ने क्रमशः हिन्दी कहानी, हिन्दी कविता, हिन्दी नाटक और हिन्दी उपन्यास पर अपने वक्तव्य दिए हैं। इसमें सन्देह नहीं कि यह पुस्तक हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में बहुत उपयोगी सिद्ध होगी।

मूल्य केवल ६ आना, डाक व्यय २ आना।

पुस्तक सब पुस्तक-विक्रेताओं के यहाँ मिल सकती है

अथवा

पब्लिकेशन्स डिवीज़न,

ओल्ड सेक्रेटेरियट, दिल्ली–८ को लिखें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्कृष्ट प्रकाशन

महात्मा गान्धी

महात्मा गान्धी की कहानी—चित्रों में

यह चित्रमय कहानी काल क्रम अनुसार है और महात्मा गान्धी के अलौकिक जीवन के महत्त्वपूर्ण अध्यायों में बंटी हुई है। यह आशा की जाती है कि इस समय तक उनके जीवन तथा कार्य-कलाप के सम्बन्ध में जो प्रचुर सामग्री एकत्र हुई है यह प्रकाशन उसका उपयुक्त चित्रमय पूरक प्रमाणित होगा।

सादा जिल्द १०) रु०
सिल्क जिल्द १५) रु०

स्वाधीनता और उसके बाद—
जवाहरलाल नेहरू के भाषण

प्रधान मंत्री नेहरू के १९४६ से १९४९ तक विशेष अवसरों पर दिए गए ६० महत्त्वपूर्ण भाषण। स्वाधीनता, महात्मा गांधी, साम्प्रदायिकता, काश्मीर, हैदराबाद, शिक्षा, उद्योग, भारत की वैदेशिक नीति, भारत और राष्ट्र मण्डल, भारत और विश्व, आदि विषयों पर। सभी दृष्टियों से संग्रहणीय और पठनीय ग्रन्थ। रु० ५)

भारत दर्शन
(चित्रों में)

भारत की कहानी दिग्दर्शित करने वाले विविध चित्रों का अनमोल संग्रह है। देश के निवासी, पशु, वनस्पति, प्राकृतिक रचना, आदि का विहंगावलोकन। भारतीय जीवन विचारधारा, परिस्थिति, प्राकृतिक दृश्य इत्यादि, विभिन्न पहलुओं का स्थलानुरूप समावेश। रु० ७॥)

भारतीय कला का सिंहावलोकन

मोहिन्जोदरो के समय से लेकर भारत के प्राचीन मध्ययुगीन तथा आधुनिक कला के ३७ रंगीन और १०० एक रंगी चित्रों का संग्रह। रु० ६॥)

भारत की एकता का निर्माण

अगस्त, १९४७ से दिसम्बर १९५० तक भारत के इतिहास के तेजस्वी काल में दिए गए सरदार वल्लभ भाई पटेल के २७ महत्त्वपूर्ण भाषण जो स्वतन्त्र भारत के निर्माण का यथार्थ प्रमाण हैं कई दुर्लभ चित्रों सहित। रु० ५)

पब्लिकेशन्स डिवीज़न,

ओल्ड सेक्रेटेरिएट, दिल्ली-८

Published by the Director, Publications Division, and printed by the Production Officer, United Press, Government of India, Old Secretariat, Delhi.

Regd. No. D—508

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Compiled
1999-2000

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar